धर्मवर्द्धन ग्रन्थावली

सम्पादक

अगरचन्द नाहटा

प्रकाशक

सादूल राजस्थानी रिसर्च-इन्स्टीट्यूट

बीकानेर ।

राजस्थान भारती प्रकाशन नं०

धर्मवर्द्धन ग्रन्थावली

सम्पादक :—

अगरचंद नाहटा

प्रकाशक :—

सादूल राजस्थानी रिसर्च इन्स्टीट्यूट

बीकानेर

प्रथम संस्करण | संवत् २०१७ | मूल्य ५)

सेठ ब्रादर्स

७० - बी०, धर्मतल्ला स्ट्रीट

(कलकत्ता)

जिनसे सदा सहयोग व साहित्यक्षेत्र
में आगे बढ़ने की प्रेरणा
मिलती रही उन्हीं सौजन्य-
मूर्त्ति, विद्यामहोदधि,
राजस्थानो साहित्य
के महान्
सेवक

श्री नरोत्तमदासजी स्वामी

के
कर कमलों
में
सादर समर्पित

—अगरचंद नाहटा
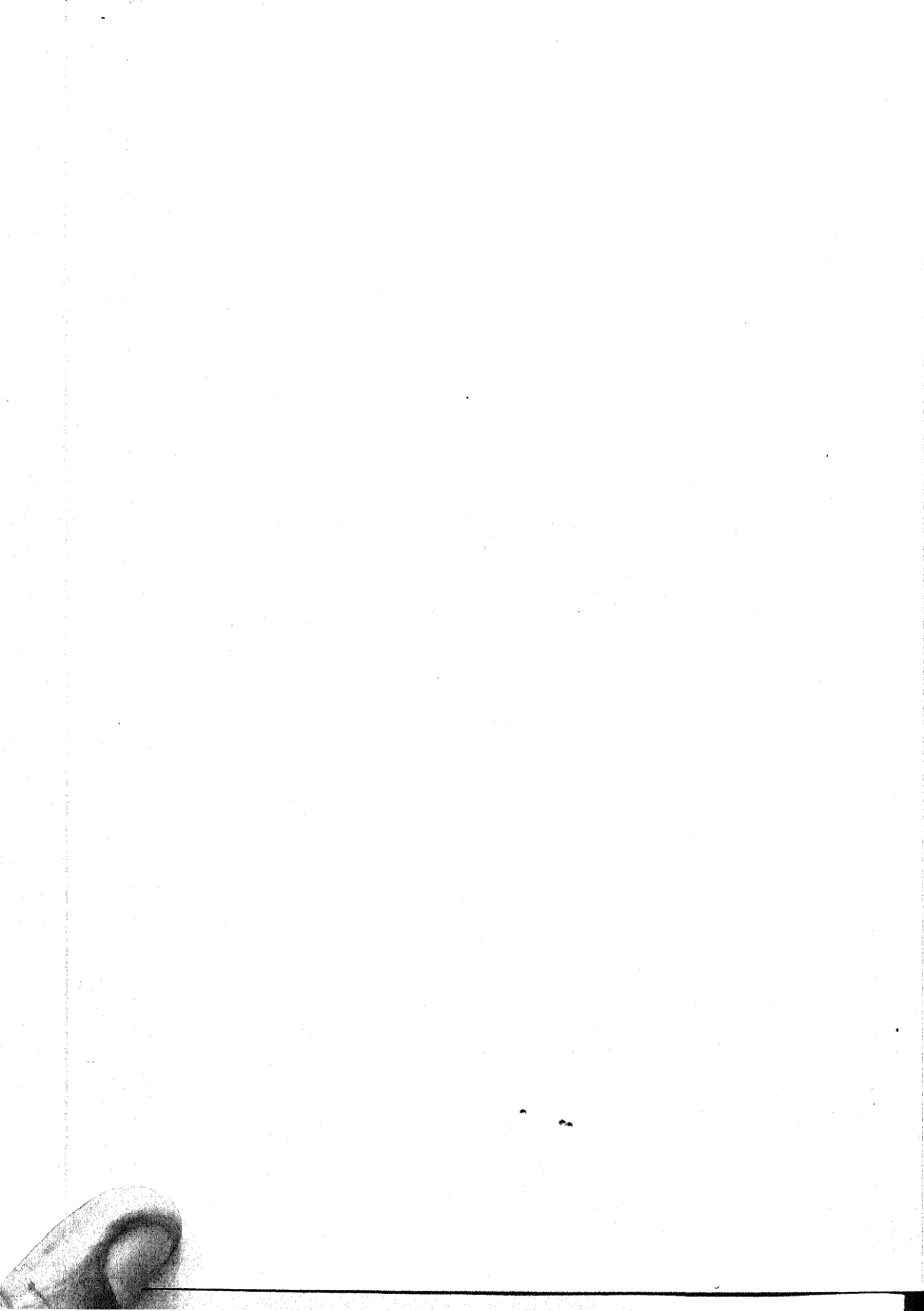
प्रकाशकीय

श्री सादूल राजस्थानी रिसर्च-इन्स्टीट्यूट बीकानेर की स्थापना सन् १९४४ में बीकानेर राज्य के तत्कालीन प्रधान मंत्री श्री के० एम० पणिक्कर महोदय की प्रेरणा से, साहित्यानुरागी बीकानेर-नरेश स्वर्गीय महाराजा श्री सादूलसिंहजी बहादुर द्वारा संस्कृत, हिन्दी एवं विशेषतः राजस्थानी साहित्य की सेवा तथा राजस्थानी भाषा के सर्वाङ्गीण विकास के लिये की गई थी ।

भारतवर्ष के सुप्रसिद्ध विद्वानों एवं भाषाशास्त्रियों का सहयोग प्राप्त करने का सौभाग्य हमें प्रारंभ से ही मिलता रहा है ।

संस्था द्वारा विगत १६ वर्षों से बीकानेर में विभिन्न साहित्यिक प्रवृत्तियां चलाई जा रही हैं, जिनमें से निम्न प्रमुख हैं—

१. विशाल राजस्थानी-हिन्दी शब्दकोश

इस संबंध में विभिन्न स्रोतों से संस्था लगभग दो लाख से अधिक शब्दों का संकलन कर चुकी है । इसका सम्पादन आधुनिक कोशों के ढंग पर, लंबे समय से प्रारंभ कर दिया गया है और अब तक लगभग तीस हजार शब्द सम्पादित हो चुके हैं । कोश में शब्द, व्याकरण, व्युत्पत्ति, उसके अर्थ, और उदाहरण आदि अनेक महत्वपूर्ण सूचनाएं दी गई हैं । यह एक अत्यंत विशाल योजना है, जिसकी संतोषजनक क्रियान्विति के लिये प्रचुर द्रव्य और श्रम की आवश्यकता है । आशा है राजस्थान सरकार की ओर से, प्रार्थित द्रव्य-साहाय्य उपलब्ध होते ही निकट भविष्य में इसका प्रकाशन प्रारंभ करना संभव हो सकेगा ।

२. विशाल राजस्थानी मुहावरा कोश

राजस्थानी भाषा अपने विशाल शब्द भंडार के साथ मुहावरों से भी समृद्ध है । अनुमानतः पचास हजार से भी अधिक मुहावरे दैनिक प्रयोग में लाये जाते हैं । हमने लगभग दस हजार मुहावरों का, हिन्दी में अर्थ और राजस्थानी में उदाहरणों सहित प्रयोग देकर संपादन करवा लिया है और शीघ्र ही इसे प्रकाशित करने का प्रबंध किया जा रहा है । यह भी प्रचुर द्रव्य और श्रम-साध्य कार्य है ।

यदि हम यह विशाल संग्रह साहित्य-जगत को दे सके तो यह संस्था के लिये ही नहीं किन्तु राजस्थानी और हिन्दी जगत के लिए भी एक गौरव की बात होगी ।

३. आधुनिकराजस्थानीकाशन रचनओं काप्र

इसके अन्तर्गत निम्नलिखित पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं—

१. कळायण, ऋतु काव्य । ले० श्री नानूराम संस्कर्ता

२. आभै पटकी, प्रथम सामाजिक उपन्यास । ले० श्री श्रीलाल जोशी ।

३ बरस गांठ, मौलिक कहानी संग्रह । ले० श्री मुरलीधर व्यास ।

'राजस्थान-भारती' में भी आधुनिक राजस्थानी रचनाओं का एक अलग स्तम्भ है, जिसमें भी राजस्थानी कवितायें, कहानियां और रेखाचित्र आदि छपते रहते हैं ।

४ 'राजस्थान-भारती' का प्रकाशन

इस विख्यात शोधपत्रिका का प्रकाशन संस्था के लिये गौरव की वस्तु है । गत १४ वर्षों से प्रकाशित इस पत्रिका की विद्वानों ने मुक्त कंठ से प्रशंसा की है । बहुत चाहते हुए भी द्रव्याभाव, प्रेस की एवं अन्य कठिनाइयों के कारण, त्रैमासिक रूप से इसका प्रकाशन सम्भव नहीं हो सका है । इसका भाग ५ अङ्क ३–४ 'डा० लुइजि पिओ तैस्सितोरी विशेषांक' बहुत ही महत्वपूर्ण एवं उपयोगी सामग्री से परिपूर्ण है । यह अङ्क एक विदेशी विद्वान की राजस्थानी साहित्य-सेवा का एक बहुमूल्य सचित्र कोश है । पत्रिका का अगला ७वां भाग शीघ्र ही प्रकाशित होने जा रहा है । इसका अङ्क १–२ राजस्थानी के सर्वश्रेष्ठ महाकवि पृथ्वीराज राठोड़ का सचित्र और वृहत् विशेषांक है । अपने ढंग का यह एक ही प्रयत्न है ।

पत्रिका की उपयोगिता और महत्व के सम्बन्ध में इतना ही कहना पर्याप्त होगा कि इसके परिवर्तन में भारत एवं विदेशों से लगभग ८० पत्र-पत्रिकाएं हमें प्राप्त होती हैं । भारत के अतिरिक्त पाश्चात्य देशों में भी इसकी मांग है व इसके ग्राहक हैं । शोधकर्त्ताओं के लिये 'राजस्थान भारती' अनिवार्यत: संग्रहणीय शोध-पत्रिका है । इसमें राजस्थानी भाषा, साहित्य, पुरातत्व, इतिहास, कला आदि पर लेखों के अतिरिक्त संस्था के तीन विशिष्ट सदस्य डा० दशरथ शर्मा, श्रीनरोत्तमदास स्वामी और श्री अगरचन्द नाहटा की वृहत् लेख सूची भी प्रकाशित की गई है ।

५. राजस्थानी साहित्य के प्राचीन और महत्वपूर्ण ग्रन्थों का अनुसंधान, सम्पादन एवं प्रकाशन

हमारी साहित्य-निधि को प्राचीन, महत्वपूर्ण और श्रेष्ठ साहित्यिक कृतियों को सुरक्षित रखने एवं सर्वसुलभ कराने के लिये सुसम्पादित एवं शुद्ध रूप में मुद्रित करवा कर उचित मूल्य में वितरित करने की हमारी एक विशाल योजना है। संस्कृत, हिंदी और राजस्थानी के महत्वपूर्ण ग्रंथों का अनुसंधान और प्रकाशन संस्था के सदस्यों की ओर से निरंतर होता रहा है जिसका संक्षिप्त विवरण नीचे दिया जा रहा है—

६. पृथ्वीराज रासो

पृथ्वीराज रासो के कई संस्करण प्रकाश में लाये गये हैं और उनमें से लघुतम संस्करण का सम्पादन करवा कर उसका कुछ अंश 'राजस्थान भारती' में प्रकाशित किया गया है। रासो के विविध संस्करण और उसके ऐतिहासिक महत्व पर कई लेख राजस्थान-भारती में प्रकाशित हुए हैं।

७. राजस्थान के अज्ञात कवि जान (न्यामतखां) की ७५ रचनाओं की खोज की गई। जिसकी सर्वप्रथम जानकारी 'राजस्थान-भारती' के प्रथम अंक में प्रकाशित हुई है। उसका महत्वपूर्ण ऐतिहासिक काव्य 'क्यामरासा' तो प्रकाशित भी करवाया जा चुका है।

८. राजस्थान के जैन संस्कृत साहित्य का परिचय नामक एक निबंध राजस्थान भारती में प्रकाशित किया जा चुका है।

९. मारवाड़ क्षेत्र के ५०० लोकगीतों का संग्रह किया जा चुका है। बीकानेर एवं जैसलमेर क्षेत्र के सैकड़ों लोकगीत, घूमर के लोकगीत, बाल लोकगीत, लोरियां और लगभग ७०० लोक कथाऐं संग्रहीत की गई हैं। राजस्थानी कहावतों के दो भाग प्रकाशित किये जा चुके हैं। जीणमाता के गीत, पाबूजी के पवाड़े और राजा भरथरी आदि लोक काव्य सर्वप्रथम 'राजस्थान-भारती' में प्रकाशित किए गए हैं।

१० बीकानेर राज्य के और जैसलमेर के अप्रकाशित अभिलेखों का विशाल संग्रह 'बीकानेर जैन लेख संग्रह' नामक वृहत् पुस्तक के रूप में प्रकाशित हो चुका है।

११. जसवंत उद्योत, मुंहता नैणसी री ख्यात और अनोखी आन जैसे महत्वपूर्ण ऐतिहासिक ग्रंथों का सम्पादन एवं प्रकाशन हो चुका है।

१२. जोधपुर के महाराजा मानसिंहजी के सचिव कविबर उदयचंद भंडारी की ४० रचनाओं का अनुसंधान किया गया है और महाराजा मानसिंहजी की काव्य-साधना के संबंध में भी सबसे प्रथम 'राजस्थान-भारती' में लेख प्रकाशित हुआ है।

१३. जैसलमेर के अप्रकाशित १०० शिलालेखों और 'भट्टि वंश प्रशस्ति' आदि अनेक अप्राप्य और अप्रकाशित ग्रंथ खोज-यात्रा करके प्राप्त किये गये हैं।

१४. बीकानेर के मस्तयोगी कवि ज्ञानसारजी के ग्रंथों का अनुसंधान किया गया और ज्ञानसार ग्रंथावली के नाम से एक ग्रंथ भी प्रकाशित हो चुका है। इसी प्रकार राजस्थान के महान विद्वान महोपाध्याय समयसुन्दर की ५६३ लघु रचनाओं का संग्रह प्रकाशित किया गया है।

१५. इसके अतिरिक्त संस्था द्वारा––

(१) डा० लुइजि पिओ तैस्सितोरी, समयसुन्दर, पृथ्वीराज, और लोकमान्य तिलक आदि साहित्य-सेवियों के निर्वाण-दिवस और जयन्तियां मनाई जाती हैं।

(२) साप्ताहिक साहित्यिक गोष्ठियों का आयोजन बहुत समय से किया जा रहा है, इसमें अनेकों महत्वपूर्ण निबंध, लेख, कविताएँ और कहानियां आदि पढ़ी जाती हैं, जिससे अनेक विध नवीन साहित्य का निर्माण होता रहता है। विचार विमर्श के लिये गोष्ठियों तथा भाषणमालाओं आदि का भी समय-समय पर आयोजन किया जाता रहा है।

१६. बाहर से ख्यातिप्राप्त विद्वानों को बुलाकर उनके भाषण करवाने का आयोजन भी किया जाता है। डा० वासुदेवशरण अग्रवाल, डा० कैलाशनाथ काटजू, राय श्री कृष्णदास, डा० जी० रामचन्द्रन्, डा० सत्यप्रकाश, डा० डब्लू० एलेन, डा० सुनीतिकुमार चाटुर्ज्या, डा० तिबेरिओ-तिबेरी आदि अनेक अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त विद्वानों के इस कार्यक्रम के अन्तर्गत भाषण हो चुके हैं।

गत दो वर्षों से महाकवि पृथ्वीराज राठौड़ आसन की स्थापना की गई है। दोनों वर्षों के आसन-अधिवेशनों के अभिभाषक क्रमशः राजस्थानी भाषा के प्रकाण्ड

विद्वान् श्री मनोहर शर्मा एम० ए०, बिसाऊ और पं० श्रीलालजी मिश्र एम० ए०, डूंडलोद, थे।

इस प्रकार संस्था अपने १६ वर्षों के जीवन-काल में, संस्कृत, हिन्दी और राजस्थानी साहित्य की निरंतर सेवा करती रही है। आर्थिक संकट से ग्रस्त इस संस्था के लिये यह संभव नहीं हो सका कि यह अपने कार्यक्रम को नियमित रूप से पूरा कर सकती, फिर भी यदा कदा लड़खड़ा कर गिरते पड़ते इसके कार्यकर्त्ताओं ने 'राजस्थान-भारती' का सम्पादन एवं प्रकाशन जारी रखा और यह प्रयास किया कि नाना प्रकार की बाधाओं के बावजूद भी साहित्य सेवा का कार्य निरंतर चलता रहे। यह ठीक है कि संस्था के पास अपना निजी भवन नहीं है, न अच्छा संदर्भ पुस्तकालय है, और न कार्य को सुचारु रूप से सम्पादित करने के समुचित साधन ही हैं; परन्तु साधनों के अभाव में भी संस्था के कार्यकर्ताओं ने साहित्य की जो मौन और एकान्त साधना की है वह प्रकाश में आने पर संस्था के गौरव को निश्चय ही बढ़ा सकने वाली होगी।

राजस्थानी-साहित्य-भंडार अत्यन्त विशाल है। अब तक इसका अत्यल्प अंश ही प्रकाश में आया है। प्राचीन भारतीय वाङ्मय के अलभ्य एवं अनर्घ रत्नों को प्रकाशित करके विद्वज्जनों और साहित्यिकों के समक्ष प्रस्तुत करना एवं उन्हें सुगमता से प्राप्त कराना संस्था का लक्ष्य रहा है। हम अपनी इस लक्ष्य पूर्त्ति की ओर धीरे-धीरे किन्तु दृढता के साथ अग्रसर हो रहे हैं।

यद्यपि अब तक पत्रिका तथा कतिपय पुस्तकों के अतिरिक्त अन्वेषण द्वारा प्राप्त अन्य महत्वपूर्ण सामग्री का प्रकाशन करा देना भी अभीष्ट था, परन्तु अर्थाभाव के कारण ऐसा किया जाना संभव नहीं हो सका। हर्ष की बात है कि भारत सरकार के वैज्ञानिक संशोध एवं सांस्कृतिक कार्यक्रम मंत्रालय (Ministry of scientific Research and Cultural Affairs) ने अपनी आधुनिक भारतीय भाषाओं के विकास की योजना के अंतर्गत हमारे कार्यक्रम को स्वीकृत कर प्रकाशन के लिये रु० १५०००) इस मद में राजस्थान सरकार को दिये तथा राजस्थान सरकार द्वारा उतनी ही राशि अपनी ओर से मिलाकर कुल रु० ३००००) तीस हजार की सहायता, राजस्थानी साहित्य के सम्पादन-प्रकाशन

हेतु इस संस्था को इस वित्तीय वर्ष में प्रदान की गई है; जिससे इस वर्ष निम्नोक्त ३१ पुस्तकों का प्रकाशन किया जा रहा है ।

१. राजस्थानी व्याकरण—	श्री नरोत्तमदास स्वामी
२. राजस्थानी गद्य का विकास (शोध प्रबंध)	डा० शिवस्वरूप शर्मा अचल
३. अचलदास खीची री वचनिका—	श्री नरोत्तमदास स्वामी
४. हमीरायण—	श्री भंवरलाल नाहटा
५. पद्मिनी चरित्र चौपई—	,, ,, ,,
६. दलपत विलास	श्री रावत सारस्वत
७. डिंगल गीत—	,, ,, ,,
८. पंवार वंश दर्पण—	डा० दशरथ शर्मा
९. पृथ्वीराज राठोड़ ग्रंथावली—	श्री नरोत्तमदास स्वामी और श्री बद्रीप्रसाद साकरिया
१०. हरिरस—	श्री बद्रीप्रसाद साकरिया
११. पीरदान लालस ग्रंथावली—	श्री अगरचन्द नाहटा
१२. महादेव पार्वती वेलि—	श्री रावत सारस्वत
१३. सीताराम चौपई—	श्री अगरचन्द नाहटा
१४. जैन रासादि संग्रह—	श्री अगरचन्द नाहटा और डा० हरिवल्लभ भायाणी
१५. सदयवत्स वीर प्रबन्ध—	प्रो० मंजुलाल मजूमदार
१६. जिनराजसूरि कृतिकुसुमांजलि—	श्री भंवरलाल नाहटा
१७. विनयचन्द कृतिकुसुमांजलि—	,, ,, ,,
१८. कविवर धर्मवर्द्धन ग्रंथावली—	श्री अगरचन्द नाहटा
१९. राजस्थान रा दूहा—	श्री नरोत्तमदास स्वामी
२०. वीर रस रा दूहा—	,, ,, ,,
२१. राजस्थान के नीति दोहा—	श्री मोहनलाल पुरोहित
२२. राजस्थान व्रत कथाएं—	,, ,, ,,
२३. राजस्थानी प्रेम कथाएं—	,, ,, ,,
२४. चंदायन—	श्री रावत सारस्वत

२५ भड्डली—	श्री अगरचन्द नाहटा म:विनय सागर
२६. जिनहर्ष ग्रंथावली	श्री अगरचन्द नाहटा
२७. राजस्थानी हस्तलिखित ग्रंथों का विवरण	,, ,,
२८. दम्पति विनोद	,, ,,
२९. हीयाली-राजस्थान का बुद्धिवर्धक साहित्य	,, ,,
३०. समयसुन्दर रासत्रय	श्री भंवरलाल नाहटा
३१. दुरसा आढा ग्रंथावली	श्री बदरीप्रसाद साकरिया

जैसलमेर ऐतिहासिक साधन संग्रह (संपा० डा० दशरथ शर्मा), ईशरदास ग्रंथावली (संपा० बदरीप्रसाद साकरिया), रामरासो (प्रो० गोवर्द्धन शर्मा), राजस्थानी जैन साहित्य (ले० श्री अगरचन्द नाहटा), नागदमण (संपा० बदरीप्रसाद साकरिया), मुहावरा कोश (मुरलीधर व्यास) आदि ग्रंथों का संपादन हो चुका है परन्तु अर्थाभाव के कारण इनका प्रकाशन इस वर्ष नहीं हो रहा है।

हम आशा करते हैं कि कार्य की महत्ता एवं गुरुता को लक्ष्य में रखते हुए अगले वर्ष इससे भी अधिक सहायता हमें अवश्य प्राप्त हो सकेगी -जिससे उपरोक्त संपादित तथा अन्य महत्वपूर्ण ग्रंथों का प्रकाशन सम्भव हो सकेगा।

इस सहायता के लिये हम भारत सरकार के शिक्षाविकास सचिवालय के आभारी हैं, जिन्होंने कृपा करके हमारी योजना को स्वीकृत किया और ग्रान्ट-इन-एड की रकम मंजूर की।

राजस्थान के मुख्य मन्त्री माननीय मोहनलालजी सुखाड़िया, जो सौभाग्य से शिक्षा मन्त्री भी हैं और जो साहित्य की प्रगति एवं पुनरुद्धार के लिये पूर्ण सचेष्ट हैं, का भी इस सहायता के प्राप्त कराने में पूरा-पूरा योगदान रहा है। अतः हम उनके प्रति अपनी कृतज्ञता सादर प्रगट करते हैं।

राजस्थान के प्राथमिक और माध्यमिक शिक्षाध्यक्ष महोदय श्री जगन्नाथसिंहजी मेहता का भी हम आभार प्रगट करते हैं, जिन्होंने अपनी ओर से पूरी-पूरी दिलचस्पी लेकर हमारा उत्साहवर्द्धन किया, जिससे हम इस वृहद् कार्य को सम्पन्न करने में समर्थ हो सके। संस्था उनकी सदैव ऋणी रहेगी।

इतने थोड़े समय में इतने महत्वपूर्ण ग्रन्थों का संपादन करके संस्था के प्रकाशन-कार्य में जो सराहनीय सहयोग दिया है, इसके लिये हम सभी ग्रन्थ सम्पादकों व लेखकों के अत्यंत आभारी हैं।

अनूप संस्कृत लाइब्रेरी और अभय जैन ग्रन्थालय बीकानेर, स्व० पूर्णचन्द्र नाहर संग्रहालय कलकत्ता, जैन भवन संग्रह कलकत्ता, महावीर तीर्थक्षेत्र अनुसंधान समिति जयपुर, ओरियंटल इन्स्टीट्यूट बड़ोदा, भांडारकर रिसर्च इन्स्टीट्यूट पूना, खरतरगच्छ वृहद् ज्ञान-भंडार बीकानेर, मोतीचंद खजाञ्ची ग्रंथालय बीकानेर, खरतर आचार्य ज्ञान भण्डार बीकानेर, एशियाटिक सोसाइटी बंबई, आत्माराम जैन ज्ञानभंडार बडोदा, मुनि पुण्यविजयजी, मुनि रमणिक विजयजी, श्री सीताराम लालस, श्री रविशंकर देराश्री, पं० हरदत्तजी गोविंद व्यास जैसलमेर आदि अनेक संस्थाओं और व्यक्तियों से हस्तलिखित प्रतियां प्राप्त होने से ही उपरोक्त ग्रन्थों का संपादन संभव हो सका है। अतएव हम इन सबके प्रति आभार प्रदर्शन करना अपना परम कर्त्तव्य समझते हैं।

ऐसे प्राचीन ग्रन्थों का सम्पादन श्रमसाध्य है एवं पर्याप्त समय की अपेक्षा रखता है। हमने अल्प समय में ही इतने ग्रन्थ प्रकाशित करने का प्रयत्न किया इसलिये त्रुटियों का रह जाना स्वाभाविक है। गच्छत: स्खलनंक्वपि भवत्येव प्रमाहत:, हसन्ति दुर्जनास्तत्र समादधति साधव:।

आशा है विद्वद्वृन्द हमारे इन प्रकाशनों का अवलोकन करके साहित्य का रसास्वादन करेंगे और अपने सुझावों द्वारा हमें लाभान्वित करेंगे जिससे हम अपने प्रयास को सफल मानकर कृतार्थ हो सकेंगे और पुन: मां भारती के चरण कमलों में विनम्रतापूर्वक अपनी पुष्पांजलि समर्पित करने के हेतु पुन: उपस्थित होने का साहस बटोर सकेंगे।

निवेदक

लालचन्द कोठारी

प्रधान-मंत्री

सादूल राजस्थानी-इन्स्टीट्यूट

बीकानेर

बीकानेर,

मार्गशीर्ष शुक्ला १५

सं० २०१७

दिसम्बर ३,१९६०.

कविवर धर्मवर्द्धन की हस्तलिखित "परिभाषा"।
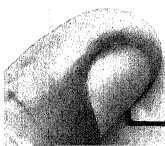
भूमिका

राजस्थान की साहित्य-सम्पत्ति की अभिवृद्धि एवं सुरक्षा में जैन विद्वानों का योग सदैव स्मरणीय रहेगा। जैन-विद्वानों का उद्देश्य एकमात्र जनसाधारण में सद्धर्म का प्रचार करना एवं ज्ञान की ज्योति को प्रकाशमान रखना रहा है। न उनको राजा-महाराजाओं का गुणानुवाद करना था, न हिंसामय युद्ध के लिए योद्धाओं को उत्तेजित करना था और न शृंगार रस से पूर्ण रचनाओं द्वारा जन-समाज में कामोत्तेजना फैलाना था। उनका जीवन सदा से निवृत्ति-प्रधान रहता आया है। अतः सद्धर्म-प्रचार के साथ ही साहित्य का उत्पादन एवं उन्नयन करना उनके जीवन का अंग बना हुआ दृष्टिगोचर होता है।

जैन विद्वानों ने प्रचुर साहित्य-सामग्री का निर्माण करने के साथ ही अतिमात्रा में ग्रंथों का संरक्षण भी किया है। इस कार्य में उन्होंने जैन-अजैन का विचार नहीं किया। जैन भंडारों में सभी प्रकार के महत्वपूर्ण ग्रन्थों की प्रतियां सुरक्षित की जाती रहीं हैं और उनके अपने लिखे हुए ग्रन्थ भी केवल जैन-धर्म विषयक ही नहीं हैं। उन्होंने सभी विषयों के ग्रन्थों से अपने भंडारों को परिपूर्ण करने के साथ ही स्वयं भी विविध ज्ञान-

शाखाओं अथवा साहित्यिक परम्पराओं की पूर्ति के लिए लिए ग्रन्थ रचना की है। जैन भंडारों में की गई ज्ञान साधना ने विद्यारसिकों के लिए प्रचुर साहित्य-सामग्री एकत्रित कर दी है। यह जैन विद्वानों की एकान्त तपस्या का ही फल है कि बहुसंख्यक अनमोल ग्रन्थ नष्ट होने से बच गए हैं और वे अब भी सर्वसाधारण के लिए सुलभ हैं।

राजस्थान के लब्धप्रतिष्ठ जैन विद्वानों एवं कवियों की संख्या भी काफी बड़ी है। इन विद्वानों ने अनेक भाषाओं में ग्रन्थ-रचना की है। जहां इन्होंने संस्कृत में ग्रन्थ लिखे हैं, वहां प्राकृत एवं अपभ्रंश को भी अपनी प्रतिभा की भेंट दी है। लोकभाषा की ओर तो जैन विद्वानों का ध्यान सदा से ही रहा है। यही कारण है कि राजस्थानी जैन साहित्य की विशालता आश्चर्यजनक है। प्राचीन राजस्थानी साहित्य को तो जैन विद्वानों की विशेष देन है।

राजस्थान के जैन साहित्य-तपस्वियों में उपाध्याय धर्मवर्द्धन का विशिष्ट स्थान है। ये एक साथ ही सद्धर्म-प्रचारक, समर्थ विद्वान एवं सरस कवि के रूप में प्रतिष्ठित हैं। इनकी अपनी रचनाएँ काफी अधिक हैं और वे संस्कृत, पिंगल एवं डिंगल आदि अनेक भाषाओं में हैं। इतना ही नहीं, इन्होंने अपनी रचनाओं में अनेक परम्पराओं का सुन्दर निर्वाह कर के अपने साहित्य को समष्टि-रूप से एक विशिष्ट वस्तु बना दिया है, जिसके विषय में आगे जरा विस्तार से चर्चा की जाएगी।

श्री अगरचंद नाहटा ने अपने 'राजस्थानी साहित्य और जैन कवि धर्मवर्द्धन' शीर्षक लेख (त्रैमासिक राजस्थान, भाद्रपद १६६३) में उपाध्याय धर्मवर्द्धन के जीवनवृत्तान्त पर अच्छा प्रकाश डाला है। तदनुसार इनका जन्म सं० १७०० में हुआ था और इनका जन्म नाम 'धरमसी' (धर्मसिंह) था। इन्होंने तत्कालीन खरतरगच्छाचार्य श्रीजिनरत्नसूरि के पास सं० १७१३ में तेरह वर्ष की अल्पायु में ही दीक्षा ग्रहण की और इनका दीक्षा नाम 'धर्मवर्द्धन' हुआ। पंद्रहवींशताब्दी के प्रभावक खरतर गच्छाचार्य श्रीजिनभद्रसूरि की शिष्य-परम्परा के मुनि विजयहर्ष आप के विद्यागुरु थे, जिनके समीप रह कर आपने अनेक शास्त्रों का अध्ययन किया।

मुनि धर्मवर्द्धन का समस्त जीवन धर्मप्रचार एवं ग्रन्थ-रचना में ही व्यतीत हुआ। आपने अनेक प्रदेशों, नगरों एवं ग्रामों में विहार करके धर्म-प्रचार किया और प्रचुर साहित्य-रचना की। आपको अपने जीवन में बड़ा सम्मान प्राप्त हुआ। आपकी विद्वत्ता की प्रसिद्धि फैली। फलतः गच्छनायक श्रीजिनचन्द्रसूरि ने आपको सं० १७४० में उपाध्याय पद से अलंकृत किया। आगे चल कर गच्छ के तत्कालीन सभी उपाध्यायों में वयोवृद्ध एवं ज्ञानवृद्ध होने के कारण आप महोपाध्याय पद से विभूषित हुए।

लगभग ८० वर्ष की आयु में यशस्वी एवं दीर्घजीवन प्राप्त करके मुनि धर्मवर्द्धन ने इहलीला संवरण की। जयसुन्दर,

कीर्तिसुन्दर, ज्ञानवल्लभ आदि अनेक विद्वान आपके शिष्य थे। इनकी शिष्यपरम्परा १९ वीं शताब्दी तक चालू रही [1]। आपके सम्बन्ध में भोजक अमराजी का कहा हुआ एक डिंगल गीत इस प्रकार है :—

वखतवर श्री विजैहरष वाचक तणौ,
ज्ञान गुण गीत सौभाग वड़ गात।
धडा वांधई तिके गुणां रा धरमसी,
पतगरइ तुं नै सहि बड़ा कवि पात ॥१॥
ज्ञानवंत सूत्र सिधंतरी लहइ गम,
अगम रा अरथ जिके तिके आणइ।
सहु बहोतर कला तो कनां धरमसी,
जैन सिव धरम रा मरम जांणइ ॥ २ ॥
व्याकरण वेद पुराण कुराण विधि
आप मति सार अधिकार आखइ।
ताहरी धरमसी समभि इसड़ी तरह,
भरह पिंगल तणा भेद भाखइ ॥ ३ ॥
राजि है श्री कमल साईज चढ़ती रती,
जिन सासन जोइतां जती गुण जाण।
नग अमूल धरमसी सारिखा नीपजइ,
खरतरइ गच्छ हीरां तणी खांण ॥ ४ ॥

---

१ महोपाध्याय धर्मवर्द्धनजी की विस्तृत जीवनी श्री नाहाटाजी के लेख में द्रष्टव्य है।

तत्कालीन बीकानेर नरेश सुजाणसिंहजी ने गच्छनायक श्रीजिनसुखसूरि को दिए गए सं० १७७६ के अपने पत्र में महोपाध्यायजी की इस प्रकार प्रशंसा की है :—

सब गुण ज्ञान विशेष बिराजै ।
कविगण ऊपरि घन ज्युं गाजै ॥
धर्मसिंह धरणीतल मांहि ।
पण्डित योग्य प्रणति दल तांहि ॥

महोपाध्याय धर्मवर्द्धन अनेक विषयों के ज्ञाता एवं बहुभाषाविद् उच्चकोटि के विद्वान थे। आपकी अनेक रचनाएँ संस्कृत में हैं। साथ ही प्राकृत-अपभ्रंश आदि प्राचीन भाषाओं में भी रचना करने में आप समर्थ थे। इस सम्बंध में कुछ उदाहरण द्रष्टव्य हैं :—

सरस्वती-वंदना (संस्कृत)

मंद्रैर्मध्यैश्च तारैः क्रमततिभिरुरः कण्ठमूर्द्धप्रचारैः,
सप्तस्वर्य्या प्रयुक्तैः सरगमपधनेत्याख्यया ऽन्योन्यमुक्तैः ।
स्कन्धे न्यस्य प्रवालं कल ललितकलं कच्छपीं वादयंती,
रम्यास्या सुप्रसन्ना वितरतु विततें भारती भारती मे ॥६॥
(सरस्वत्यष्टकम्)

प्राकृत

विविह सुविहि लच्छीवल्लिसंताणमेहं,
सुगुणरयणगेहं पत्तसंपुण्णरेहं ।

दलियदुरियदाहं लद्धसंसिद्धिलाहं,
जलहिमिव अगाहं वंदिमो पासनाहं ॥ ३ ॥

अपभ्रंसिका

तुहु राउल राउलह सामि हुं राउल रंकह,
हिणसु दुहाइ सुहाइ कुण सुमइ मा अवहीरह।
पिक्खइ जुगू अजुग्गु ठाणु वरसंतउ किं घणु,
पत्तउ पइ जइ होसु दुहियसा तुह अवहीरणु ॥८॥

(श्रीगौडीपार्श्वनाथस्तवनम्)

राजस्थान का डिंगल साहित्य अत्यंत गौरवमय है। इसके गीत भारतीय साहित्य की विशिष्ट वस्तु हैं। गीतों की वर्णन-शैली एवं उनकी छन्द रचना अपने आप में स्वतंत्र है। डिंगल की गीत सम्पत्ति है भी अति विशाल और इसकी अभिवृद्धि में केवल चारणों ही नहीं, अन्य वर्गों एवं कवियों का भी पूरा योगदान रहा है। महोपाध्याय धर्मवर्द्धन के डिंगलगीत उनकी समस्त साहित्यसामग्री में अपना विशिष्ट स्थान रखते हैं। उन्होंने काफी डिंगल गीत लिखे है और और उनका अर्थ-गांभीर्य विशेष रूप से ध्यान में रखने की चीज है। यहां उनके कुछ डिंगलगीत उदाहरण-स्वरूप प्रस्तुत किए जाते हैं :—

१. सूर्य स्तुति

हुदें लोक जिण रे उदै, मुदै सहु काम हूं,
पूजनीकां सिरे देव पूजौ।

साच री बात सहु सांभलौ सेवकां,
देव को सूर सम नहीं दूजौ ॥ १ ॥
सहस किरणां धरै हरै अंधकार सही,
नमैं ग्रहसमै तियां कष्ट नावै ।
प्रगट परताप परता घणा पूरतौ,
अवर कुण अमर रवि गमर आवै ॥ २ ॥
पडि रहै रात रा पंखिया पंथिया,
हुवै दरसण सकौ राह हींडैं ।
सोभ चडै सुरां सुरां असुरां सिहर,
मिहर री मिहर सुर कवण मीडैं ॥ ३ ॥
तपे जग ऊपरा जपै सहु को तरणि,
सुभा असुभां करम धरम साखी ।
रूड़ा ग्रह हुवइ सहु रूड़ै ग्रह राजवी,
रूड़ां रजवट प्रगट रीति राखी ॥ ४ ॥

२. वर्षा वर्णन

सबल मैंगल वादल तणा सज करि,
गुहिर असमाण नीसाण गाजै ।
जंग जोरैं करण काल रिपु जीपवा,
आज कटकी करी इंद राजै ॥ १ ॥
तीख करवाल बिकराल वीजली तणी
घोर माती घटा घर रै घालै ।
छोडि वासां घणी सोक छांटा तणी,

चटक माहे मिल्यौ कटक चालै ॥ २ ॥
तड़ा तड़ि तोब करि गयण तड़कै तड़ित,
महाझड़ झड़ि करि झूझ मंड्यौ ।
कड़ा किड़ि कोध करि काल कटका कीयौ,
खिणकरै बल खल सबल खंड्यौ ॥ ३ ॥
सरस वांना सगल कीध सजल थल,
प्रगट पुहवी निपट प्रेम प्रघला ।
लहकती लाछि वलि लील लोको लही,
सुध मन करै धर्मशील सगला ॥ ४ ॥

३. श्री महावीर जन्म

सफल थाल वागा थिया धवल मंगल सयल
तुरत त्रिभुवन हुआ हरष त्यारां ।
धनद कोठार भंडार भरिया धने,
जनमियो देव ब्रधमान ज्यारां ॥ १ ॥
वार तिण मेरगिरि सिहर न्ववरावियौ
भला सुर असुरपति हुआ मेला ।
सुद्रव वरषा हुई लोक हरष्या सहु,
वाह जिनवीर री जनम वेला ॥ २ ॥
मिहर जगि ऊगतें पूगतें मनोरथ
जुगति जाचक लहैं दान जाचा ।
मंडिया महोछव सिधारथ मौहले,
सुपन त्रिसला सुतन किया साचा ॥ ३ ॥

करण उपगार संसार तारण कलू,
आप अवतार जगदीस आयौ ।
धनो धन जैन धर्म सीम धारणधणी,
जगतगुर भले महावीर जायौ ॥ ४ ॥

४. शत्रुञ्जय महिमा

सरब पूरब सुकृत तीये किया सफल,
लाभ सहु लाभ में अधिक लीया ।
सफल सहु तीरथां सिरे सैत्रुज री,
यात्रा कीधी तियां धन्न जीया ॥ १ ॥
सुजस परकासता मिले संघ सासता,
शास्त्रे सासता विरुद सुणिजे ।
ऋषभ जिणराज पुंडरीक गिरि राजीयो,
भेटिया सार अवतार भणिजे ॥ २ ॥
कांकरै कांकरै कोडि कोडी किता,
साधु शुभ ध्यान इण थान सीधा ।
साच सिद्धक्षेत्र शुद्ध चेत सु ं सेवतां,
कीध दरसण नयनसफल कीधा ॥ ३ ॥
तासु दुरगति न ह्वै नरक त्रियंच री,
सुगति सुर नर लहै सुगति सारी ।
विमल आतम तिको विमलगिरि निरखसी
धनो धन श्री धर्मसील धारी ॥ ४ ॥

५. धरती की ममता

भोगवी किते भू किता भोगवसी
मांहरी मांहरी करइ मरै ।
एंठी तजी पातलां ऊपरि,
कूकर मिलि मिलि कलह करै ॥ १ ॥
धपटि धरणि कितेइ धु ंसी,
धरि अपणाइत केइ ध्र ुवै ।
धोबा तणी सिला परि धोबी,
हूं पति हूं पति करै हुवै ॥ २ ॥
इण इल किया किता पति आगै,
परतिख किता किता परपूठ ।
वसुधा प्रगट दीसती वेश्या,
झूझै भूप भुजंग सुझूठ ॥ ३ ॥
पातल सिला वेश्या पृथ्वी,
इण च्यारां री रीत इसी ।
ममता करै मरै सो मूरख,
कहै ध्रमसी धणियाप किसी ॥ ४ ॥

६. राष्ट्रवीर शिवाजी

सकति काइ साधना किना निज भुज सकति,
वड़ा गढ़ धूणिया बीर बांकै ।
अवर उमराव कुण आइ साम्हो अड़ै,
सिवा री धाक पातिसाह सांकै ॥ १ ॥

खसर करता तिके असुर सहु खूंदिया,
जीविया तिके त्रिणौ लेहि जीहैं।
सबद आवाज सिवराज री सांभले,
बिली जिम दिली रो धणी बीहै॥ २॥
सहर देखे दिली मिले पतिसाह सूं,
खलक देखत सिवौ नाम खारै।
आवियौ वले कुसले दले आप रे।
हाथ घसि रह्यौ हजरत्ति हारै॥ ३॥
कहर म्लेच्छां शहर डहर कंद काटिवा,
लहर दरियाव निज धरम लोचै।
हिंदुऔ राव आइ दिली लेसी हिवै,
सबल मन मांहि सुलतांण सोचै॥ ४॥

उपर कविवर धर्मवर्द्धन के ६ डिंगल गीत इसलिए प्रस्तुत किए गए हैं कि इनके द्वारा विषयगत विविधता प्रकट हो सके। कविवर ने विविध विषयों में डिंगलगीत रच कर इस शैली का महत्त्व प्रकाशित किया है। डिंगलगीतों का विषय केवल युद्धवर्णन अथवा विरूदगान तक ही सीमित नहीं है। इस में देवस्तुति, प्रकृति वर्णन, निर्वेद एवं राष्ट्रीयता आदि तत्त्वों का भी सम्यक् संन्निवेश दृष्टिगोचर होता है। कविवर धर्मवर्द्धन के गीतों की डिंगल भी प्रसादगुण धारण किए हुए है। यह इनकी अपनी विशेषता है।

कविवर धर्मवर्द्धन ने अनेक गेय पदों की भी रचना की है। ये पद अधिकांश में औपदेशिक अथवा स्तवन रूप हैं

और पदों की भाषा पिंगल है। कविवर के कुछ पदों को उदाहरण-स्वरूप यहां दिया जाता है :—

१. राग तोड़ी

तु करे गर्व सो सर्व वृथा री।
स्थिर न रहे सुर नर विद्याधर
ता पर तेरी कौन कथा री ॥ १ ॥
कोरिक जोरि दाम किये इक ते,
जाकै पास वि दाम न था री।
उठि चल्यो जब आप अचानक,
परिय रही सब धरिय पथा री ॥ २ ॥
संपद आपद दुहु सोकनि के,
फिकरी होइ फंद में फथा री।
सुधर्मशील धरे सोउ सुखिया,
मुखिया राचत मुक्ति मथारी ॥ ३ ॥

२. राग सामेरी

मन मृग तु तन वन में मातो।
केलि करे चरे इच्छाचारी जाणे नहीं दिन जातो ॥ १ ॥
माया रूप महा मृग त्रिसनां, तिण में धावे तातो।
आखर पूरी होत न इच्छा, तो भी नहीं पछतातो ॥ २ ॥
कामणी कपट महा कुडि मंडी, खबरि करे फाल खातो।
कहे धर्मसीह उलंगीसि वाको, तेरी सफल कला तो ॥ ३ ॥

जैन विद्वानों द्वारा लोक साहित्य का बड़ा उपकार हुआ है। जहां उन्होंने अपनी रचनाओं के लिए लोककथाओं का आधार लेकर बड़ी ही रोचक एवं शिक्षाप्रद सामग्री प्रस्तुत की है, वहां उन्होंने लोकगीतों के क्षेत्र में भी विशेष कार्य किया है। उन्होंने लोकगीतों की धुनों के आधार पर बहुत अधिक गीतों की रचना की है और साथ ही उनकी आधार-भूत धुनों के गीतों की आद्य पंक्तियां भी अपनी रचनाओं के साथ लिख दी हैं। इस प्रकार हजारों प्राचीन लोकगीतों की आद्य पंक्तियां इन धर्म प्रचारक कवियों की कृपा से सुरक्षित हो गई [२]। मुनि धर्मवर्द्धन विरचित अनेक गीत भी इसी रूप में हैं। उनके कुछ गीतों की धुनें इस प्रकार हैं :—

१. मुरली बजावै जी आवो प्यारो कान्ह।
२. आज निहेंजो दीसै नाहलो।
३. केसरियो हाली हल खड़े हो।
४. धण रा ढोला।
५. ढाल, सुंबरदेरा गीत री।
६. ढाल, नणदल री।
७. उड रे आंबा कोइल मोरी।
८. हेम घड्यो रतने जड्यो खुंपो।
९. कपूर हुवै अति ऊजलो रे।

२. 'जैन गुर्जर कवियो' भा० ३ खं० २ में ऐसी प्राचीन 'देशियों' की अति विस्तृत सूची दी गई है, जो द्रष्टव्य है।

१०. सुगुण सनेही मेरे लाला।

११. दीवाली दिन आवीयउ।

मुनि धर्मवर्द्धन का जीवन त्यागमय था एवं जनता में सद्धर्म का प्रचार करना ही उनका मुख्य कार्य था। अतः उनकी रचनाओं में औपदेशिक एवं धार्मिक सामग्री का पाया जाना सर्वथा स्वाभाविक है। वे जैन शासन में थे। उनके हृदय में जैन तीर्थङ्करों एवं आचार्यों के प्रति अगाध भक्ति थी, जो उनकी अधिकांश रचनाओं का प्रधान विषय है। इन रचनाओं से मुनिवर के हृदय की भक्ति टपकी है। यहां कुछ उदाहरण दिए जाते हैं :—

१. संघ (छप्पय)

वंदो जिन चौवीस चवदसे बावन गणधर।
साधु अट्ठावीस लाख सहस अड़तीस सुखंकर॥
साध्वी लाख चम्माल सहस छयालिस चउसय।
श्रावक पचपन लाख सहस अड़ताल समुचय॥
श्राविका कोडि पंच लाख सहु, अधिक अठावीस सहस अख।
परिवार इतो संघ ने प्रगट, श्री धर्मसी कहै करहु सुख॥

२. श्री जिनदत्तसूरि (सवैया)

बावन वीर किए अपने वश, चौसट्ठि योगिनी पाय लगाई।
डाइण साइणि, व्यंतर खेचर, भूत परेत पिसाच पुलाई।
बीज तटक्क भटक्क कटक्क, अटक्क रहै पै खटक्क न कांई।
कहै धर्मसीह लंघे कुण लीह, दीयै जिनदत्त की एक दुहाई।

३. श्री जिनचंद्रसूरि (कवित्त)

जैसे राजहंसनि सौं राजे मानसर राज,
जैसे विंध भूधर विराजै गजराज सौं ।
जैसे सुर राजि सु जु सोभ सुरराज साजै,
जैसे सिंधुराज राजै सिंधुनि के साज सौं ।
जसे तार हरनि के वृन्द सौं विराजे चंद,
जैसे गिरराज राजै नंद वन राज सौं ।
जैसे धर्मशील सौं विराजै गच्छराज तैसै
राजै जिनचंदसूरि संघ के समाज सौं ।

जनता में सद्धर्म का प्रचार करने का मुख्य अंग आचरण एवं व्यवहार की शुद्धि है। मुनिवर ने इन विषयों पर भी बहुत कुछ लिखा है। इसी श्रेणि में उनकी नीति-प्रधान रचनाएँ हैं। इनमें कवि के दीर्घजीवन का सार समाया हुआ है। यहां कुछ उदाहरण इस सम्बंध में प्रस्तुत किए जाते हैं :—

१. भाव

भाव संसार समुद्र की नाव है,
भाव बिना करणी सब फीकी
भाव क्रिया ही कौ राव कहावत,
भाव ही तैं सब बात है नीकी ।

दान करौ बहु ध्यान धरौ,
तप जप्प की खप्प करौ दिन ही की ।
बात को सार यहै धर्मसी इक,
भाव बिना नहीं सिद्धि कहीं की ।।४५।।
(धर्म बावनी)

२. मधुर वचन

बहु आदर सूं बोलियै, वारु मीठा बैण ।
धन बिण लागां धर्मसी, सगला ही ह्वै सैण ।।
सगला ही ह्वै सैण, वैण अमृत वदीजै ।
आदर दीजै अधिक, कदे मनि गर्व न कीज ।।
इणा बातै आपणा, सैंण हुइ सोभ वदै सहु ।
मानै निसचै मीत, बोल मीठो गुण छै बहु ।।४४।।
(कुण्डलिया बावनी)

३. मोर और पंख

कहै पांखा सुणि केकि, कंत तुझ लागि केहै ।
करि कु मया तुं कांइ, फूस ज्युं अम्ह पां फेडै ।।
सुन्दर माहरे संग, कहै सहु तोने कलाधर ।
नहीं तर खुथड़ो निरखी, नेट निन्दा करसी नर ।।
अम्ह घणी ठाम बीजी अवर, धरमी आदर करि धरै ।
मांहरै सुगुण सोभा मुगट, श्रीपति पिण करसी सिरै ।।२२।।
(छप्पय बावनी)
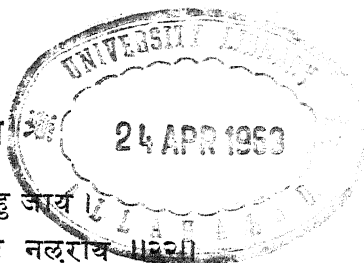
४. दृष्टान्त

मोटां रे पिण कष्ट में, जतन नेह सहु जाय।
रातैं रमणी रांन में, नांखि गयौ नलराय ।।२२।।
राज लैंण मांहे रहै, वडां तणी मति वक्र।
भरतै मारण भ्रात नै, चपल चलायौ चक्र ।।२३।।
दान अदान दुहूं दिसी, अधिक भाव री ओर।
नवल सेठ नै फल निबल, जीरण नै फल जोर ।।२४।।

(दृष्टान्त छतीसी)

५. काया

काया काचे कुंभ समान कहै ककौ।
धांखै धेखी काल सही देसी धकौ ।।
करवत वहतां काठ ज्युं आउखो कटै।
परिहां, न धरै तोइ धर्मसीख जीव नट ज्युं नटै ।।११।।

(परिहां बत्तीसी)

६. सीख

राजा मित्र म जाणे रंग, सुमाणस रो करिजे संग।
काया रखत तपस्या कीजै, दान वलै धन सारु दीजै ।।१०।।
जोरावर सुं मत रमे जुऔ, करिजे मत घर मांहे कुऔ।
वैदां सुं मत करजे वैर, गालि बोले तो ही न कहै गैर ।।११।।

(सवासौ सीख)

७. शिक्षाकथन

सुगुरु कहै सुण प्राणिया, धरिजै धर्म वट्टा।
पूरब पुण्य प्रमाण तैं, मानव भव खट्टा।
हिव अहिलौ हारे मतां, भांजे भव भट्टा।
लालच में लागै रखै, करि कूड़ कपट्टा ॥२॥

उलझै नौं तु आप सुं, ज्युं जोगी जट्टा।
पाचिस पाप संताप में, ज्युं भोभरि भट्टा।
भमसी तुं भव नवा नवा, नाचै ज्युं नट्टा।
ऐ मंदिर ऐ मालिया, ऐ ऊचां अट्टा ॥३॥

हयवर गयवर हींसता, गौ महिषी थट्टा।
लाछ दु लीपी झूंबका, पल्हिंग सु घट्टा।
मांनिक मोति मूंदड़ा, परवाल प्रगट्टा।
आइ मिल्या है एकठ्ठा, जैसा चलवट्टा ॥४॥

(गुरु शिक्षा कथन निसाणी)

ऊपर के उदाहरणों से प्रकट होता है कि समर्थ-कवि धर्मवर्द्धन ने राजस्थान में प्रचलित प्रायः सभी काव्य शैलियों को अपनाया है और इस प्रकार की अपनी रचनाओं में वे पूरे सफल हुए हैं। राजस्थानी साहित्य में काव्यगत नामों के अनेक प्रकार हैं और उन सब में रचना शैली की दृष्टि से अपनी अपनी विशेषताएं हैं। मुनि धर्मवर्द्धन ने उन सब को अपनी वाणी का सुफल भेंट किया है। ऊपर के उदाहरणों के अतिरिक्त अन्य काव्यशैलियों से सम्बंधित कवि की 'नेमि

राजमती बारहमासा', 'श्री गौड़ी पार्श्वनाथ छन्द', 'शील रास' 'श्रीमती चौढालिया' एवं 'श्री दशार्णभद्र राजर्षि चौपई' आदि रचनाओं के नाम लिए जा सकते हैं। इतनी अधिक काव्यशैलियों में सफल रचनाएं प्रस्तुत करना कवि की सामर्थ्यका द्योतक है। राजस्थान के कवियों में मुनि धर्मवर्द्धन की यह विशेषता वस्तुतः ही अत्यंत गौरव का विषय है।

पुराने कवियों में चित्रकाव्य की रचना करने का चाव रहा है। कविवर धर्मवर्द्धन ने भी इस प्रकार की रचनाएँ की हैं। कुछ उदाहरण द्रष्टव्य हैं :—

साधु स्तुति (सर्व लघु अक्षर)

धरत धरम मग, हरत दुरित रग,
करत सुकृत मति हरत भरम सी।
गहत अमल गुन, दहत मदन वन,
रहत नगन तन सहत गरम सी।
कहत कथन सत, वहत अमल मन,
तहत करन गण महति परम सी।
रमत अमित हित सुमति जुगत जति,
चरन कमल नित नमत धरमसी।

देव गुरु वंदना (इकतीसा, तेवीसा सवैया)[1]

शोभ(त) घणी(जु) अति देह(की) वणी(है) दुति,
सूरि(ज) समा(न) जसु तेज(मा) वदा(य) जू।

---

१. इस पद्य के कोष्ठक वाले अक्षरों को छोड़ कर पढ़ने से यह 'तेवीसा' सवैया बन जाता है।

भूप)ति) नमै(है) नित नाम(कौ) प्रता(प) पहु,
देख(त) ताही(ही) दुख नाहि(है) कदा(य) जू।
पूर(ण) बडे(ई) गुण सेव(के) करैं(थैं) सुख,
वंद(त) तही(ही) बहु लोक (स)मुदा(य) जू।
देत(है) बहू(त) सुख देव (सु)गुरु(हि) नित,
दोऊं(कौ) नमै(है) धमसीह(यौ) सदा(य) जू।

साथ ही एक हीयाली भी उदाहरण स्वरूप प्रस्तुत की जाती है :—

हीयाली

चतुर कहौ तुम्हे चुंप सुं, अरथ हीयाली एहो रे।
नारी एक प्रसिद्ध छै, सगला पास सनेहो रे ॥१॥
ओलै बैठा एकली, करै सगला ई कामो रे।
राती रस भीनी रहे, छोडै नहीं निज ठामो रे ॥२॥
चाकर चौकीदार ज्युं, बहुला राखै पासो रे।
काम करावै ते कन्हा, विलसै आप विलासो रे ॥३॥
जोड़े प्रीति जणै जणै, त्रोड़े पिण तिण वारो रे।
करिज्यो वस धर्मसी कहै, सुख वांछो जो सारो रे ॥४॥

(जीभ)

इसी प्रकार कवि समाज में 'समस्यापूर्त्ति का भी विशेष प्रचलन रहा है। काव्यविनोद करने का यह एक सुन्दर तरीका है। समस्या की पूर्त्ति के लिए प्रसंगोद्भावना करनी पड़ती है। इसमें प्रखर कल्पना—शक्ति की आवश्यकता है।

कविवर धर्मवर्द्धन ने अनेक समस्याओं की सुन्दर एवं रोचक रूप में पूर्ति की है। उनमें से कई तो संस्कृत में हैं। आगे कुछ उदाहरण इस दिशा में प्रस्तुत किए जाते हैं, जो अतीव सरस एवं रोचक हैं :—

१. समस्या, भावी न टरे रे भैया, भावे कछु कर रे [†]।

श्रवण भरै तो नीर, मार्यो दशरथ तीर,
ऐसी होनहार कौण मेटि सकै पर रे।
पांडव गये राज हार, कौरव भयौ संहार,
द्रौपदी कुदृष्टि मार्यो कीचक किचर रे।
केती धर्मसीख दइ, सीत विष वेलि वइ,
रावन न मानि लइ जावन कुं घर रे।
भावी को करनहार, सो भी भम्यौ दश वार,
भावी न टरत भैया, भावै कछु कर रे।

२. समस्या, नीली हरी विचि लाल ममोला।

एक समै वृषभान कुमारि,
सिंगार सजै मनि आनिइ लोला।
रंग हर्ये सब वेस बणाइ कै,
अंग लुकाइ लए तिहि ओला।
आए अचाण तहां घनश्याम,
लगाइ झरी करै केलि कलोला।
घुंघट में ए कयों अधरामनु,
नील हरी विच्चि लाल ममोला।

---

†. यह आणंदरामजी नाजर द्वारा दी हुई समस्या की पूर्ति है। ये उस समय बीकानेर के राज्यमंत्री थे।

३. समस्या, टेरण के मिस हेरण लागी ।

चुंप सुं च्यार सखी मिलि चौक में,

गीत विवाह के गावन लागी ।

गौख तैं कान्ह कौ साद सुणै तैं,

भइ वृषभान सुता चित रागी ।

जाइ नहीं चितयौ उत ओर,

सखीनि कै बीचि में बैठि सभागी ।

उतैं कर कौ सुकराज उड़ाइ कै,

टेरण के मिसि हेरण लागी ।

४. समस्या, हरिसिद्धि हसै हरि यों न हसे ।

हनुमान हरौल कियैं चढै राम

तर्यो निधि संनिधि लंक ध्वसे ।

करि रौद्र संग्राम लंकेश कुं मारि,

कियौ सुखवास की नास नसे ।

शिव चित्यो त्रिलोक कौ कंटक सोऊ,

नमावतौ मो पद सीस दसे ।

उत दैत्य हसे उत देव हसे,

हरिसिद्धि हसे हर यौं न हसे ।

इसी प्रसंग में 'कहावत' के साथ समाप्त होने वाले कविवर के अनेक पद्यों में से उदाहरण स्वरूप यहां एक पद्य प्रस्तुत किया जाता है :—

फूल अमूल दुराइ चुराइ,
लीए तौ सुगंध लुके न रहैंगे।
जो कछु आथि कै साथ सु हाथ है,
ता तिन कुं सब ही सलहैंगे।
जो कछु आपन में गुन है,
जन चातुर आतुर होइ चहैंगे।
काहे कहो धर्मसी अपने गुण,
बूठे की बात बटाऊ कहैंगे।

महोपाध्याय धर्मवर्द्धन संस्कृत के विद्वान थे। उन्होंने संस्कृत के सुभाषित श्लोकों को अनूदित करके भी अपनी रचनाओंमें यत्रतत्र स्थान दिया है। इस विषयमें उदाहरण देखिए :—

रीस भर्यो कोइ रांक, वस्त्र विण चलीयौ बाटै।
तपियो अति तावड़ौ, टालतां मुसकल टाटै।
बील रुंख तलि बेसि, टालणों मांड्यो तड़कौ।
तरु हुंती फल त्रूटि, पड़्यो सिर माहे पड़कौ।

आपदा साथि आगै लगी, जायै निरभागी जठे ।
कर्मगति देख धर्मसी कहै, कहौ नाठो छुटै कठे ॥१३॥
(छप्पय बावनी)

खल्वाटो दिवसेश्वरस्य किरणैः सन्तापिते मस्तके,
गच्छन् देशमनातपं द्रुतगतिस्तालस्य मूलं गतः ।
तत्राप्यस्य महाफलेन पतता भग्नं सशब्दं शिरः,
प्रायो गच्छति यत्र दैवहतकस्तत्रैव यान्त्यापदः ॥
(नीतिशतकम्-९९)

पंकज मांझि दुरेफ रहै, जु गहै मकरंद चितै चित ऐसौ ।
जाइ राति जु ह्वैहैं परभात, भयैं रवि दोत हसै कंज जैसो ।
जाउंगो मैं तब ही गज नै जु, मृनाल मरोरि लयौ मुहि तैसो ।
युं धर्मसीह रहै जोउ लोभित, ह्वै तिन की परि ताहिं अंदेसो ।
(धर्म बावनी—४२)

रात्रिर्गमिष्यति भविष्यति सुप्रभातं
भास्वानुदेष्यति हसिष्यति पङ्कजश्रीः ।
इत्थं विचिन्तयति कोशगते द्विरेफे
हा मूलतः कमलिनीं गज उज्जहार ॥

इस प्रकार महोपाध्याय धर्मवर्द्धन के काव्य की विविधता पर विचार करने से वे एक समर्थ एवं सरस कवि के रूप में मूर्तिमान होते हैं। उनकी रचनाएं उनके जीवन के अनुरूप हैं और साथ ही रोचक तथा शिक्षाप्रद भी कम नहीं

है। उनके काव्य के सम्बंध में उन्हीं के शब्दों में इस प्रकार यथार्थ ही कहा जा सकता है :—

एक एक तैं विसेष पंडित वसैं असेष,
रात दिन ज्ञान की ही वात कुं धरतु है।
वैदक गणक ग्रन्थ जानैं ग्रह गणन पंथ,
और ठौर के प्रवीण पाइनि परतु है।
करत कवित सार काव्य की कला अपार,
श्लोक सब लोकनि के मन कुं हरतु है।
कहै ध्रमसीह भैया पंडिताई कहुं कैसी,
दोहरा हमारे देस छोहरा करतु है।

हिंदी विभाग,
आर. एन. रुइया कालेज,
रामगढ़, शेखावाटी
दि० २६-१०-६१

मनोहर शर्मा

महोपाध्याय धर्मवर्द्धन

राजस्थानी-साहित्य की जैन विद्वानों ने बहुत बड़ी सेवा की है। १३वीं शताब्दी से अब तक सैंकड़ों जैन कवि हो गये हैं जिनकी रचनाओं का प्रमाण कई लाख श्लोकों का है। गद्य और पद्य दोनों प्रकार का विविध विषयक राजस्थानी साहित्य जैन विद्वानों के रचित है। जैन विद्वानों में प्राकृत, संस्कृत, अपभ्रंश, राजस्थानी, हिन्दी, सभी भाषाओं के विद्वान हो गये हैं। इनमें से कुछ विद्वानों ने इन सभी भाषाओं में रचनाएं की हैं कुछने केवल राजस्थानी में ही और कुछ ने राजस्थानी, हिन्दी, गुजराती भाषा में ही अपनी सारी रचनाएं की है। यहां उनमें से एक ऐसे कवि और उनकी रचनाओं का परिचय दिया जा रहा है जिन्होंने विशेषतः संस्कृत, राजस्थानी, हिन्दी इन भाषाओं में रचनाएं की हैं। वैसे उनके रचित षट-भाषामय स्तोत्र और सिन्धी भाषा के दो स्तवन भी प्राप्त हैं। अपने समय के वे महान् विद्वानों में से थे। अपने गच्छ में ही नहीं राज-दरबारों में भी इन्हें अच्छा सन्मान प्राप्त था। उन कविश्री का नाम है 'धर्मवर्द्धन'।

जन्म

कविवर धर्मवर्द्धन का मूल नाम धर्मसी था जो उनकी कई रचनाओं में भी प्रयुक्त है। जैनमुनि-दीक्षा के

अनंतर उनका नाम धर्मवर्द्धन रखा गया था। कवि के जन्मस्थान, तिथि, वंश, माता-पिता, आदि के संबंध में विशेष जानकारी तो प्राप्त नहीं होती पर हमारे संग्रह के एक पत्र में पं० धर्मसी के परिवार की विगत लिखा है उसमें उनका गोत्र ओसवाल-वंशीय—आंचलिया लिखा है। यद्यपि पं० धर्मसी नामक और भी कई यति-मुनि हो गये हैं, इसलिए उस पत्र में उल्लिखित धर्मसी आप ही हैं या अन्य कोई, यह निश्चयपूर्वक नहीं कहा जा सकता। आपकी भाषा राजस्थानी प्रधान है और दीक्षा भी मारवाड़ राज्यान्तर्गत साचोर में हुई थी, इसलिए आपका जन्मस्थान राजस्थान और विशेषतः मारवाड़ का ही कोई ग्राम होना चाहिये। धर्मसी या धर्मसिंह नामकरण उनके उच्चकुल का द्योतक है। उस समय ओसवाल जाति आदि में ऐसे और भी कई व्यक्तियों के नाम पाये जाते हैं। आपके जन्म की निश्चित तिथि तो ज्ञात नहीं हो सकी पर आपकी सर्व प्रथम रचना 'श्रेणिक चौपाई' संवत १७१९ चंदरीपुर [1] में रची गई थी और उसकी प्रशस्ति में आपने अपने को १९ वर्ष का बतलाया है। इससे आपका जन्म संवत् १७०० में हुआ प्रतीत होता है। यथा—

लघुवय में उगणीसवे वर्षे, कीधी जोड़ कहावे
आयो सरस वचन को इण में, सो सतगुरु सुपसाय रे ॥७॥

---

[1] सतरसै उगणी से वरसे 'चंदेरीपुर चावै।'

जैन मुनि-दीक्षा

आपकी रचनाओं में संवतोल्लेख वाली 'श्रेणिक चौपाई' संवत् १७१६ में रचित होने से आपकी शिक्षा दीक्षा लघुवय में ही हो चुकी थी; निश्चित होता है। खरतर गच्छ के आचार्य जिनरत्नसूरिजी के पट्टधर जिनचन्द्रसूरिजी ने जिन जिन मुनियों को दीक्षा दी थी, उस दीक्षा नंदी की नामावली के अनुसार आपकी दीक्षा संवत् १७१३ चैत्र बदी ६ साचोर में जिनचन्द्रसूरिजी के हाथ से हुई थी। उस समय आपका नाम परिवर्तन करके धर्मवर्द्धन रखा गया था और विजयहर्ष जी का शिष्य बनाया गया था।

गुरु-परम्परा

आपने अपनी रचनाओं की प्रशस्ति में जो गुरु-परम्परा के नाम दिये हैं, उसके अनुसार आप जिनभद्रसूरि शाखा के उपाध्याय साधुकीर्ति के शिष्य साधुसुन्दर शिष्य वाचक विमलकीर्ति के शिष्य विमलचन्द्र के शिष्य विजयहर्ष के शिष्य थे। यथा—

गरवो श्री खरतर गच्छ गाजे, श्री जिनचन्द्रसूरि राजे जी।
साखा जिनभद्रसूरि सहाजे, दौलति चढ़ी दिवाजे जी।
पाठक प्रवर प्रगट पुन्यायी, साधुकीरति सवाई जी।
साधुसुन्दर उवझाय सदाई, विद्या जस वसाई जी।
वाचक विमलकीरति मतिमंता, विमलचन्द्र दुतिवंता जी।

विजयहर्ष जसु नाम बधंतां, विजयहर्ष गुण-व्यापी जी।
सद्गुर वचन तणे अनुसारी, धर्म सीख मुनि धारी जी।
कहे धर्मवर्द्धन सुखकारी, चउपइ ए सुविचारी जी।

(अमरसेन वयरसेन चौपाई, संवत् १७२४, सरसा)

इस प्रशस्ति में उल्लिखित जिनचन्द्रसूरि तो आपके दीक्षा-गुरू थे और उस समय के गच्छनायक थे। जिनभद्रसूरि सुप्रसिद्ध जैसलमेर ज्ञानभंडार आदि के स्थापक हैं जिन्हें संवत् १४७५ में आंचार्य पद प्राप्त हुआ था और १५१४ में जिनका स्वर्गवास हुआ। उनकी परम्परा के उपाध्याय साधुकीर्ति से धर्मवर्द्धनजी ने अपनी परम्परा जोड़ी है। साधुकीर्ति का समय संवत् १६११से १६४२ तक का है। ये बहुत अच्छे विद्वान थे। हमारे सम्पादित "ऐतिहासिक जैन काव्य संग्रह" में आपके जीवन से संबंधित ६ रचनाएं प्रकाशित हुई हैं। उनके अनुसार "ओशवाल वंशीय सचिंती गोत्र के शाह वस्तिग की पत्नी खेमलदे के आप पुत्र और दयाकलशजी के शिष्य अमरमाणिक्यजी के सुशिष्य थे। आप प्रकाण्ड विद्वान थे। संवत् १६२५ मि० व० १२ आगरे में अकबरकी सभा में तपागच्छीय बुद्धिसागरजी को पोषह की चर्चा में निरुत्तर किया था और विद्वानों ने आपकी बड़ी प्रशंसा की थी, संस्कृत में आपका भाषण बड़ा मनोहर होता था।

संवत १६३२ माधव (वैशाख) शुक्ला १५ को जिनचंद्रसूरि जी ने आपको उपाध्याय पद प्रदान किया था और अनेक स्थानों में विहार कर अनेक भव्यात्माओं को आपने सन्मार्ग-गामी बनाया था।

संवत् १६४६ में आपका शुभागमन जालोर हुआ, वहां माह कृष्ण-पक्ष में आयुष्य की अल्पता को ज्ञात कर अनशन उच्चारणपूर्वक आराधनाकी और चतुर्दशी को स्वर्ग सिधारे। आपके पुनीत गुणों की स्मृति में वहां स्तूप निर्माण कराया गया, उसे अनेकानेक जन समुदाय वन्दन करता है। साधु-कीर्तिजी अमरमाणिक्य के शिष्य थे, जिनका समय संवत् १६०० के करीब का है अतः जिनभद्रसूरि और अमर—माणिक्यजी के बीच की परम्परा में तीन-चार नाम और होने चाहिये। साधुकीर्ति के आषाढ़भूति प्रबंध के अनुसार वा० मतिवर्द्धन शिष्य मेरुतिलक शिष्य दयाकलश के शिष्य अमरमाणिक्य थे। पर साधुकीर्तिजी बहुत प्रसिद्ध विद्वान हुए इसलिए धर्मवर्द्धनजी ने अपनी गुरु परम्परा के वे बीच के नाम नहीं देकर साधुकीर्तिजी से ही अपनी परम्परा मिला दी है। साधुकीर्तिजी की संस्कृत और राजस्थानी की कई रचनाएं मिलती हैं, उनमें से प्रधान रचनाओं की नामावली नीचे दी जा रही है।

(१) सप्तस्मरण बालावबोध-संवत् १६११ दीवाली, बीकानेर के मंत्री संग्रामसिंह के आग्रह से रचित।

(२) सतरेभेदी पूजा—सं० १६१८ श्रावणसुदि ५ पाटण ।

(३) संघपट्टकवृत्ति—सं० १६१६ ।

(४) कायस्थिति बालावबोध सं० १६२३ महिम ।

(५) आषाढ़भूति प्रबंध—संवत् १६२४ विजयादशमी, दिल्ली, श्रीमाल वंश पापड़ गोत्र साह तेजपाल कारित ।

(६) मौन एकादशी स्तवन—संवत् १६३५ जेठसुदी ३, अलवर ।

(७) नमि-राजर्षि चौपाई—संवत् १६३६ माघ सुदी ५, नागौर ।

(८) शीतल जिन स्तवन—संवत् १६३८, अमरसर ।

(९) भक्तामर स्तोत्रावचूरि ।

(१०) दोषावहार बालावबोध ।

(११) विशेष नाममाला ।

(१२) सत्त्वरथ वेलि ।

(१३) षट् कर्मग्रन्थ टब्बा ।

(१४) गुणस्थान विचार चौपई ।

(१५) स्थूलिभद्र रास ।

(१६) अल्पाबहुत्त्व स्तवन आदि ।

साधुकीर्तिजीके गुरुभ्राता वाचक कनकसोम भी अच्छे विद्वान थे, जिनकी संवत १६५५ तक की २१ रचनाएं प्राप्त हुई हैं । राजस्थानी भाषा के आप सुकवि थे ।

साधुकीर्तिजी के शिष्य साधुसुन्दर भी बहुत अच्छे व्याकरणी थे। उनके रचित धातुरत्नाकर, क्रियाकल्पलता टीका (सं० १६८०, दीवाली) उक्तिरत्नाकर, और पार्श्व स्तुति (सं १६८३), शंतिनाथ स्तुति वृत्ति प्राप्त हैं। साधुसुन्दर के शिष्य उदयकीर्ति रचित पदव्यवस्था टीका (सं १६८१) और पंचमी स्तोत्र उपलब्ध हैं।

साधुकीर्तिजी के अन्य शिष्य विमलतिलक के शिष्य विमलकीर्ति भी अच्छे विद्वान् थे। उनके रचित चन्द्रदूत काव्य (सं० १६८१), आवश्यक बालावबोध, जीवविचार बा०, ज यतिहुअण बा०, पक्खीसूत्र बा०, दशवैकालिक बा०, प्रतिक्रमण समाचारी टब्बा, गणधर सार्द्धशतक टब्बा, षष्टिशतक बा०, उपदेशमाला बा०, ईकीसठाणा टब्बा, एव यशोधर रास, कल्पसूत्र समाचारी वृत्ति, और कई स्तवन, सज्झाय आदि प्राप्त हैं। इनके सतीर्थ्य विजयकीर्ति के शिष्य विमलरत्न रचित वीरचरित्र बालावबोध (संवत् १७०२ पोष सुदी १० साचोर) प्राप्त है। इन्हीं विमलकीर्ति के शिष्य विजयहर्ष हुए और उनके शिष्य धर्मवर्द्धन। विमलरत्न रचित विमलकीर्ति गुरू गीत के अनुसार विमलकीर्ति हुँबड़ गोत्रिय श्रीचन्द शाह की धर्मपत्नी गवरा की कुक्षि से जन्मे थे। संवत् १६५४ माघ सुदी ७ को उपाध्याय साधुसुन्दरजी ने आपको दीक्षित किया। गच्छनायक श्रीजिनराजसूरि ने इन्हें वाचक-पद प्रदान किया। संवत् १६९२ में आपने

मुलतान में चौमासा किया और सिन्धु देशके किरहोर नगर में अनसन आराधनापूर्वक स्वर्ग सिधारे।

इस प्रकार हम देखते है कि कविवर धर्मवर्द्धनजी की गुरुपरम्परा में कई विद्वान् हो गये हैं और उस विद्वत् परम्परा में आपकी शिक्षा-दीक्षा होने से आपकी प्रतिभा भी चमक उठी और १६ वर्ष जैसी छोटी आयु में श्रेणिक रास की रचना करके आपने अपनी काव्य-प्रतिभा का परिचय दिया।

धर्मवर्द्धनजी ने १३ वर्ष की अल्पायु में ही जैन-दीक्षा ले ली थी इसलिए घर में रहते हुए तो साधारण अध्ययन ही हुआ होगा। दीक्षान्तर अपने गुरू श्रीविजयहर्षजी के पास थोड़े ही वर्षों में आपने व्याकरण, काव्य, न्याय, जैनागम, आदि में प्रवीणता प्राप्त करली। फिर अनेक ग्राम नगरों में विहार करके धर्म-प्रचार के साथ साथ अनुभव को बढ़ाया। आपका विहार बीकानेर, जैसलमेर, जोधपुर, चन्देरी, सरसा, देरावर, रिणी, लौद्रवा, बाड़मेर, सूरत, पाटण, खम्भात, अंजार, बेनातट, नवहर, फलौदी, मेड़ता, पाली, सोजत, उदयपुर, रतलाम, साचोर, राड़द्रह, घाटोदी, गारबदेसर, देशनोक, अहमदाबाद, पालीताणा, आदि अनेक ग्राम-नगरों में हुआ। शत्रुंजय, आबू, केसरियाजी, लोद्रवा जैसलमेर, संखेश्वर, गोड़ी-पार्श्वनाथ आदि अनेक जैन तीर्थों की आपने यात्रा की।

आपकी विद्वता की धवलकीर्ति कपूर के सुवास की भांति शीघ्र ही चारों ओर फैल गई। फलतः गच्छनायक जिनचन्द्र–सूरिजी ने सं० १७४० में इन्हें उपाध्याय पद से अलंकृत किया और अपने पास में ही इन्हें, रखा। जिनचन्द्रसूरिजी के स्वर्गवास के बाद जिनसुखसूरि गच्छनायक हुए उन्हें आपने विद्याध्ययन भी करवाया था और उनके साथ ही जब तक वे विद्यमान रहे, आप विहार करते रहे। सं० १७७९ में जिनसुखसूरिजी का स्वर्गवास रिणी में हुआ, उनके पट्टधर जिनभक्तिसूरि हुए। उन्हें भी विद्याध्ययन आपने करवाया था। उस समय जिनभक्तिसूरिजी केवल १० वर्ष के ही थे इसलिए गच्छ व्यवस्था भी विशेषतः आपकी देख रेख में, होती रही।

राज्य सम्मान

जैन आचार्यों और विद्वान् मुनियों का तत्कालीन राजाओं, मंत्रियों आदि पर विशेष प्रभाव रहा है। बीकानेर के महाराजा अनूपसिंह, सुजानसिंह, जैसलमेर के रावल अमरसिंह, जोधपुरनरेश जसवंतसिंह, सुप्रसिद्ध दुर्गादास राठोड़ और वीर शिवाजी संबंधी आपके पद्य भी मिले हैं। बीकानेर के महाराजा सुजानसिंहजी ने संवत् १७७५ के माघ सुदी में खरतर गच्छ के आचार्य जिनसुखसूरिजी को पत्र दिया था जो हमारे संग्रह में है- उसमें धर्मसिंहजी की प्रशंसा करते हुए इस प्रकार लिखा है :—
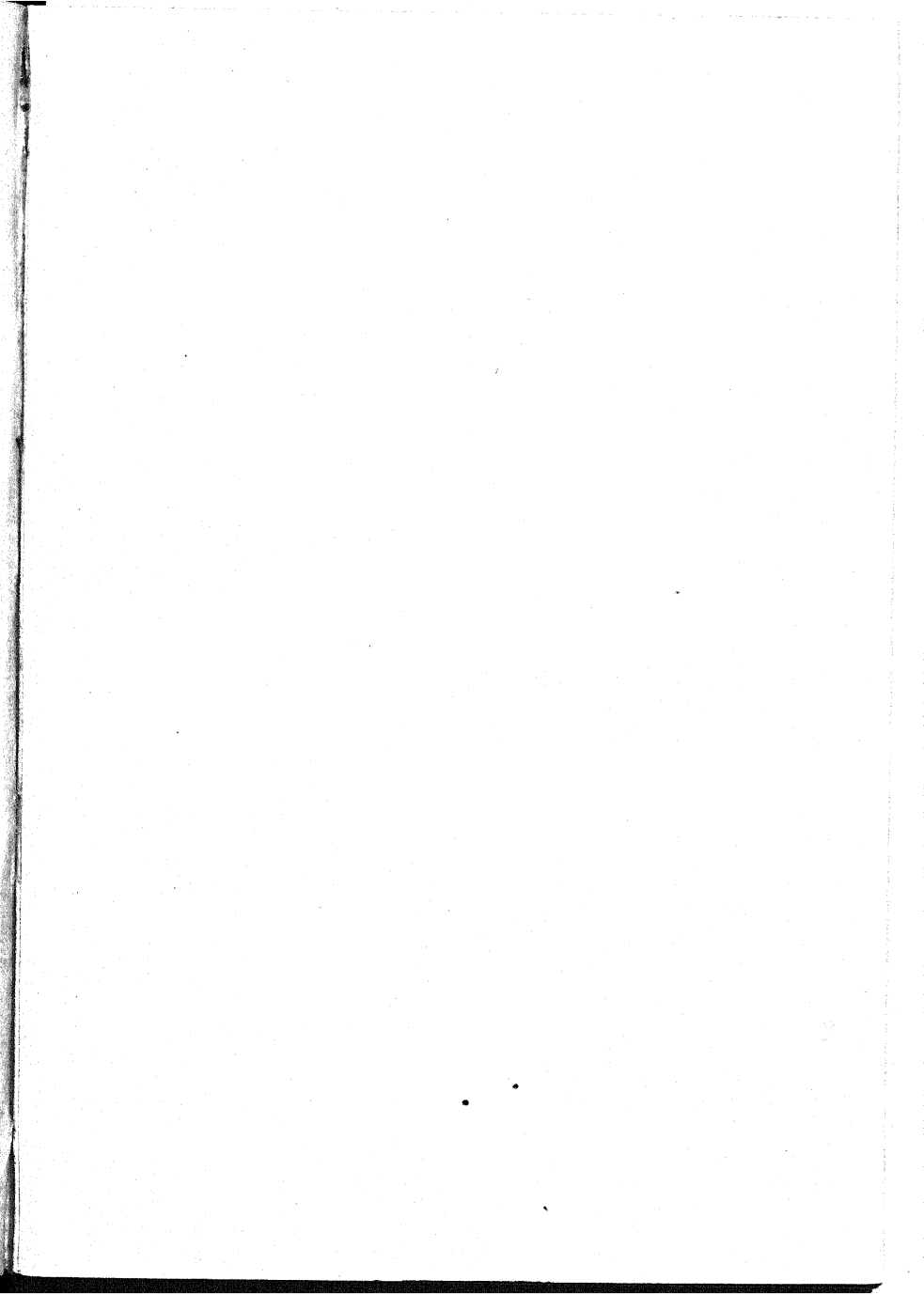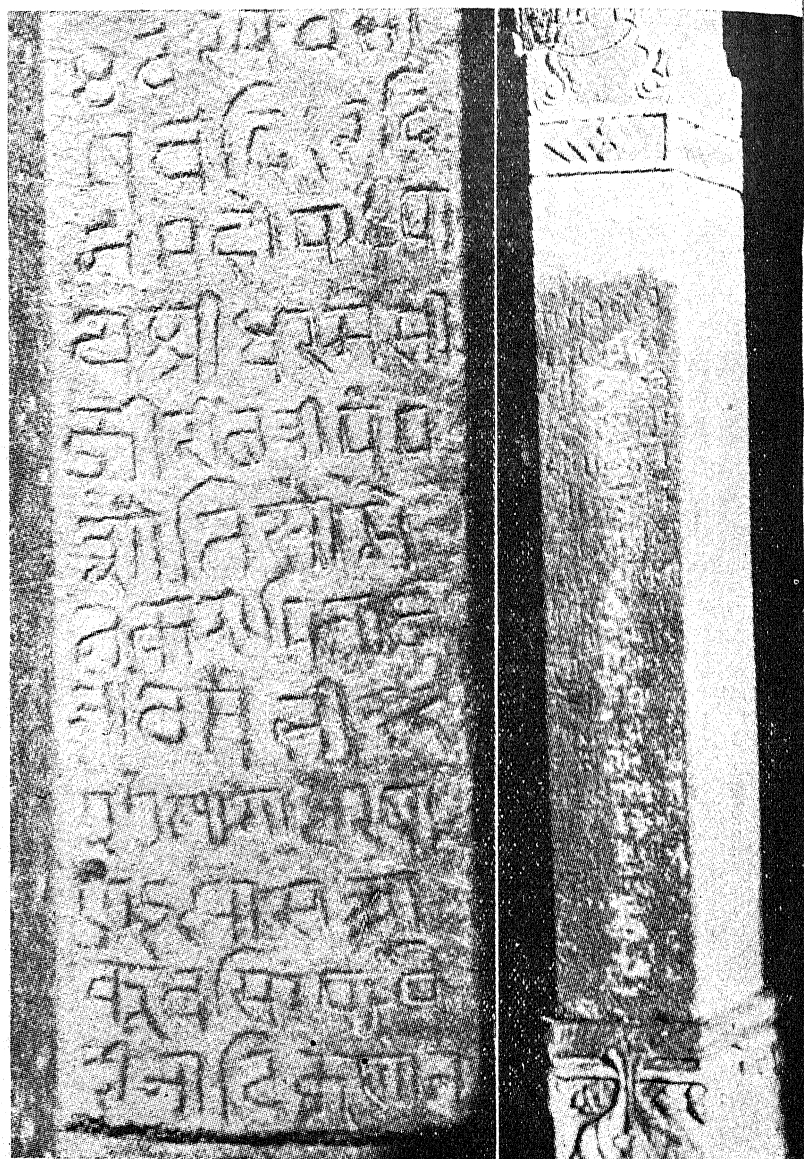
स्मारक स्तंभ, लेख रेलदादाजी, बीकानेर

सब गुण ज्ञान विशेष विराजै, कविगण उपरि घन ज्यूं गाजै।
धर्मसिंह धरणीतल मांहि, पंडित योग्य प्रणती दल तांहि ॥

बीकानेर के तत्कालीन मंत्री नाजर आणंदराम जो कि स्वयं अच्छे कवि और विद्वान थे, आपके प्रति बड़ी श्रद्धा रखते थे। कविवर ने उनकी प्रशंसा में एक सवैया भी रचा है और उनकी दी हुई कि समस्या की पूर्ति भी की है। वह सवैया और समस्यापूर्ति भी इसी ग्रन्थ में आगे छपी है। नाजर आणंदराम रचित 'भगवत् गीता भाषा', गीता महात्म्य' 'अज्ञानबोधिनी भाषा-टीका' आदि ग्रन्थ उपलब्ध हैं।

स्वर्गवास :—

सम्वत् १७७९ में जिनसुखसुरिजी का स्वर्गवास और जिनभक्तिसूरिजी की पदस्थापना रिणी में हुई उस समय तो महोपाध्याय धर्मवर्द्धनजी वहीं थे। उसके बाद सम्भवतः बीकानेर पधारे और सम्वत् १७८३—८४ में आपका स्वर्गवास बीकानेर में हुआ। बीकानेर के रेलदादाजी (गुरू-मन्दिर) में एक छतड़ी बनी हुई है, जिसके अनुसार सं० १७८४ के वैशाख वदि १३ महोपाध्याय धर्म-वर्द्धन (धर्मसीजी) की इस छत्री का निर्माण उनके प्रशिष्य शांतिसोम ने करवाया था। छतड़ी के स्तम्भों पर निम्नोक्त दो लेख उत्कीर्णित हैं।

[१] १७८४ वर्षे वैशाख वदि १३ दिने महोपाध्याय श्री धरमसीजी री छतड़ी पं०शांतिसोमेन कारापिता छत्री छःथंभी

सदा २७ लाग। पाखाण इलाख श्री कु सिरपाव दीना वि जणाने।

[२] सं० १७८४ वर्षे मि० वैशाख बदि १३ दिने महो–पाध्याय श्री धर्मवर्द्धनजी री छतड़ी कारापिता शिष्य पं० साम···

शिष्य-परम्परा

कविवर धर्मवर्द्धन के गुरूभ्राता विजयवर्द्धन थे, जिनके रचित कई स्तवन उपलब्ध हैं। आप अधिकांश अपने गुरू विजयहर्षजी के साथ रहा करते थे। इनके शिष्य ज्ञानतिलक व्याकरण और काव्य शास्त्र के अच्छे ज्ञाता थे। इनके रचित 'सिद्धान्तचन्द्रिका वृत्ति' 'संस्कृत विज्ञप्ति लेखद्वय' और कई अष्टक आदि प्राप्त हैं। इनमें १०८ श्लोक का एक 'विज्ञप्ति लेख' मुनि जिनविजयजी सम्पादित 'विज्ञप्ति लेख संग्रह' में हमने प्रकाशित करवाया है। इसमें धर्मवर्द्धनजी सम्बन्धी निम्नोक्त श्लोक उल्लेखनीय है।

पठिता सद्विद्यानां सन्निधिरिव सन्निधौ मुनीशानाम्।
श्री धर्मवर्द्धनगणिः सत्कविरिव भासते स्वभाषा च ॥३४

अलालाटिका धाटिका पण्डितानां,
निराकारव श्चारवो ऽमीरवश्च।
धियो गर्द्धना धर्मतो वर्द्धनाद्या,
विभान्तूपकण्ठे सतां पाठका हि ॥१०१॥
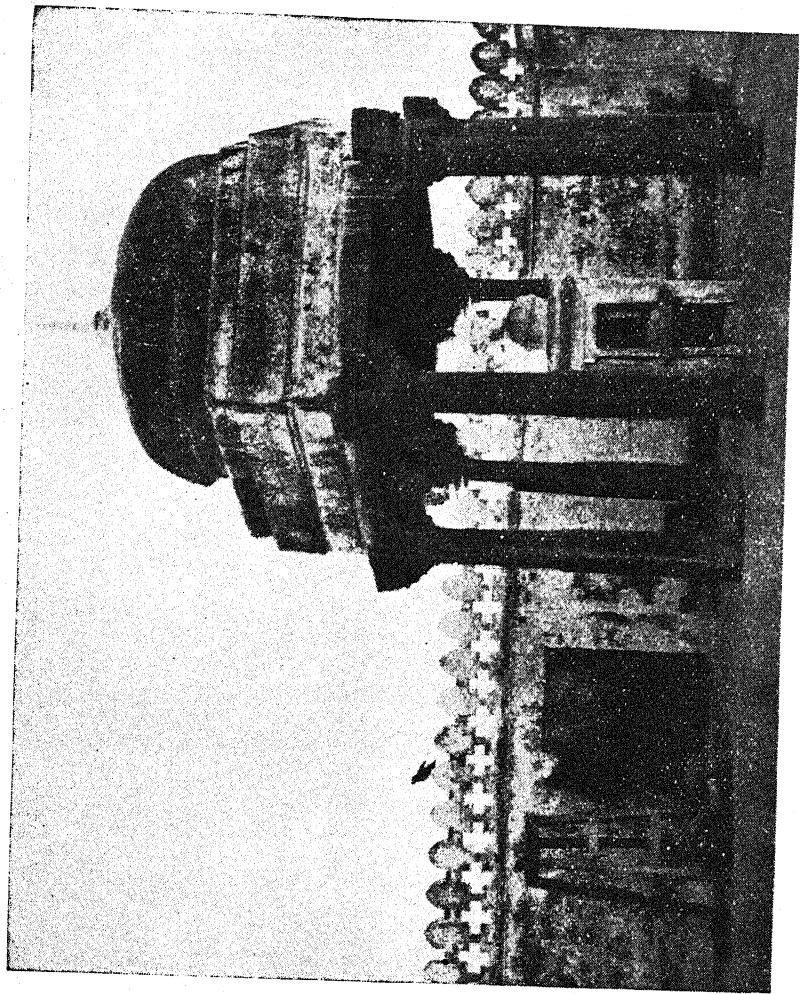
धर्मवर्द्धनजी का स्मारक स्तूप, रेलदादाजी, बीकानेर

भवत्पूर्वजैर्गन्धहस्तित्व मुक्तं,
तदैव क्रमादागतं पूर्वजेषु ।
सदा भावयन्तोऽधुनाविःसभावं,
भवत्सनिधि प्राप्त शोभाविशेषात् ॥१०२॥

पाठकाः सकलशास्त्र पाठकाः शब्दशास्त्रमुरूमध्य जीगपन् ।
ज्ञानतस्तिलकनामकं यकं पाणिनीय मत दर्पणार्पणम् ॥१०३॥

धर्मवर्द्धन के शिष्य कान्हजी जिनका दीक्षानाम कीर्ति-सुन्दर था। वह भी अच्छे कवि थे। इनके रचित निम्नोक्त ६ ग्रन्थ प्राप्त हैं।

[१] अवन्तिसुकमाल चौढालिया—सं० १७५७, मेड़ता।
[२] मांकण रास सं० १७५७, मेड़ता।
[३] अभयकुमारादि पांच साधु रास—सं० १७५६, जयतारण।
[४] ज्ञान छत्तीसी—सं० १७५६ श्रावण २, जयतारण।
[५] कौतुक बत्तीसी—सं० १७६१ आषाढ।
[६] कल्पसूत्र-कल्पसुबोधिका वृत्ति—सं० १७६१ अक्षय-तृतीया (पत्र १६४ यति बालचन्दजी संग्रह-चित्तोड़।
[७] चौबोली चौपाई—सं० १७६२, थानलेनगर।

१ इनका मूल नाम नाथा था, जैन दीक्षा सं० १७२६ वैशाख वदी ११ को हुई।

[८] वाग्विलास कथा संग्रह ।

[९] फलौदी पार्श्वनाथ छंद— गाथा १२१ ।

इनमें से मांकण रास 'मरु भारती' में और वाग्वि-लास कथा संग्रह 'वरदा' में प्रकाशित किया जा चुका है ।

कीर्तिसुन्दर के अतिरिक्त धर्मवर्द्धनजी के जयसुन्दर ज्ञान-वल्लभ (गङ्गाराम) आदि और भी कई शिष्य थे । कीर्तिसुन्दर के शिष्य शान्तिसोम और सभारत्न की लिखी हुई कई प्रतियां बीकानेर बृहद्ज्ञानभंडार में हैं । १९ वीं शताब्दी तक धर्म-वर्द्धनजी की शिष्य-परम्परा विद्यमान थी ।

कविवर के प्रकाशित ग्रन्थ

प्रस्तुत ग्रन्थ में आपकी जितनी भी लघु रचनाएं संस्कृत, राजस्थानी हिन्दी में प्राप्त हुईं, उन्हें प्रकाशित किया जा रहा है । उनकी नामावली अनुक्रमणिका में दी हुई है इसलिए यहां उसका उल्लेख नहीं किया जा रहा है । यहां केवल उन्हीं रचनाओं का परिचय दिया जा रहा है, जो इस ग्रन्थ के बड़े हो जाने के कारण इसमें सम्मिलित नहीं की जा सकी ।

(१) श्रेणिक चौपई

राजगृह के महाराजा श्रेणिक जो भगवान् महावीर के भक्त थे, उनका चरित्र इस ग्रन्थ में दिया गया है । कथा प्रसंग बड़ा रोचक है साथ ही बुद्धिवर्द्धक भी । कवि ने ३२ ढाल

और ७३१ गाथाओं में इसे सं० १७१६ चंदेरीपुर में बनाया। जैसा कि पहले कहा जा चुका है यह कवि की सर्व प्रथम रचना है, जो केवल १६ वर्ष की आयु में बनाई गई थी। इसकी प्रतियाँ बीकानेर के जिनचारित्रसूरि एवं उपाध्याय जयचंदजी आदि के संग्रह में है।

(२) अमरसेन वयरसेन चौपई

सं० १७२४, सरसा में इस राजस्थानी चरित्र काव्य की रचना हुई है। इसकी कई प्रतियां बीकानेर के ज्ञानभण्डारों में है।

(३) सुरसुन्दरी रास

कवि ने इस रास में नवकार मंत्र और शील के महात्म्य संबन्धी अमरकुमार सुरसुन्दरी की कथा चार-खण्डों में गुंफित की है। प्रथम खण्ड में आठ, द्वितीय में ग्यारह तृतीय में आठ, चतुर्थ में बारह ढ़ालें हैं। कुल ६३२ गाथाएं हैं। श्लोक संख्या ६०० है। अन्य प्रति में गाथाओं की संख्या ६१६ भी बतलाई गई है। इस कथा का मूल आधार 'शीलतरंगिणी' नामक ग्रन्थ का कवि ने उल्लेख किया है। सं० १७३६ श्रावण सुदी १५ बेनातटपुर (बिलाड़ा) में इसकी रचना हुई है।

[४] परमात्म-प्रकाश हिन्दी टीका

खण्डेलवाल रेखजी के पुत्र जीवराजके पुत्रके लिये दिगम्बर

'परमात्म प्रकाश' की हिन्दी भाषा टीका सं० १७६२ में कवि ने बनाई है। इसकी ३५ पत्रों की प्रति अजमेर के दिगम्बर भट्टारक भण्डार में है।

[५] वीरभक्तामर स्वोपज्ञ वृत्ति

प्रस्तुत ग्रन्थ में वीर–भक्तामर मूल छपा है। इससे पहले भी यह संस्कृत भक्तामर का पादपूर्ति काव्य आगमोदय समिति प्रकाशित काव्य संग्रह प्रथम भागमें छप चुका है। पर इसकी स्वोपग्यवृत्ति अभी अप्रकाशित है जिसे भीनासर के यति सुमेरमलजी के संग्रह में हमने कई वर्ष पूर्व देखी थी।

कवि धर्मवर्द्धन की रचनाओं से मेरा परिचय बाल्यकाल से है। उनके रचित "जिनकुशलसूरि का सवैया" में जब ८–१० वर्ष का था तभी सुनने को मिला था फिर इनके रचित कई स्तवन और सझाय मेरे ज्येष्ट भ्राता स्वर्गीय अभय-राजजी की स्मृति में मेरे पिताजी के प्रकाशित 'अभयरत्नसार' में सन्-१९२७ में प्रकाशित हुए तबसे कवि का परिचय और भी बढ़ा और सं० १९८६ में जब कविवर समयसुन्दर की रचनाओं की खोज करने के लिये बीकानेर के बड़े ज्ञानभण्डार आदि की हस्तलिखित प्रतियां देखनी प्रारम्भ की तो 'महिमा-भक्ति भण्डार' में ९६ पत्रों की एक ऐसी प्रति मिली, जिसमें कवि की समस्त छोटी छोटी रचनाओं का संग्रह था। इसकी प्रति की मैंने राजस्थानी रचनाओं की प्रेसकापी तो स्वयं उसी समय तैयार करली और संस्कृत स्तोत्रादि की प्रेस कापी

पण्डित शोभाचन्दजी भारिल्ल से करवा ली जो उस समय बीकानेर के सेठिया विद्यालय में काम करते थे। कविवर की जीवनी और अन्य रचनाओं की यथासम्भव खोज करके 'राजस्थानी साहित्य और कविवर धर्मवर्द्धन' नामक एक विस्तृत लेख तैयार किया जो कलकत्ते की राजस्थानरिसर्च सोसाइटी के त्रैमासिक शोधपत्र में 'राजस्थान के वर्ष २ अङ्क संख्या २ के २२ पृष्ठों में सं० १९९३ के भाद्रपद के अङ्क में प्रकाशित हुआ। उस लेख में मैंने लिखा था "आपके जीवनचरित्र और कृतियों की खोज लगभग ७-८ वर्षों से चालू है। जिसके फल-स्वरूप बहुत सी सामग्री संगृहीत की गई है। और उसको आधार पर विस्तृत जीवनचरित्र, आपकी लघुकृतियों के साथ प्रकाशित करने का विचार है।" अपने ३०—३२ वर्ष पहले के किये हुए प्रयास को आज सफल हुआ देख कर मुझे अत्यन्त प्रसन्नता है। इस ग्रन्थ में कविवर की समस्त लघु रचनाओं को प्रकाशित किया जा रहा है। पांच बड़ी रच-नाएं जो इस ग्रन्थ के बड़े हो जाने के कारण इसमें सम्मिलित नहीं की जा सकी, उनका विवरण ऊपर दिया जा चुका है। कवि का चित्र तो नहीं प्राप्त हो सका अतः उनके हस्ताक्षरों की एवं स्मारक स्तूप छत्री प्रतिकृति देकर सन्तोष करना पड़ता है।

इस ग्रन्थ के प्रकाशन में मुझे मेरे भ्रातृपुत्र श्री भँवरलाल नाहटा का पूर्ण सहयोग प्राप्त हुआ है, 'वरदा' के यशस्वी सम्पादक श्री मनोहर शर्मा ने इसकी भूमिका लिखने की कृपा की हैं,इसलिये मैं उनका अभारी हूं। ग्रन्थ में कठिन शब्दों का कोष देने का विचार था, पर ग्रन्थ काफी बड़ा हो चुका है और उसको तैयार करने में कुछ समय लगता जिससे ग्रन्थ प्रकाशन में और भी विलम्ब होता, इसलिये वह नहीं दिया जा सका है।

विनीत :—
अगरचंद्र नाहटा.

अनुक्रमणिका

—०—

संस्कृत स्तोत्रादि संग्रह

समस्या पदानि

कविवर धर्मवर्द्धन की स्वहस्त लिखित संग्रह प्रति का आदिपत्र ।

कविवर धर्मवर्द्धन ग्रन्थावली

धर्म बावनी

ॐकार महिमा

सवैया तेवीसा

ॐकार उदार अगम्म अपार, संसार में सार पदारथ नामी।
सिद्ध समृद्ध सरूप अनूप, भयो सबही सिरि भूप सुधामी ॥
मंत्र में यंत्र में ग्रन्थ के पंथ में, जाकुं कियो धुरि अंतरयामी।
पंच ही इष्ट वसैं परमिष्ट, सदा धर्मसी करै ताही सलामी ॥१॥
नमो निसदीस नमाइ कै सीस, जपौ जगदीस सही सुख दाता।
जाकी जगत में कीरति जागत, भागति हैं सब ईति असाता ॥
इन्द नरिंद दिणिन्द फुणिन्द, नमाए हैं वृन्द आणंद विधाता।
धोरी धरम को धीर धरा धर, ध्यान धरे धर्मसी गुण ध्याता॥२॥

गुरु महिमा

महिमा तिनकी महिमें महिमें, जिन दीनो महा इक ज्ञान नगीनो।
दूर भग्यो भ्रम सौ तम देखत, पूर जग्यो परकास नवीनो।
देत ही देत ही दूनो बधैं, अरु खायो ही खूटत नांहि खजीनों।
एसो पसाउ कीयो गुरुराउ, तिन्है धर्मसी पद पंकज लीनो ॥३॥

सर्व गुरु अक्षर सरस्वतीकी स्तुति

सवैया इकतीसा

सिद्धा रूपी साची देवा, सारै जीकी नीकी सेवा ;
रागैं आए लागैं पाए, जागे मोटी माई है ।
चंगी रंगी वीणा वावै, रागैं सारैं रागैं गावैं ;
हाव भाव सोभा पावें, ज्ञाता जाकुं गाई हैं ।
हंसी कैंसी चाली चालैं, पूजी वंदी पीड़ा टालैं ;
लीला सेती लालैं पालैं, शुद्ध बुद्धिदाई है ।
सो हैं वांनी नीकी वानी, जाकुं ज्ञानी प्राणी जानी ;
ऐसी माता सातादानी, धर्मसीह ध्याई है ॥४॥

सर्व लघु अक्षर साधुकी स्तुति

भमरा की चालि

धरत धरम मग, हरत दुरित रग
करत सुकृत मति हरत भरमसी ।
गहत अमल गुन, दहत मदन वन
रहत नगन तन सहत गरम सी ।
कहत कथन सन बहत अमल मन
तहत करन गण महति परमसी ।
रमत अमित हित सुमति जुगते जति
चरन कमल नित नमत धरमसी ॥५॥

मैत्रीया प्रीति

सवैया तेवीसा

अपने गुण दूध दीये जल कुं, तिनकी जल नैं फुनि प्रीतिफलाई।
दूध के दाह कुं दूर कराइ, तहां जल आपनी देह जलाई।
नीर विछोह भी खीर सहै नहीं, ऊफणि आवत हैं अकुलाई।
सैंन मिल्यैं फुनि चैंन लह्यो तिण, ऐसी धर्म्मसी प्रीति भलाई॥६॥
आपही जो गुन की गति जानत, सोई गुनीनि कौ संग गहैं हैं।
जो धर्मसि गुण भेद अवेद, गुमार कहा सु गुनी कुं चहैं हैं।
दूर सुं दौर्यों ही आवें दुरेफ, जहां कछु वारिज वास वहैं हैं।
एक निवास पैं पास न आवत, मैंडकु कीच कैं बीचि रहैं हैं॥७॥
इणै भव आइ, जिणै धन पाइ, रख्यो है लुकाइ, भख्यो नहीदीनौं।
हाइ धंधै ही मैं धाइ रह्यो नित, काइ नही कृति लोभ सुं लीनौं।
कोल्हु के बैल ज्युं कोइ नहीं सुख, भूरि भर्यो दुख चित सुचीनो।
जेण धर्मसी धर्म धर्यो न, कहा तिण मानस होइ कैं कीनो॥८॥
ईइति हैं जिण कुं सबही जन, आस धरैं सब पास रहैया।
पंडित आइ प्रणाम करैं, फुनि सेवत है सबनै समझैया।
आइ गरज्ज अरज करै, जु धरै सिरि आण भलै भले भैया।
साच की वाच यहैं धर्मसी जग, सोइ बड़ौ जाकी गांठ रुपैया॥९॥
उमंगि उमंगि कर्यों धर्म कारिज, आरिज खेत में वित्त ही वायौ।
देव की सेव सजी नितमेव, धर्यो गुरु को उपदेस सवायौ।
आचरतैं उपगार अपार, जिणै जश सों दिगमंडल छायो।
ऐसी क्रतूत करी धर्मसीह, भलैं तिण मानव को भव पायो॥१०॥

सवैया इकतीसा

ऊपर सुं मीठे मुख अंतर सुं राखत रोष,
देखन के सोभादार भादुं कैसी चीभ हैं।
गुनियनि के गुन ठारि, औगुन अधिक धारि,
जौलुं न कहत कहुं तौलुं मन डीभ हैं।
तजि के भी प्राण आप और सुं करै संताप,
ऐसो खलको सुभाउ मच्छिका सनीभ हैं।
धर्मसी कहत यार मंडै जिण वासुं प्यार,
मानस के रूप मानुं दूसरो दुजीभ हैं ॥११॥

सवैया तेवीसा

ऋद्धि समृद्धि रहैं इक राजी सुं, एक करै है ह हांजी हांजी।
एक सदा पकवान अरोगत, एक न पावत भूको (खो) भी भाजी।
एक कूं दावतवाजी सदा, अरु एक फिरैं हैं पईसै के प्याजी।
युं धर्मसीह प्रगट्ट प्रगट्ट ही देखो, बे देखो बखत की वाजी ।१२।
रीस सुं वीस उदेग वधै, अरु रीस सुं सीस फटै नितही को।
रीस सुं मित भी दांत कुं पीसत, आवत मांनु खईस कही को।
रीस सुं दीखत दुर्गति के दुख, चीस करंत तहां दिन ही को।
युं धर्मसीह कहैं निसदीह, करै नहीं रीस सोइ नर नीको ॥१३॥

सवैया इकतीसा

लीयौ नहीं कछु लाज, संचे पाप ही कौ साज,
नरक नगर काज, गैंल रूप गणिका।
अंतर की बात ओर, ठगिवैं की ठकैं ठौर,

नित की करै निहोर, जाहि ताहि जनका।
जूअनि को जालौ अंग कोढ़ी महाकालौ रंग;
ताही सुं बनावै संग, धारैं लोभ धनका।
ऐसो कहे धर्मसीह, रहैं वासुं राति दीह;
सो तौ भैया चाक हुं, वड़ा रोझ वन का ॥ १४ ॥

सवैया तेवीसा

लीजत ही जल कूप को निर्मल, सैंथि धर्यो दुर्गंध ही ह्वै हैं।
फूलिनि को परै भोग भलो, पुनि राति रहै कोई हाथि न लैहै।
दूर तजो चित की तृष्णा नर, जौ लुं कोऊ दिन पुन्य उदै है।
युं धर्मसीह कहे कछु देहु,
दिलाउरे गाडि धर्यो धन धूरि ह्व जै है ॥ १५ ॥

एक कै पाइ अनेक परै फुनि एक अनेक के पाइ परै है।
एक अनेक की चिंत हरैं, अरु एक न आपनो पेट भरै है।
एक खुस्याल सुबै सुख साल में, एककुं खंथ न खाट जुरै है।
देखो बे यार कहै धर्मसी जग,
पुन्यरु पाप परतिक्ष फुरै है ॥ १६ ॥

ऐ ऐ देखो दइ गतिया, वतिया कछु ही न कही सी परै है।
रंक कुं राज (उ) रु राउ को रंक, पलक में ऐसी हलक करै है।
एक विचित्र ही चित्र बनावत, एक कुं भांजत एक घरै हैं।
बात धरम्मसी वाही कै हाथ,
है टार्यो न काहु कौ ईस टरै है ॥ १७ ॥

ओ जगि मूढपति जिनकी दृग,आद्र सकैं उपमान कही है।
दर्पण में प्रगटे सब रूप त्युं, मूढ़ मैं द्रव्य दशा उमही है।
सम्यगवंत मुदा दि सिला सम, और की छाह सुं काज नहीं है।
दीसत एक मयूर ही नृत्यत,
त्युं चितवंतके आत्तम ही है ॥ १८ ॥

ऊत को गेह, कुपात को नेह, रू झंखर मेह जूआर को नाणो।
ठार कौ तेहरू छारकौ लिपन, जार को सुख अनीति को राणो।
काटि कडंबर जीरण अंबर, मूढ़ सुं गूढ़ टक्यो न पिछांणौ।
यु धर्मसीह कहै सुणि सज्जन,
आथि इ नांहीं' की साथि न जानो ॥ १९ ॥

अंग मरोरत तोरत है तृण, मोरत है करका अविच्छन।
राति रहै डरतौ घर भीतरि, भी फिरतो फिरतो करै भच्छन।
भूमि लिखैं भिसलैं पग सुं, जु अटट्ट हसैं मसलै पुनि अच्छन।
सोइ रहै न गहै धर्मसीख कुं,
लच्छि कहां जहां ऐते कुलच्छन ॥ २० ॥

अनूप ही रूप कलाविद कोविद, हैं सिरदार सबै सुमति कौ।
साहसगीर महा वडवीर, सुधीर करूर करारी छती कौ।
सार उदार अपार विचार, सबै गुण धारि अचार सती को।
एती सयान हैं धर्मसी पुनि,
एक रती विनुं एक रती कौं ॥२१॥

काकसी कोकिल श्याम सरीर है, क्रोध गभीर धरै मन माहिं।
और कैं बालक सुं धरै दोष, पैं पोखत आपहीके सुत नांहि।

एसो सुभाऊ बुरौ उनको पुनि, एक भलौ गुन है तिन पाहीं ।
बोले धर्मसी बैन सुधारस,
तातें सुहात जहां ही तहां ही ॥ २२ ॥

खोदि कुदाल सुं आनी है रासभ, भूं पटकी छटकी जल धारैं ।
लातन मारे कैं चाक चहोरी हैं, डोरी सुं फासी सी देइ उतारै ।
कूट टिपल्ल जलाइ है आगि मैं, तो भी लोगाइयां टाकर मारैं ।
युं धर्मसी सगरी गगरी भैया,
कोउ न काहू की पीर विचारैं ॥ २३ ॥

गुण रीति गहै हठ मैं न रहै, कोऊ काज कहै तसु लाज वहैं ।
कछु रीस न है सब बोल सहै, अपनैं सवही कुं लियै निवहै ।
चित्त हेत चहे पर पीर लहैं, न चलैं कवहुं पथ में अव हैं ।
धर्मसीह कहैं जगि सोऊ बहडौ,
जिनके घट में गुण ए सब है ॥ २४ ॥

घुरराटि करै घर द्वारहि तैं, घुरकै घर के पति सुं घर रानी ।
सासु को सास ही सोखि लयो, पुनि जोर कहा धुं करैंगी जिठानी ।
धूजत है घर को जु धनी, फुनि पाथर मारत मांगत पानी ।
देखो धरमसी दूठी है भूठी है,
नारि किधुं घर नाहरि व्यानी ॥ २५ ॥

डान मैं काहु कुं आनत नांहि, गुमांन सुं गात चलावत गोबूं ।
सोझैं घरी घरी पाघरी पेच कुं, पेखत आरसी में प्रतिबिंबूं ।
भूठो सरब्ब गरब धरावत, जौलुं न काल कहुं अजगीबूं ।

आज धरौ नहीं हो धर्मशील पै,

ल्यौगे घणे जु तिसै दिन लीबूं ॥ २६ ॥

सवैया इकतीसा

चाहत अनेक चित्त (चीत), पाले नहीं पूरी प्रीत ;

केते ही करैं हैं मीत, सोदौं जैसे हाट को ।

छोरि जगदीस देव, सारैं ओर ही की सेवु ;

एक ठोर ना रहै, ज्यूं भोगल-कपाट को ।

जाणे नहीं भेद मूढ़, ताणे आप ही की रूढ़ ;

ह्वै रह्यो मदोन्मत, जैसे भैसों ठाट कौ ।

धर्मसी कहैं रै सैंन, ताकों कबहुं न चैन ;

धोबी कैसौ कूकरा है, घर को न घाट कौ ॥ २७ ॥

सवैया तेवीसा

छोरि गरब्ब जु आवत देखि कैं, आदर देइ कै आसन दीजैं ।

प्रीति ही के रुख की मुख की, सुखकी दुखकी मिलि बात वहीजैं ।

दूर रहैं नित मीठी ही मीठी ही, चीज रु चीठी तहां पठइजै ।

साच यहै धर्मसीउ कहैं भैया,

चाह करैं ताकी चाकरी कीजैं ॥ २८ ॥

जो तप रूप सदा अपकै, अपनो वपु पूत पखार करैंगो ।

जो तप की खप पूर करैं, नर पाप कैं कूप में सो न परेगो ।

मोक्षपुरी तसु पंथ प्रयान कुं, पुन्य पकान की पोटि भरैंगो ।

धर्म कहैं सब मर्म यहै,

तप तैं निज कर्म को भर्म हरेगो ॥२६॥

झगरा उलटा ही गहैं कुलटा, कबहुं न रहैं कुल की वट में।
बहु लोकनि में निकसै करि लाजरू, यार कुं घेरत घुंघट में।
लहिहुं कब घात करू वह वात, यही घटना जु घटै घट में।
उनकी धर्मसीह गहैं जोऊ लीह,
मिटैं तसु माम चट्टा पट में ॥ ३० ॥
नैन सुं काहू सुं सैंन दिखावत, वैन की काहु सौ बात बनावै।
पति की चित्त में परवाह नहीं, नित की जन और सुं नेह जणावै।
सासूकौ सास जिठानीको जीउ, दिरानीकी देह दुखै ही दहावै।
कहै धर्मसीह तजो वह लीह,
लराइ कौ मूल लुगाइ कहावैं ।३१।
टैंटि धरै मन में तन में न नमैं, नही मेलत मीटि ही ऐसी।
काहिकुं आपनौ जानियै ताहिकुं,आनीयै चित्त मैं को परदेसी।
ताको न नाम ठाम न लीजियै, कीजियैं आप ही तैंसैं तैंसी।
साच यहै धर्मसीउ कहैं,
भैया चाह नहीं ताकी चाकरी कैसी ॥ ३२ ॥
ठीककी बात सबै चित्तकी, हितकी नितकी तिन सोज कहीजैं।
सो पुनि आपनसों मिलिकै दिलकैं सुध जो कहै सोउ कीजैं।
कोउ कुपात परैं उलटो, कुलटौ करि चीत कुं मीतसौं खीजैं।
जो धर्मसीह तजैं हित लीह तिन्हैं,
मुखि छार दे छार ही दीजैं ॥ ३३ ॥

सवैया इकतीसा

डौलैं परवार लार वैंन कहै वार वार,
हाल सेती माल ल्याहु ढीलन पलक है।

भोजन कु नाज साज, लाज काज चीर ल्याह जाहु,
जाहु ल्याहु देहु ऐसी ही गलक है।
व्याहुनिकी पाहुनिकी कहा करूं भैया मोहि,
ऐतें हैं जंजाल जेते सीस न अलक है।
धर्मसी कहै रे मीत, काहे कु रहै सचीत,
देवै कु है एक देव खैवै कु खलक है ॥ ३४ ॥

सवैया तेवीसा

ढीठ उलूक न चाहत सूरिज, तैं सैं मिथ्याती सिद्धंत न ध्यावैं।
कूकर कुंजर देखि भसैं, पुनि त्यु जड़ पंडित सु घुररावैं।
सूकर जैसैं भली गली नावत, पापी त्यु साधु के संग न आवै।
लंपट चाहत नां धर्मसीखकुं,
चोरकु चांदणों नांहि सुहावै ॥ ३५ ॥

नहीं कोउ पाहुणो नां कछु लांहणो, नांहि उराणो कहू को होवो।
गरज्ज परैं ही अरज्ज कै कारण, काहुं सु नां कर जोरि कैं जोवो।
घर की जर की पुनि बाहिर की, डर की परवाह न काहू कूं रोवो।
कहै धर्मसीह वड़ो सुख है भैया,
मांग कै खाइ मसीत में सोवो ॥३६॥

तीछण क्रोध सु होई विरोध रु, क्रोध सु बोध की सोध न होई।
क्रोध सो पावैं अधोगति जाल कु क्रोध चंडाल कहै सब कोई।
क्रोध सु गालि कढै वढै वैढ, करोध सु सजन दुज्जण होइ।
यु धर्मसीह कहै निसदीह सुणो,
भैया क्रोध करो मति कोई ॥३७॥

थान प्रधान लहै नर दान तैं, दान तैं मान जहां जहां पावै ।
दान तैं ह्वै दुख खानि की हानि, जु रान मसान कहुं डर नावैं ।
दान सु भानु विमान लु कीरति, दान विद्वान कुं आनि नमावै ।
दान प्रधान कहै धर्मसी सिव-
सुन्दरि सौं पहिचान वनावैं ॥३८॥

सवैया इकतीसा

देखत खुस्याल देह नैन ही में धरे नेह,
करत बहुत भांति आदर कै देवैं की ।
नीके ही पधारे राज, कहो हम जैसो काज,
पूछै फुनि बात-चीत पानी और पैवै की ।
ऐसी जहां प्रीति रीति चाहे हम सोइ चीत,
और हैं प्रवाह हम कहा कछु खैवैं की ।
धर्मसी कहत वैन, सबही सुणज्यो सैंन,
मैंलपोहि देखैं तहा सोहि हम जैवै की ॥३९॥

सवैया तेवीसा

धंध ही में नित धावत धावत, टूटि रह्यो ज्यु सराहि को टट्टू ।
घारकैं काज पचैं नित पापमें, होइ रह्यो जैसे हांडी को चट्टू ।
छारे नहीं कब ही धर्मसीख कुं, मुझि रह्यो हैं अज्ञान मखट्टू ।
चित ही मांझि फिरैं निस वासर,
जैसैं सजोर की डोर को लट्टू ॥ ४० ॥

नाचत वंश कैं ऊपर ही नर, अंग भुजग ज्यु कल तल पेटा ।
जोरह प्यार की ठौर परै जहां, सोइ सहै रण मांहि रपेटा ।

संकट कोटि विकट्ट सहैं नर, पूरण कुं अपनै रह पेटा।
देखो धर्मसीह जोर पखावज,
चूण कै काज सहैज चपेटा ॥४१।
पंकज मांझि दुरेफ रहै जुगहै मकरंद चितैं चित ऐसो।
जाइ राति जु ह्वै हैं प्रभात, भयैं रवि दोत हसै कज जैसो।
जाउंगो मैं तब ही गज नैं जु, मृनाल मरोरि लयौ मुहि तैसो।
युं धर्मसीह रहैं जोउ लोभित,
ह्वै तिनकी परि ताहि अंदेशो ॥ ४२ ॥
फूल अमूल दुराइ चुराइ, लीए तौ सुगन्ध लुके न रहेंगे।
जो कछु आथि कैं साथ सुं हाथ हैं, तो तिनकुं सबही सलहैंगें।
जो कछु आपन में गुन है, जन चातुर आतुर होइ चहैंगे।
काहे कहो धर्मसी अपने गुण,
बूठे की बात वटाऊ कहैंगे ॥४३॥
बोल कैं बोल सुं बोझल बात, भइतौ गइ करूं जानैंन ऐसौ।
फोजअनी अनी आइ बनीतौ, लुकावैं कहा जब जोर ह्वै जैसौ।
प्रीति तुटै पुनि चीत फटै, तौं कहा धर्मसी अब कीजैं अंदेसौ।
देखण काज जुरे सबही जन,
नाचत पैंठी तो घुंघट कैसौ ॥४४॥
भाव संसार समुद्र की नाव है, भाव बिना करणी सब फीकी।
भाव क्रिया ही कौ राव कहावत, भाव ही तैं सब बात है नीकी।
दान करौ बहुध्यान धरौं, तप जप्प की खप्प करौ दिन ही की।
बातको सार यहै धर्मसी इक,
भाव बिना नहीं सिद्धि कहीं की ॥४५॥

सवैया इकतीसा

मैरो वैंन मान यार, कहत हुं बारबार,
हित की ही बात चेत काहे न गहातु है।
नीकैं दिल दान देहु, लोकनि मैं सोभ लेहु,
सुंब की बिसात भैया मोहिं नां सुहात है।
खाना सुलतान राउ राना भी कहाना सब,
बातनि की बात जगि कोऊ न रहात है।
ऐसौं कहै धर्मसीह, धर्म की ही गहौ लीह,
काया माया वादर की छाया सी कहात है ॥४६॥

सवैया तेवीसा

यह खेह कैं खंभ सी देह असार, विसार नहीं खिनका-खिनका।
जबही कछु दक्षिण वाउ वग्यौ, तब ही हुइगी कनका कनका।
कबहु तुम यार करौ उपकार, कहै धर्मसी दिन का दिन का।
कर के मणिके तजि कैं कछु ही अब,
फेरहु रे मनका मनका ॥ ४७ ॥

रन्न में रूदन्न जैसैं, अंधक कुं दरपन्न जैसैं,
थल भूमि में मृनाल काहू बौयौ है।
जैसै मुरदा की देह, भूषन कीए अछेह,
जैसैं कौआ कौ शरीर, गंगनीर धोयौ है।
जैसैं बहिरा के कान, कोरि कीए गीत गांन,
जैसै कूकरा कैं काजु खीर घीउ ढोयो है।

तैसैं कहै धर्मसीह याही बात राति दीह,
मूरख कुं सीख दे कैं युं ही वैन खोयी है ।४८।

लंक कलंक कुं वंक लगाइ हैं, रावन की रिधि जावनहारी ।
नीर भर्यों हरिचंद नरिंद हि, कंस को वंश गयो निरधारी ।
मुंज पर्यो दुख पुंज के कुंज, गयो सब राज भयो हैं भिखारी ।
मीनरू मेख कहैं ध्रम देख पैं,
कर्म की रेख टरै नहीं टारी ।४६।

विनय विनु ज्ञानकी प्राप्ति नाहीं रू, ज्ञान बिना नहीं ध्यान कही कौं ।
ध्यान बिना नहीं मोक्ष जगत में, मोक्ष बिना नहीं सुख सही कौं ।
तातैं विनय ही धरौ निस दीह, करौ सफली नरदेह लही कौं ।
यार ही वार कहै धर्मसी अब,
मान रे मान तुं मेरी कही कौ ।।५०।।

शील तैं लील लहैं नर लोक में, शील तैं जाय सबै दुख दूरै ।
शील तैं आपइ ईलति भाजत, शील सदा सुख सम्पति पूरै ।
कोरि कलंक मिटै कुल कुल के, कलि में बहु कीरति होइ सनूरैं ।
सार यहै धर्मसीउ कहै भैया,
शील ही तैं सुर होत हजूरैं ।। ५१ ।।

ख्याल खलक्क में देखो सनिसर, तात सूरिज सों दुज्जन ताइ ।
बाप निसापति ही सौं टरै नहीं, बुद्ध विरुद्ध धरैं हैं सदाइ ।
केसव को सुत काम कहावत, तात सुं नांहि टर्यो दुखदाइ ।
मानस की धर्मसीह कहा कहैं,
देवहुं कैं घर मांहि लराइ ।।५२।।

संत की संगति नांहि करी, न धरी चित में हित सीख कही कूं।
प्रीति अनीति की रीत भजी न, तजी पुनि मूढ़ मैं रूढ़ि गही कुं।
या जमवार में आइ गवार मैं, मारी इता दिन भार मही कुं।
रे सुन जीउ कहे धर्मसीउ,

गइसो गइ अब राख रही कुं ॥५३॥

हाथ वसैं अरू आथि नसैं, जु वसैं चित्त में उदवेग क्रोधू आ।
सगे सुनि क्रूर कियो घर दूर, दिखाइ न मूंह दीयो यह दूआ।
ढुकै लहणात सुकै मन मांहि, तकै मरिवैकुं वावरी कुआ।
कहै धर्मसीह गहै सुख लीह तौ,

भूलि ही चूक रमो मत जूआ ॥ ५४ ॥

लंछन चंद में ताप दिणंद में, चंदन मांझि फणिंद कौ वासो।
पंडित निर्द्धन सद्धन हैं सठ, नारि महा हठ को घर वासौ।
हीम हिमाचल खार है वारिधि, केतक कंटक कोटि कौ पासौ।
देखो धर्मसी है सबकुं दुःख,

कोउ करो मत काहू को हासौ ॥५५॥

क्षमाही को खड्ग धर्यो जिण धीर, करी है तयार सुज्ञानकी गोली।
सुमति कबाण सुवैण ही वाण, हलक्क ही सुं भरि मुठि हिलोली।
ऐसो सज्यो ही रहै धर्मसीउ, कहा करै ताको दुरजन कोलि।
सदा जगि जैत निसान घुरैं,

गृदधुं गृदधुं करि कोडि कलोली ॥५६॥

ज्ञान के महा निधान, बावन वरन जान,

कीनी ताकी जोरि यह ज्ञान की जगावनी।

पाठत पठत जोइ, संत सुख पावै सोइ,
विमल कीरति होई सारै ही सुहावनी।
संवत् सतरै पचीस, काती बदि नौंमि दीस,
वार है विमलचन्द, आनंद वधावनी।
नैर गिनी कौं निरख नित्त ही विजै हरष,
कीनी तहां धर्मसीह नाम धर्म बावनी ॥ ५७ ॥

—:❀:○:❀:—
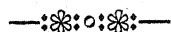
कुण्डलिया बावनी

ॐ नमो कहि आद थी, अक्षर रैं अधिकार।
पहली थी करता पुरष, कीधौं ॐकार।
कीधो ॐकार सार, तत जाणे साचौ।
मंत्र जंत्रे मूल, वेद वायक धुरि वाचौ।
सहु काम धर्मसीह दीयैं रिद्धि सिद्धि औ दोऊँ।
बावन आखर बीज, आदि प्रणमीजे ओ ऊँ ॥ॐन०।१।

नमीयै मस्तक नामि नें, नमो गुरु कहि नित्त।
बहु हितकारी जिण बगसीयो विद्या रूपी वित्त।
विद्या रूपी वित्त, चित जिण कीधो चोखो।
दावै तिम दीजता जलण जल चोर न जोखौ।
सुगरा रे सहु सिद्धि ज्ञान गुण निगुरैं गमियें।
सीख कहैं धर्मसीह नामि मस्तक गुरु नमीयै ॥ न. म. ।२।

तृष्णा

मन री तिष्णा नहु मिटै, प्रगट जोइ पतवाण।
लाभ थकी बहु लोभ ह्वै, हैं तृष्णा हैं राण।
है तृष्णा है राण, जाण नर पिण नवि जाणें।
पास जुड़्या पंचास, आस सौ उपरि आणें।
सौ जुड़िया तब सहस, धरै इच्छा लख धन री।
ध्रापैं किम धर्मसींह, मिटै नहीं तृष्णा मन री ॥ म.तृ. ॥३॥

कर्म

सिरजित मेट न को सकैं, करौ कोडि विधि कोई।
एहवी हिज बुद्धि उपजैं, होणहार जिम होई।
होणहार जिम होई, जोइ धर्मसी इण जग्गे।
चल्यौ सुभूम चक्कवैं, उदधि जल बूडि अथग्गे।
सोल सहस सुर साथ, हुंता सेवक करता हित।
ए वालै कीयो अंध, सही ब्रह्मदत्त नैं सिरजित। सि०।४।

धंधै करि करि जोड़ि धन, संचे राखै सुंब।
भागवसैं केइ भोगवैं, वले न बाहर बुंब।
वले न बाहर बुंब, लुंबि रहैं माखी लालची।
कण कण ले कीड़ीया, पुंज में लै पोतैं पचे।
मेल्यो नंदे माल, कोई न गयौ लंक धे।
कलि में कीधो कुजस, धरम विण करि करि धंधै। ध०।५।

अति हितकरि चित्त एकथौ सु विटक्यो किणहिक वार।
मिलिया वले मनावतां, पिण ते न मिलैं तिण वार।
ते न मिलैं तिण वार, ठार ओन्हो जल ठामैं।
जीयैं तो इ पहिल रौ, पुरुष ते स्वाद न पामैं।
तोडे सांधो तुरत, गांठि रहै डोरे गुम्फित।
धरि लो ते धर्मसीह हे, वैंन हुवै ते अति हित ॥ अ०।६।

आरति मीठी अप्पणी, आइ नमैं सहु आप।
गद्धा ने गांमंतरै, बोलावैं कहि बाप।
बोलवैं कहि बाप, आपणी आरति आवें।

पड़ीइ मांदे पूत, बाप कहि वैद बुलावै ।
श्रावण में धर्मसीह, नटै कहै छासां नीठी ।
दूध जेठ में दीयै, मानि निज आरति मीठी । अ० ॥७॥

इतरौ में पिण अटकल्यो, सोचे सारौ दीह ।
निंदा जिहां पर नी नहीं, धरम तठै धर्मसीह ।
धरम तठै धर्मसीह, जीह निज अवगुण जंपै ।
त्रेवड़ि इण में तत्त, कांइ कसटें तन कंपै ।
तप जप निंदा तठै, हुवै नही कोइ हितरौ ।
निंदा हुंती नरक, अम्हे अटकलीयो इतरौ । इतरो०।८।

परउपगार

ईख कनक उत्तम अगर, चावा ए जगि च्यार ।
निज सुभाउ मेटै नहीं, आवै पर उपगार ।
आवै पर उपगार, सार रस ईख समप्पे ।
छोलतां छेदतां दुगुण, दुति सोवन दीपे ।
अग्नि प्रजाल्यो अगर, सुरभि द्यै सहु सरीखैं ।
अवगुण टालि अलग्ग, एक उत्तम गुण ईखै । ईख० । ६ ।

उत्पति सांभल आपरी, गरवै पछैं गमार ।
उपजेतैं तें उदर में, अशुचि लीयो अहार ।
अशुचि लीयो अहार, वार तिण हीज ऋतु वीरिज ।
मुख ऊंधे मल मांहि, दुख सहीया दिलगीरज ।
तुं पछताणो तरैं, कीया नहीं पूरब सुकृत ।
सांभलि तुं धर्मसीह, एह थारी छै उत्पति ।उत्प०।१०।

कर्म

आदर ऊंचे कुल अधिक, ऋद्धि घणो नीरोग ।
धरम थकी ह्वै धरमसी, सैंणां रो संयोग ।
सैंणां रो संयोग, सोग री बात न सुणिजैं ।
महिपति द्यैं बहुमान, गाम में पहिलो गिणीजैं ।
सहु को बोले सुजस, फलै पुण्य वृक्ष इसा फूल ।
मनवांछित सहु मिलैं, आइ उपजैं ऊँचे कुल । आदर ।११।

गर्व

ऋद्धि त्यागौ रन मैं रहो, रहो परीसा सर्व ।
तत्त सधै नहीं कौ तिणैं, गयो नहीं जां गर्व ।
गयो नहीं जां गर्व, सर्व तप निफल सधीया ।
जोइ बाहुबल जती, वप्पु उपरि खड वधीया ।
गरब तज्यो तब ज्ञान, तुरत हिज उपज्यो तन मैं ।
धर्यें गर्व नहीं धर्म, ऋद्धि त्यागौ रहो रन मैं । ऋ ।१२।

रीस दमन

रीस दबट्टे राखीजैं, तिण उपजतैं तागि ।
पलैं नहीं प्रगटी पछै, उन्हालै री आगि ।
उन्हालै री आगि, सही जाये नहीं सहणी ।
हुवैं घणी जिण हानि, देह पिण दुखैं दहणी ।
सैंण हुवै सहु सत्तु, फिरै जायै मन फट्टे ।
सुणे सैंण धर्मसीख, राखिजै रीस दबट्टे । रीस ।१३।

कर्म

लिखिया ब्रह्म लिलाट में, लोक सकै कुण लोप ।
भायै सुख दुख भोगवै, किसुं किया ह्वै कोप ।
किसुं किया ह्वै कोप, रोप कांठलि घण वरसै ।
वावीहीयौ वापड़ो, तोइ जल काजे तरसै ।
देखे सहु को दिने, अंध ह्वै घूघू अंखीयां ।
धोखो तजि धर्मसीह, लाभिजै सुख दुख लिखिया ।लि०।१४।

लीजै च्यारे तुरत लगि, द्यूत द्रव्य नृपदान ।
गुरू शिक्षा प्रस्ताव गुण, न करो ढील निदान ।
न करो ढील निदान, जाय धन हारे जुआरी ।
चुंगल मिलै चौ तरै, रहे वगसीस राजारी ।
गुरु पिण न दीयै ज्ञान, कह्यो जौ तुरत न कीजै ।
सुभ प्रस्ताव सिलोक, गिनै तुरतज लीजै । ली० ।१५।

एको ह्वै जो आप मैं, कजीयै काम कुटंब ।
तौ को न सकै तेहनै, झगड़ै झाटै झुंब ।
झगड़ै झाटे झुंब, वुंब पिण लागै बहुनी ।
बोली एकण वध, साच माजै मा जैनी ।
सहुनी जिण रै फट जूजूआ, न ह्वै सु धन रहैं नेकौ ।
धुरि हुंती धर्मसीह, आप में कीजै एकौ । एको ।१६।

ऐ देखौ ब्रहमंड इण, इक इक बड़ौ अचंभ ।
धरा भार इवड़ौ धरै, सु थंभी किण विध थंभ ।
थंभी किण विध थंभ, दंभ पिण कौ नवि दीसै ।

मंड्यो किम करि मेह, दडड पांड्या निस दीसै ।
अंबर विण आधार, सूर शशि भमै सपेखौ ।
सागी कहै धर्मसीह, ए ए अचरिज देखौ । ए० ।१७।

ओहिज भूतल ओहिज जल, वायां एकण वेर ।
अंब निंब पात्रैं इसौं, फल में पड़ीयो फेर ।
फल में पड़ीयौ फेर, मेर सरसव जिम मोटौ ।
स्वाति बिन्दु सीप में, आइ पड़यो अण चोटौ ।
मोती ह्वै बहु मोल, सरप मुखि विष ह्वै सोइज ।
पात्रैं अन्तर पड्यो, उदक कहै धर्मसी ओ हिज ।ओ० ।१८।

अन्न

औषध मोटो अन्न इक, भांजै जिण थी भूख ।
सालैं अन विण सांमठा, देही माहिलां दूख ।
देहि मांहिला दूख, ऊख ह्वै सहु नै अन्न री ।
उदर पड़ै जां अन्न, मौज तां लगि तन मन री ।
आखर अन्न रैं अंश, पलै पूरा व्रत पौषध ।
धीरज ह्वै धर्मसीह, अन्न इक मौटौ औषध । ओ० ।१९।

स्वभाव

अंब कौऔ निंब कोइला, लुंब्या किहां इक लागि ।
काग भणी कहे कोइला, कोइल नै कहै काग ।
कोइल नै कहै काग, जाइगा कारण जांणै ।
भूलैं माणस भमर, अंग सरिखे अहिनाणै ।
बिहुं जब बोलिया, अगुण गुण लीधा अटकल ।
न रहै छांना नेट, अंब कौऔ निंब कोकिल । अ० ।२०।

पर स्त्री गमन निषेध

अपणी तिय थी अवर नैं, मानैं घणु मसंद ।
लखमीजी नैं तजि लग्यो, गोपीयां सूं गोविंद ।
गोपियां सूं गोविन्द, इन्द्र पण तजि इन्द्राणी ।
अहिल्या नैं आदरी, जगत सगलैं ए जांणी ।
अतिधन ह्वै उन्मान, जाय नहीं वातां जपणी ।
प्राये परतिय प्रीति, अधिक ह्वै न हुवै अपणी । अ० ।२१।

आठ अंधे

क्रोधी कामी कृपण नर, मानी अनैं मदंध ।
चोर जुआरी नै चुगल, आठों देखत अंध ।
आठे देखत अंध, धंध रस लागा धावैं ।
तन धन री हाणि, नेटि तोइ नजरैं नावैं ।
कुकरम कुजस कुमीचि, सोइ देखै नहीं सोधी ।
धरमसीख नहिं धरै, करै इम कामी क्रोधी । क्रो० ।२२।

कपूत

खाए नै खेरूं करै, सगलै घर रौ सूत ।
कूत न काइ कमाइबा, कहियै एम कपूत ।
कहियै एम कपूत, भूत जिम बोले भड़की ।
सखरी देतां सीख, तुरत कहै पाछौ तड़की ।
साच कहै धर्मसीह, उणै 'सुत सदा अंधेरूं' ।
म खटू मौजी मन्न, करै खाए धन खेरूं । खा० ।२३।

सपूत

गुरु जण सेवे तज गरब, कम्मावैं घरि कूत।
निबलां नै ले निरवहै, साचा तिकै सपूत।
साचा तिके सपूत, दूत जिम दौड़ैं ढुकै।
खरा द्रव्य खाटि नै, मात पित आगलि मूकैं।
मुखि मीठा सुभ मना, देखि सारा हैं दुरजण।
सुपूत्र तिकै धर्मसीह, गरब तजि सेवैं गुरुजण। गु० ।२४।

सात सुख और दुख

घट नीरोग शुभ घरणि, वलि नहीं रिण भय बात।
सुपूत्र सुराज कटुंब सुख, धर्मसीह कहै सात।
धर्मसीह कहै सात, सात दुःख जाय न सहणा।
दीसै घरि में दलिद, लोक वलि मांगै लहणा।
कलहणि नारी कुपुत्र, फिरण परदेस सगे फट।
सबलै दुख सातमौ, घणौ वलि रोग रहैं घट। घट० ।२५।

पाडोस

न रहे पाड़ोसैं निखर, करै मतां घरि कूप।
दुइ विढ़ता मत देखिजै, भूंडौ न कहै भूप।
भूंडौ न कहे भूप, जूप मत मोटां जोड़ी।
झगड़ौ न करै झूठ, आल न रमे धन ओडी।
वैरी न करै वैद, गरथ पर नौ मत गर है।
सुणे सैंण धर्मसीख, निखर पाडोसैं न रहे। न रहै। २६।

बुढ़ापा

च्यार जणां नै सुणि चतुर, सोहैं जरा सिंगार।
राजा मुहतौ वैद रिधि, गरढ पणै गुणकार।
गरढ पणै गुणकार, सार वहु बुद्धि रसायण।
विणसैं मल्ल वेसीया, गिणौ तिम चाकर गायन।
करैं घणी जौ कला, मन्न तोइ किणै न माने।
कहै धर्मसी यु' करै, जरा आइ च्यार जणां नै ।च्यार०।२७।

बाप

छत्र करैं ज्यु' छांहड़ी, तुरत हरै सहु ताप।
छोरू' नै गुणकार छै, बूढ़ा ही मा-बाप।
बूढ़ा ही मा-बाप, आप जीवै तां अमृत।
सखरी आखै सीख, साचवै घर में सुकृत।
लाज काणि करै लोक, तरुण तिय सोह रहै तिम।
धरैं हित धर्मसीह, जतन बहु छत्र करै जिम। छ० ।२८।

जूआ

जूअै सो कीधी जिका, कही न जायें काय।
नल पांडव सिरखां नृपति, मूक्या हार मनाय।
मूक्या हार मनाय, हार करि अलगा होवौ।
कलह सोग बहु कुजस, जूए साम्है मत जोओ।
हांसो नै घर हाणि, सुख पिंण कदै न सूवै।
सुणज्यो कहै धर्मसीह, जिका कीधी छै जअै। ज० ।२९।

मांस

झाझै मल मूत्र झरै, अङ्ग तणा सहु अंश ।
तौ पिण खावा तरसीया, माणस पापी मंस ।
माणस पापी मंस, अंस पिण सूग न आणैं ।
परगट्ट जीवां पिंड, जीभ स्वादै नवि जाणैं ।
दुरगति लहिस्यै दुःख, सबल आ करणी साझै ।
अधरम महा असुचि, झरै मल मूत्रे झाझै । झा० ।३०।

मदिरा

न हुवे सुधि बुद्धि नजर में, जायैं लक्षण लाज ।
परगट मदिरा पान थी, एहा होई अकाज ।
एहा होइ अकाज, खाज अखज पिण खावै ।
नावैं कोई नजीक, अन्ध री ओपम आवे ।
इण कीधा अनरत्थ, द्वारिका नगरी दहवैं ।
सुणैं नहीं धर्मसीख, नजर में सुद्धि बुद्धि न हवै । न० ।३१।

वैश्यागमन

टिपस करैं लेवा टका, नहीं मन माहे नेह ।
राग करे इण सुं रखे, गणिका अवगुण गेह ।
गणिका अवगुण गेह, छेह बिन दाखैं छिन में ।
सिल धोबी री सही, ओपमा छाजै इण में ।
गया बहु लाज गमाइ, विहल हुआ वेश्या वसि ।
जाति कुजाति न जोअैं, टका लेवा करैटिप्पस । टि० ।३२।

शिकार

ठग बगला जिम पग ठवैं, पाडैं जीवां पास।
कुविसन रौ वाह्यो करैं, आहेड़ा अभ्यास।
आहेड़ा अभ्यास, प्यास भूखैं तनु पीडैं।
मार्यो श्रेणिक मृग, नरक गयो न रह्यो नीडैं।
कहे धर्मसी इण कर्म, सुकृति ह्वै निःफल सगला।
रहैं तकता दिन राति, वहैं जीवां ठग बगला। ठग० ।३३।

डाका चोरी

डाकै पर घर डारि डर, कूकरम करैं कठोर।
मन में नांहि दया मया, चाहैं पर धन चोर।
चाहैं पर धन चोर, जोर कुविसन ए जांणो।
मुसक बंधि मारिजै, घणी वेदन करि घांणो।
फल बीजां सम फलै, अंब लागै नाहीं आकै।
धरम किहां धरमसीह, डारि डर पर घर डाकै। डा० ।३४।

पर स्त्री गमन

ढुंढ़ा कीधा ढ़ाहि गढ़, लंक तणी गइ लाज।
पर त्रीरे कुविसन पड़्यां, रावण गमीयो राज।
रावण गमियो राज, साज तौ हुंता सबला।
परत्रीय कुविसन पड़्यां, पाप केइ लागा प्रबला।
अपयश जीव उदेग, मान तौ नहीं छै मूढ़ा।
सुणि भारथ धर्मसीह, ढ़ाहि गढ़ कीधा ढुंढ़ा। ढु० ।३५।

सप्त व्यसन

नरक रा भाई निरखि, साते कुविसन सोई।
इण हुंती रहिज्यो अलग, करौ रखे संग कोइ।
करै रखे संग कोई, जोइ तिहां पहली जुऔ।
मांस खाण मद पान, संग दारी मत सूओ।
आहेड़ौ धन अदत्त, संग पर त्रीय सातां रा।
इण में महा अधर्म, निरखि भाई नरकां रा। न० ।३६।

तूंकारा

तुंकारो काढ़ै तुरत, मुंह मुलाजौ मेट।
कुल उत्तम जन्म्यां किसुं, नीच कहीजै नेट।
नीच कहीजै नेट, पेट रो खोटो पापी।
तुरत बैंण तोछड़ो, सैंण नैं कहै संतापी।
बाप तणो नहीं बीज, बीज किणहिक बीजां रो।
धिग तिण नर धर्मसीह, तुरत काढ़ै तुंकारो। तु० ।३७।
थाका भूखा ही थका, धोरी नर धर्मसीह।
निज भुज भार निवाहि ल्यै, लोपे नहीं शुद्ध लीह।
लोपे नहीं शुद्ध लीह, दीह ल्यैं ऊंचा दावै।
सींह होइ संचरैं, जीह नहु भेद जणावैं।
आखर ते आपणा, जस्स खाटैं हुइ जाका।
धुरा भार ले धीग, थेट तांइ आणै थाका। था० ।३८।

सज्जनदर्शन

देखो सैंणा रो दरस, मौटौ छै कोइ माल।
दूर थकी पिण देखतां, नयणां हुवै निहाल।

नयणां हुवै निहाल, हाल दे हीयो हरखैं ।
वरषै अमृत वैंण, प्रीति अति ही चित्त परखैं ।
वि घड़ी मिलि वेसता, लहैं सुख नहीं ते लेखौ ।
धन दिन गिण धरमसीह, दरस सैंणा रो देखौ । दे० ।३९।

धनवान

धनवंता री धर्मसी, आवै सहु धरि आस ।
सरवर भरीयो देख सहु, पंखी वेसैं पास ।
पंखी वेसैं पास, आस पिण पुगइ इण थी ।
सूको सरवर सेवतां, तृषा कांइ भांजे तिण थी ।
दीयै किसु दलदरी, सबल रीझवीयौ संता ।
सगलौ ही संसार, धरै आस धनवंता । ध० ।४०।

कृपणदान

न दीयै कांइ कृपण नर, सहु इम कहै संसार ।
सात थोक कहै धर्मसी, द्यै ओहिज दातार ।
द्यै ओहिज दातार, बार[1] द्यै काठा बीडी ।
द्यै उतर द्यै कुमति, पूठ द्यै पात्रां पीड़ी ।
धरि द्यै लछि नै घोर, कटुक गाल्यां दे कदीये ।
आडौ पग द्यै आइ, निपट किम कहो छो न दीयै ।न०।४१।
पर हुंती तप पामिनै, निपट दीये दुःख नीच ।
सूरिज तपतां सोहिलौ, पिण वेलू बालैं बीच ।
वेलू बालैं बीच, नीच नर है बहु बोलो ।
उत्तम नर रहै अटक, गालि द्यै तुरत ज गोलो ।

1 पाठान्तर-द्वार

अक्ख दीयौ पद ऊंच, पीड द्यै तोइ पनुंती ।
धरै उत्तम नर धर्म, पापिनै तप पर हुंती । प० ।४२।

यमराज

फोजां मैं मौजां फिरै, गाहण गढ़ा गइंद ।
फुंकै काल फणिंद री, उडि गया नर इन्द ।
उडि गया नर इन्द, चंद दिणंद चकीसर ।
साथ न को धर्मसींह, कित वाल्हा गया वीसर ।
सगला तांलगि सूर, जम्म आवैं नहीं औ जां ।
है चोटी पर हाथ, मांन मत खोटी मौजां । फौजा० ।४३।

मिष्ट वचन

बहु आदर सूं बोलियैं, वारु मीठा वैण ।
धन विण लागां धर्मसी, सगला ही ह्वै सैंण ।
सगला ही ह्वै सैंण, वैंण अमृत वदीजैं ।
आदर दीजे अधिक, कदे मनि गर्व न कीजैं ।
इणा वातै आपणा, सैंण हुइ सोभ वदै सहु ।
मानैं निसचै मीत, बोल मीठो गुण छै बहु । बहु० ।४४।

भारी कर्मा

भारी करमा दुरभवी, जग में जे छै जीव ।
सीख न मानैं सर्वथा, सहज मिटै न सदीव ।
सहज मिटै न सदीव, टेव थी जाइ न टलीयै ।
स्वान पुंछि न ह्वै समी, नित भरि राखौ नलीयै ।
कासुं ह्वै बहु कह्यां, वंदै नहीं कदे विसरमा ।
सुगुरू तणी धर्म सीख, करै नहीं भारी करमा । भा० ।४५।

मन वश की दुष्करता

मयमत्ता मेंगल महा, मणिधरि केहरि मल्ल ।
सगला दमता सोहिला, मन दमणो मुसकल्ल ।
मन दमणो मुसकल्ल, चल्ल जिणरी अति चंचल ।
रहैं नहीं थिर दिन राति, अधिक वायैं ध्वज अंचल ।
खिण दिलगीर खुस्याल, तुरत कैं सीला तत्ता ।
कहै धर्मसी मुसकल्ल, मन्न दमणा मयमत्ता । म०॥४६॥

दान

योजन बारैं जाणियैं, आवैं गाज अवाज ।
दुनियां मैं दातार रौ, सगलैं जस सिरताज ।
सगलैं जस सिरताज, आज लगि वलीयौ आवैं ।
अरवक[1] सदा उगतां, करण रौं पहुर कहावैं ।
साधु सुपात्रे सैंण, भगित करि दीजैं भोजन ।
धरम अनैं धर्मसीह, जस ह्वै केइ जोयन ।

शील

राखीजैं जतने रतन, खड़्यां ह्वै बहु खोड ।
सील तणा तिम धर्मसी, कीजैं जतन करोड़ ।
कीजैं जतन करोड़, होड़ इणरी किण होवैं ।
सीलैं सुर सेवक, जगत जस कहि मुख जोवैं ।
नित सतीयां रा नांम, उठि परभात अखीजैं[2] ।
सीलैं लहीजैं लील, रतन जतन राखीजैं । रा०॥४८॥

---

१ सूर्य २ कहने में आता है।

तप

लहियै शोभा लोक मैं, तप करि कसतां तन्न ।
परतखि वीर प्रशंसियौ, धन्नौ मुनिवर धन्न ।
धन्नो मुनिवर धन्न, मन शुद्ध जास भली मति ।
पहिलौ फल ए प्रगट, कन्न सुणीयैं निज कीरति ।
रहीयै तप सुं राचि, दूठ आठे कर्म दहीयैं ।
धरतां इम धर्मसीख, लच्छि सिवपुर नी लहियैं । ल०॥४६॥

भाव

वपु शोभे नहीं जीवविण, जल विन सरवर जेम ।
विन पति त्रिय गृह दीप विण, तरवर फल विण तेम ।
तरवर फल विण जेम, प्रेम विण जेम सखापण ।
प्रतिमा विन प्रासाद, कहौ तुस जेम विना कण ।
भण इण परि विणभाव, खोट सगली तप जप खपु ।
सोभैं नहीं धर्मसीह, भाव विण जीव विना वपु । व०॥५०॥

सीखो दाखौ शास्त्र सहु, आगम ज्ञान अछेह ।
सांइ रे हाथे सही, मीच रिजक नै मेह ।
मीच रिजक नै मेह, एह छै वातां ऊँडी ।
कासुं झूटैं कह्यां, हाथ परमेसर हुंडी ।
जोइ धर्मसीह जोतिष, सोचि करि करौ सधीखो ।
आखर जाणैं ईस, शास्त्र सहु दाखौ सीखौ । सी०॥५१॥

कर्म

खटवानैं सहु को खपै, उद्यम करै अनेक ।
लिख्यौ ह्वै सो लाभिजै, अधिकौ रंच न एक ।

अधिकौ रंच न एक, देखि मथीयौ दधि दोऊ ।
लाधि गोंविद लाछि, शंभु लाधो विष सोऊ ।
वखत तणी सहु बात, लाख करैं केइ लटुवा ।
कोइ मांटीपण करैं, खपैं सहु करिवा खटवा । ख० ।५२।

सूम की सम्पदा

सुंबा केरी सम्पदा, नपुंसक री नारि ।
नां धर्मसील धरैं सकै, न भोगवैं भरतारि ।
न भोगवैं भरतारि, कीया था पातिक केइ ।
इण घरवासैं आइ, बोइ नांख्यां भव बेइ ।
कर फरसैं रस करैं, आस नहु फलैं अनेरी ।
धर्मसी कहै धिग स, संपदा सुंबा केरी । सुंबा०।५३।

घट बढ़

हयवर जिण घर हीसतां, गज करता गरजार ।
किण हिक दिन तिण घर करैं, पडीया स्याल पुकार ।
पडीया स्याल पुकार, वार नहीं सरखी वरतैं ।
चढ़त पड़त हिज चलै, चंद जिम बिहु पखि चरतैं ।
चौपड़ केरै चाव, घटत बढ़ती ह्वै घर घर ।
सुणि तिण विध धर्मसीह, हिंसता जिण घर हयवर । ह० ।५४।

मर्यादा

लंघीजे नहीं लोक मैं, लाज मर्यादा लीक ।
जायैं पाणी जू जूओ, न करीजैं जो नीक ।
न करीजैं जो नीक, लीक नहु सायर लंघै ।

मरयादा मेटतां, सदा टालीजै संघै ।
वरतीजैं विवहार, कदे निज रूढ़ि न कीजे ।
सदाचार धर्मसींह, लीह कहो केम लंघीजै । ल० ।५५।
क्षमा करंता कोइ खरच, लागै नहीं लगार ।
मिटै कदा यह मूल थी, सैंण हुवै संसार ।
सैंण हुवै संसार, सार सहु मैं ए साचो ।
किण सारु करै क्रोध, कुह्यो काया घट काचौ ।
सफल हुवै धर्मसींह, धरम इण सीख धरंता ।
लहै सोह लोक में, कहै सहु क्षमा करंता । क्षमा० ।५६।
अक्षर बावन आदि दे, कवित्त कुंडलिया किद्ध ।
धरम करम सहु में धुरा, प्रस्ताविक प्रसिद्ध ।
प्रस्ताविक प्रसिद्ध, शहर जोधाण सल्हीजै ।
सतरैंसे चोतीस, भलै दिवसै भा बीजै ।
विजयहर्ष वाचक्क, शिष्य धर्मवर्द्धन साखर ।
कीधा बावन कवित्त, आदि दे बावन आखर । ॥ ५७ ॥

इति कुंडलिया बावनी ।

—:०:*:०:—

छप्पय बावनी

गुरु गुरु दिन मणि हंस, मेघ मेरहि मुगतागण।
मति दुति गति अति सोभ, वाणि मणि गुण जाकैं तण।
सुरग पुव्वसर राज, गयणधर धुरि वारिधि थिति।
वासव ग्रह अति चतुर, जगत सुर पारिख सेवित।
प्रभात पंकति सहित, गरजित निरमल ग्रथित गुण।
वहु ज्ञान तेज केली वरिष, धरि पवित्र धर्मसीह गुण ॥१॥

गुरु वर्णन रूप ३६ विधानीक कवित :—

ऊँकार वलि अरक, उदयगिरि उपर ऊगो।
अलग गयौ अन्धार, पार इणरै कुण पूगौ।
चाहे सहुजग चक्खु, उदय पूरैं सहु आसा।
सुर नर मानै सर्व प्रसिद्ध सगलै परकासा।
संसार सार परतिख समै, सिद्धि रिद्धि दायक सासता।
धरि ज्ञान ध्यान धर्मसीह धुरैं, अधिक इणरी आसता ॥१॥

नम्रता

नम्यां चढे गुण नेट, नम्यां विण गुण ह्वै निःफ़ल।
तरवर नमै तिकोज, साखि फल फूलैं सफल।
नमतां वाधै नेह, नमै सो मोख नजीकी।
नमै सुजाणैं नीति, नम्यां सहु वातां नीकी।

तुरत हिज परखि धर्मसी, तुला धडी जणावै सीस धुणि ।
हलकौ तिकोज ओछो हुवै, गरुओ कहिजैं नमण गुण ॥२॥

मन में न धरै मैल वदै वलि मीठा वायक ।
देह आपसुं दमैं, गरव विण सहु गुण ज्ञायक ।
आदर पर उपगार, सत्यवादी सन्तोषी ।
न करैं निंदा नेट, चलैं निज कुलवट चोखी ।
न्याय रीति तिण दिसि नजर, देखे नहीं स्वारथ दिसा ।
धर्म सील विनय सूधौ धरै इण जुग के विरला इसा ॥३॥

सिला सेज सूवणें, वले वन धगहने वासा ।
नगन गगन गुण मगन, अगनि जग ने अभ्यासा ।
जटा धरै केई जूटा, मुंड के घुरड मुंडावै ।
बहुली केइ बभूत, लेइ अंगे लपटावै ।
जिण जिणैं रूढि झाली जिका, तपौ तपावौ कष्ट तन ।
साच ह्वैं मन्न धर्मसी सफल, मन झूठै सहु झूठ मन ॥ ४ ॥

धंध धरे करि द्वेष, वात में हेत वितौड़ें ।
आप कियौ ते अवल, वले पर किया विखौड़ें ।
छत्ता गुण छावरैं, अगुण अछत्ता ही आखैं ।
कोइ हितरी कहैं, रीस मन मांहै राखैं ।
वलि लहै सुख परकैं विघन, काम पगे पग कूड रौ ।
धर्मसीय कहैं तिण रैं धरम, बोल्यो खातौ बूड रौ ॥ ५ ॥

अटकलि कुल आचार, शोभ अटकलि सक जाइ ।
विद्या अटकलि वित्त, देह अटकलि दे खांइ ।

त्रिय अटकलि सुविशेष, आठ गुण वीदह अटकल।
परणा पुत्रिका इतैं, मावी तउ सिंकल।
वल ती जिकाइ सम्पति विपति, निवलैं सवलैं नखतरी।
किण ही न दोस धर्मसी कहै, बात पछैं सहु बखतरी ॥ ६ ॥

धर्मलाभ

आ खां जौ बहु आऊ काउ, चिरजीव कहिजैं।
पुत्र बधौं परिवार स्वान शूकर सलिहिजैं।
दाखां बहुलो द्रव्य हुवैं अधिकौ कुल हीणो।
बल पामौ अति बहुल प्रबल हुइ सरपे पीणो।
सुत वित्त जोर जीवित सकल आशा पूरै धरम इण।
असीस एक सहु मैं अधिक भलौं वैण धर्मलाभ भण ॥ ७ ॥

विद्या बुद्धि

इक नीरोगी अङ्ग वले, गुण बुद्धि वखाणो।
वलि साचविजै विनय अधिक गुण उद्यम आणो।
शास्त्र राग सुविशेष पिंड थी ए गुण पांचै।
पांचे वलि परतख सही बाहिज गुण सन्चे।
पंडित प्रथम पुस्तक पछै, सुधिर वास साथी सधै।
तिम नहीं चित भोजन तणी, विद्या दस थोके वधैं ॥ ८ ॥

ईहै स्वाद अनेक आलसू, जे वलि अंगै।
दुहरी न करै देह, सुखी विषयारस संगै।
नित रोगी बहु नींद, रंग वातां रो रसीयौ।
रामति में मन रहैं, ताकिल्यैं सहु रौ तसियौ।

लालचै दाम खाटण लुब्ध, दुसमन शास्त्रारां दसै ।
कर इता दूर धर्मसी कहै, विद्या भणिवा ने वसै ॥ ६ ॥

अष्ट मद

उच्च जाति मद एक महा कुल मद सु मातौ ।
लाभ तणैं मद लोल, तेम तप मद सु तातौ ।
रूप मदै वलि रसिक, बहुल बल मद पिण वाहे ।
विद्या मद वलि विविध, अधिक अधिकार उच्छाहे ।
मद आठ ईयै मत ह्वै मसत, अस्त उदय रवि अटकली ।
आविया देखि करीवा अमल, प्यादा जमराएं पली ॥१०॥

कुपात्रप्रीति

ऊगतैं अरकरी मंडी तब छाया मोटी ।
दोइ पहुर मै देखि, छीजती छिण छिण छोटी ।
त्यु कुपात्र की प्रीति, आदि बहु आगे ओछी ।
सजन प्रीति सुरीति, सही धुरि होइ सकोछी ।
वधता विशेष धर्मसी वधे, वलत छांह जिम विस्तरै ।
दृष्टांत एण सज्जण दुज्जण, परखी देख पटंतरै ॥११॥

कर्मगति

ऋतु ग्रीष्म रान में, तृषो मृग दव थी त्राठो ।
पंडियो पासी पाउ नेट साइ तोडै नाठै ।
ओ दौ कुडि उलंघि, आयो जिण दिसि आहेड़ी ।
तेण चलायो तीर, फ़ाल मांहि टाल फंफेड़ी ।
नासतां कूप आयौ निजर, तिस मेटण पड़ियौ तठै ।
कर्म गति देखि धर्मसी कहै, कहौ नाठौ छूटै कठै ॥ १२ ॥

कर्म

रीस भर्यो कोइ रांक, वस्त्र विण चलीयौ बाटे ।
तपियौ अति तावड़ौ, टालतां मुसकल टाटैं ।
बील रुंख तलि बैसि, टालणो माडयो तड़कौ ।
तरु हुंती फल त्रूटि, पडयो सिर माहे पड़कौ ।
आपदा साथि आगैं लगी, जायै निरभागी जठे ।
कर्मगति देख धर्मसी कहै, कहौ नाठो छुटैं कठे ॥ १३ ॥

लक्ष्मी किणहीक लाभि, खरची दीधी वली खाधी ।
कहौं नहीं कारण किणैं, बहसि किए के बाधी ।
दातारै धुरि देखि, दान रो लाधो दहो ।
सुंब ननौ संग्रहै, माहरै इण सुं मुदो ।
दातार घरै दिन दिन ददौ, नित सुंबा घर ननौ ।
बिहुं जणा जाणिं बहसे बहसि, पालैं इण परि पडवनो ।१४।

लीजैं पर गुण लागि, लागि नैं अन्त न दीजैं ।
दीजैं ऊंचौ दाव, दोष अणहुंत न दीजैं ।
कीजै पर उपगार, कार निज लोप न कीजैं ।
खरैं हित खीज जैं, खोट बाते मत खीजैं ।
भीजै सुसांम (?) धीजै भला, पीजै जल छांण्या पछै ।
धर्मसीख सुबुद्धि मनमें धरें, इतरा थोके अवगुण अछै ॥१५॥

एक एक थी अधिक सबल सूरा संग्रामे ।
एक एक थी अधिक नकल ने ठाहे नामे ।

एक एक थी अधिक चुंप सगली चतुराइ।
एक एक थी अधिक कला विद्या कविताइ।
व्याकरण वेद वैदक विविध, भला उदर सहुको भरौ।
धर्मसीह रतन बहुला धरणी, कोई गरब रखे करौ ॥ १६ ॥

ऐ वेलि एकरा, उपना तुंबा आवै।
साधु तणी संगते, पात्र री ओपम पावै।
विलगा जिके सुवंश, गुणी संगि मीठो गावै।
गुण सुं जे गुंथिया, तरैं निज अवर तरावै।
एक एक माहि बलती अगनि, चेढंता लोही चुसै।
उपजै बुद्धि धर्मसी इसी, वास आइ जेहवै वसै ॥ ७ ॥

ओछो नर ओहिज, नजरि तलि बीजां नाणै।
" " " ओछौ वलै आप वखाणै।
" " " रुडा दाक्षिण्य न राखै।
" " " आप म्हे परन्तु आखै।
दूहवैं कवण मुख कहि दुरस, आचरणै सहु अटकलै।
पारखा देखि जल घट प्रगट, ओछो ते हिज अलै ॥ १८ ॥

अवगुण ह्वै आलसू, अवल थिरता गुन आणैं।
चपल होई चल वित्त, वडौ उद्यमी वखाणै।
महा मुंक ह्वै मुखे तौ मनैं नहीं बोल म बोला।
क्युं कहतां क्युं कहैं, भला छै मन रा भोला।
पात्रे कुपात्र धन द्यै प्रगट, वड दाता धन ज्युं वरै।
धर्मसीह देखि परसाद धन, अवगुण ही गुण आचरै ॥ १६ ॥

आज के मित्र

आंखि लाज करि आज, रीति रस री रुख राखैं।
हसते लातैं सहीयै, भेद सुख दुख रा भाखैं।
अलगा हुवा अंस, नेह तिल मात न आंणै।
जुदा न गिणता जीव, जीव परदेशी जांणै।
आज रा मीत बहुला इसा, कोइ गिणैं नहीं हित कीयौ।
कहौ इसै मित्र धर्मसीह कहै, हेजैं किम विकसैहियौ ॥२०॥

स्वार्थ

अफल रुंख अटकले, परा उड जाये पंखी।
सर सूको संपेख, कोइ न हुवै तसु कंखी।
वले पुहप विणवास, भमर मन मांहि न भावै।
दव दाधो वन देखि, जीव सहु छोडि जावै।
निरधनां वेस नांणे नजरि, किणरौ वलभ कवण कहि।
स्वारथैं आवी सेवे सहु, स्वारथ रौ संसार सही ॥ २१ ॥

कहै पांखा सुणि केकि, कंत तुझ लागि केडे।
करि कु मया तुं कांइ, फूस ज्युं अम्ह पां फेडै।
सुन्दर माहरे सङ्ग, कहै सहु तोने कलाधर।
नहीं तर खुथड़ो निरखी, नेट निन्दा करसी नर।
अम्ह घणी ठाम बीजी अवर, धरमी आदर करि धरैं।
मांहरै सुगुण सोभा मुगट, श्रीपति पिण करसी सिरैं ॥२२॥

खिसतां निज खाण थी, रयण कहै सांभलि रोहण ।
अठै अम्हैं उपना, महिर थारी मन मोहण ।
करिजे तुं कल्याण, इसौ मन मैं मत आणै ।
ठांम चूकवे ठिक्क, ठहरसी किसे ठिकाणे ।
वास में जाइ जिण रे वसां, घर री पुण्य दशाघिरै ।
मांह रै सुगुण शोभा मुगट, श्रीपति पिण करसी सिरै ॥२३॥

धन गर्व निषेध

गरथ तणैं गारवे, हुऔ गहिलौ विण होली ।
नेट करैं निबलरी ठेक हासी ठकठोली ।
मन ही मन जांणै मूढ़, मूल ए किण री माया ।
साच कहैं धर्मसीह, छती छवि वादल छाया ।
उलटी सुलट्ट सुलटी उलट, ए थिति आदि अनादिरी ।
घडी माहि देखि अरहट्ट घड़ी भरि ठाली ठाली भरी ॥ २४ ॥

परोपकार

घडी घडी घड़ियाल, प्रगट सद एम पुकारैं ।
अवर भवैं ऊंघतां, जगिज्यो मनुष्य जमारै ।
दुखिया रै सिर दंड, घड़ि घड़ि आयु घटंता ।
काठ सिरै करवती, किती इक वार कटंता ।
तिण हेत चेत चेतन चतुर, धर्म सीख सविशेष घर ।
सहु बात सार संसार में, कोइक पर उपगार कर । २५ ।

ड़ड़िया जिम गुंछलौ, खाइ बैठो मन खौटे ।
गिल ढ़ी हीया गोढ, छेहडै आदर छौटै ।

मुंहडै सु पिण मिलै, नाक सु अधिकैं नाते ।
विहुं मुहड़ौ बोलतौ, खत्त पत्त गिणैं न खाते ।
व्यवहार शुद्ध व्यापार थी, तजियो सहु लोके तिणैं ।
बोलैं न कोइ इण सु बहुत, ड़ड़ियो फल सरिखा गिणैं ॥ २६ ॥

चातक नु छै चतुर, सीख सुणि वयणे साचे ।
पिउ पिउ करे पोकार, जलद सगला मत याचे ।
के जल थल इक करैं, उणां थी पूगै आसा ।
मरड फरड केइ गरजि, नेटि उडिजाइ निरासा ।
लहणीये जोग आफे लहिसि, पुरालब्धे पुन्य पापरी ।
धर्मसीउ कहैं धीरज धरे, ओ ही मत द्यै आपरी ॥ २७ ॥

छात्र तिकौ छावरैं, दोष गुरु निजरां देखे ।
पांचा माहे प्रसिद्ध, सुजस बोले सुविशेषैं ।
छाप धरैं सिर छती, ग्राहकी होइ गुणांरो ।
विद्या तसु वरदायी, उदय वलि होइ उणांरो ।
छल छिद्र ताकिल्यें छीटका, छांनो कहै अछती छती ।
पांचमै तास ऊंधी पडैं, गुर लोपी सो दुरगति ॥ २८ ॥

जो हालाहल जर्यो, जोइ मन्मथ रिपु तैं ।
भाल नैत्र महि भर्यो, वले वन अनल वदीतै ।
शंकर ऐही शकति, होइ तोइ रजवट हालण ।
ससि गिरजा सुर सरित, पासै राखै तिहुं पालण ।
तिण रीति सु बुद्धि धर्मसी तिकौ, धुरा दृष्टि ऊंडी धरैं ।
जल वालि पालि बांधै जरु, काज रजनीति हि करैं ॥ २६ ॥

झडी पडी झुंपडी, किया दर उंदर कोले ।
गंधीला गूदड़ा, खाटपिण बंधण खोले ।
कांमणि सोइ कुहाड़, कलहणी काली कांणी ।
करती जीमण करै, धान सगलौ धूड धाणी ।
रोगियो आप माथै रिणो, रोज दुख सुख नहीं रती ।
मोहनी देखि धर्मसी महा, जांणै तोइ न हुजैं जती ॥ ३० ॥

अन्नीयौ कहै हुं निवल, नाम किण ही में न पडुं ।
छिप्पो वरग रैं छेह, देखि तोइ कहै मुझ दुपडुं ।
झगड़ा झाटा झांझ झझौ सहु बाते झूठौ ।
पहिली ते हुं पछे, एह किम न्याय अपूठौ ।
दीसैं न न्याय भोगवि दसा पड़छो सुदि वदि पख रौ ।
देखे नैं साच दाखैं दुनी, खांड़ो चांदौ ए खरौ ।

गर्व

टीटोडी निज टांग, सही ऊंची करि सौवें ।
औ पड़तो आकास, दुनी नै रखै दु खोवै ।
थांभसि हुं विण थंभि, इसो मन गारब आण ।
कूअति मो मैं किसी, जीउ में इतो न जाणै ।
मोहनी छाक परबसि मगन, संसारी ऐ जीव सहु ।
ओछो न कोइ मन आपरैं,
किण किण नैं नहीं गरब कहु ॥ ३२ ।

ठिक्क वचन ताहरौ भलौ हितकारी भाखैं ।
प्रसिद्ध वधै परतीत जास सहु कोइ राखै ।

मर कह्यै कोइन मरै, जीव कहै कोइ न जीवै ।
तोइ खारो जल तजै, प्यार करि अमृत पीवै ।
गांठि रो कोइन लगै गरथ, सिगला हुइ जिण थी सयण ।
धर्म नैं कर्म सहु में धुरा, वडी वस्तु मीठौ वयण ॥ ३३ ॥

डाहो हुइ सो डरै कोइ मत भूंडौ कहसी ।
घर डर कुल डर घणो, सुगुरु डर डाकर कहसी ।
माण तणै डर मुदै लाज डर करणो लेखें ।
मावी तां डर मानि, सांमि डरकर सुविशेषे ।
दुरगतै दुख परभव डरै, जाण करै डर नव जिको ।
धर्मसींह कहै सहु धर्म को, तत्व सार जाणे जिको ॥ ३४ ॥

ढीली वात मढाहि पुण्य रो कारिज पडतां ।
" " " न्याय सुधो नीवडतां ।
ढीली बात मढाहि बहस सु पडियै बोले ।
" " " ढमकीए वाहर ढ़ोले ।
सहु करै पूछि आगे सुजस, ढीली तठै न ढाहिजै ।
आवियै दाव औठंभतां, कुल धर्मसीह कहाइजै ॥ ३५ ॥

अपनी अपनी

नर मांदौ निरखि नें, वैद कफ वात वतावे ।
जो पूछै जोतसी, लार ग्रह केइ लगावैं ।
भोपो कहै भूत छै, लोभं वीझासणि लीधौ ।
जंत्र मंत्र रा जांण, कहै कोइ कामण कीधौ ।

मंदवाड़ एक नव नव मता, मूल न जाणे को मरम ।
कहै साधु अशुभ पूर्व करम, धरि सुखकारी इक धरम ।३६।

तीन कोडि तरु जाति, आंणि वलि लाख इक्यासी ।
सहस वार एकसौ, भार इक संख्या भासी ।
आठ भार ते इसा, फल्या लाभै फल फूलै ।
भार च्यार विण फले, भार षट लता म भुल्लै ।
करि शास्त्र साखि धर्मसी कहै, भार अढ़ार †वनस्पती ।
विणलीयां सुंस खाधां बिगर, छहु ऋतु में हिंसा छती ।३७।

थिर दीसैं थि ग्गति, अलग आकाशै उड्डि ।
पिण पल पल पवन सुं, गुडथला खायें गुड्डि ।
जिण रो न चलै जोर, डोर परहत्थ दबाणी ।
पर सिद्ध कीध पुकार, नेट किण ही मन नांणी ।
तूटैं न डोर छुटैं न तिम, ऊंची तलफै आफलैं ।
प्राणीयैं इम परवस पड्यां, गमियौ नर भव गाफिलै ।।३८।।

उद्यम

दूहिजै उद्यम दूध, जतन करि दही जमावै ।
वलि परभात विलोइ, उदिम सेती घृत आवै ।
करि उद्यम सहु कोइ, भला नित जिमैं भोजन ।
खवरि आणैं खेपीयौ, जाइ नै केइ भोजन ।

† अडसट्ठि कोडि सट्ठि लख सतरै वलि सहस्स ।
उपरि मेलौ आठ सौ भार अठार वणस्स । १ ।

व्यापारि विणज विद्या विभव,
ज्ञान ध्यान धर्मसीख गिण ।
सहु काज करण उद्यम सिरैं,
विणसैं सहु इक उद्यम विण ॥ ३६ ॥

धरिजें मन धीरज्ज हांणि ह्वै म करे हा हा ।
लागा वहैं ज लार, हांणि दुख त्रोटा लाहा ।
भांति अनैं ऊभत्ति प्रगट दिन राति 'पटंतर ।
ऊगैं वलि आथमै निरखि रवि चंद निरन्तर ।
ग्रह राह परव आयो ग्रसै, परगट देखि पारिखा ।
किण हीक देइ धर्मसी कहै, सहु दिन न हुवै सारिखा ।४०।

नारी विरहणी निरखि ताम कोकिल कुहकी घन ।
चंद त्रिविध पुनि पौन, मदन अति व्यापि लयौ मन ।
वायस राहु भुयंग रुद्र च्यारु अरि लखै ।
तिन कौ करि हैं नास बहुरि इक बात विशेषैं ।
कोकिला कंठ शशधर बदन पौन स्वास पुनि मदन मन ।
मेरेहु एहुं जिन ज्यान हुइ, लिखि-२ मेटण इण जतन ॥ ४१ ॥

पुण्य पाप पातिसाह चाउ सहु दिसि पग चल्ले ।
साच झूठ हुइ सचिव, हुंस आछु दिसि हल्ले ।
ज्ञान ध्यान भ्रम गरव, पील चल्लें चिहुं पट्टे ।
शम दम छल बल अश्व, अढी पग फिरै उवट्टे ।
चखु चलण ऊंठ कोणे चलैं;
प्यादा गुण मद पग्ग पगि ।

सतरंज सजण दुज्जण सजें,
जोइ ख्याल धर्मसीह जगि ॥ ४२ ॥

फल किहां थी विण फूल, गाम बिना सीम न गिणजै ।
गुरु विण न हुवैं ज्ञान, विगर पूंजी किम विणजैं ।
पिया विना नहीं पुत्र, बुद्धि विण शास्त्र न बूझै ।
भींत विना नहीं चित्र, सुदृष्टि बिन वस्त न सूझै ।
विण भाव सिद्धि न हुवैं, रस विण न करै कोई रुख ।
शोभा न कांइ धर्मशील विण, संतोषह विण नहीं सुख ॥ ४३ ॥

१० वर्ण

ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य शुद्र, चिहुं वरण संभाली ।
कंदोई कुम्भार कठी मरदनीया माली ।
तंबोली सुथार ठीक भैंसात ठंठारू ।
नव नारु इण नाम कहै हिव पांचे कारु ।
गांछा सुनार छीपा गिणौं, मोची घांची इण महि ।
धर्मसीह कहैं निज निज धरम, समझौ वरण अढार सहि ॥४४॥

धन को सार्थकता

भायां भीड़ भाजतां, पोखतां उत्तम पात्रे ।
प्रिया हुंस पूरतां जावतां तीरथ यात्रे ।
वीवाहे विलसतां दुजण जड़ काढण दावैं ।
संतोष तां सैंण कविय मुख सुजस कहावैं ।
इण आठ ठाम खरच्यो उत्तम, मत चीहा पैं आप मन ।
साधिजै काज सुं क्रियारथा, धन धन धर्मसीह सोइज धन ॥४५॥

मित्र

मिलतां मुहां मुंह, हेज हियै मिले हीसैं ।
पल एक फेरयां पूठ, नेह तिल मात न दीसैं ।
आरीसा जिम आज, मीत बहुला जग मांहे ।
कलि चातक जिम कोइ, नेह राखैं निरवाहें ।
मेह नै देखि पिउ पिउ मगन पिउ पिउ कहै पर पूठ पिण ।
कीजीयें मीत धर्मसी कहैं, गुणवंतौ कोइक गिण ॥ ४६ ॥

याचना

यश रस सिद्धि बुद्धि सिरी, सदा ए पांच सनूरें ।
देह वसैं देवता, दे कह्यां नासैं दूरें ।
शोक अने सन्ताप, पिंड आवैं परसेवो ।
भय कंपणि गति भंग, निसत निज लाज न सेवो ।
तांणतौ मांण ताकैं तिको, ऊंधैं मुख सुं आंगणो ।
लेखवौ दुरस सगले लखण, मरण सरीखो मांगणो ॥ ४७ ॥

दान

राजा राखैं रजा वागिया प्रसिद्ध वधारैं ।
वैरी न करैं बुरो, सेवक सहु काम सुधारैं ।
भाइ सहु ह्वैं भीर, गुणी जन कीरति गावैं ।
स्वासणि द्यैं आसीस, सासरैं रह्यौ सुहावैं ।
सहु भूत प्रेत ग्रह ह्वै समा, सुपात्रे ह्वै धर्मसी सही ।
देखिज्यो दान दीधौ थकौ, नेट कठे निष्फल नहीं ॥ ४८ ॥

बुढ़ापा

ल्यें हाथ लक्कड़ी, लाल मुखि पड़ै अलेखै ।
लिच पिचती कडि लांक, लाज मन मांहि न लेखै ।
सांभलता धर्मसीख, धीर्य विण माथो धुणै ।
को न गिणै कायदो, खाटले पड़ियो खुणै ।
लघुनीति लोभ लिग लिग लहरि, लाल लीख वलि लाल्हरा ।
ले आइ साथि साते लला, जिका काइ कीधी जरा ॥ ४६ ॥

बढना बुरा

वैर वध्यो हिज बुरौ, अधिक उपद्रो ह्वै आगें ।
वध्यो बुरौ वासदे, लाय जिण सेती लागें ।
व्याधि वधी हिज बुरी, छिजैं देही जिण छिण छिण ।
वाद वध्यो हिज बुरौ, खसा खेधौ ह्वै खिण खिण ।
वधियो बुरो ज सगलौ विसन, धर्मसीख धरिजो धुरा ।
करिज्यो विवेक ज्युं ह्वै कुशल, ववा पांच वधिया बुरा ॥ ५० ॥

नीति

सैं मुख गुरु रैं सुजस, प्रसिद्ध कीजैं परसंसा ।
सगा सणेजा सैंण, वरणवो पूठा वांसा ।
सेवक री परसंस, काम सिर चढ़यां केडे ।
सहु भाइ परसंस, छिद्र कहावण केइ छेडैं ।
पूत री परसंस न करै प्रगट; प्रशंस त्रिय धकिया पछैं ।
धर्मसीह राजनीति हि धरे, न्याय विना वातां न छैं ॥ ५१ ॥

खल

खल न तजे मन खार, जरा हुई बूढ़ौ जोइ ।
पीलो हुवो पाकि, तूस खारौ फल तोइ ।
बूढ़ौ हुओ बिलाड़, मूषकां तौ पिण मारे ।
सखरी थां धर्मशीख, वेख जे अधिको धारे ।
विष में मिठास न हुवै वली, दूधां ही सूं पुट दीयां ।
हठ ताणि आप न गिणै हितू, कासूं तिण सूं हित कियां ।। ५२ ।।

बहू

सांवटि सीरख सेज, पुंजि घर आणै पाणी ।
धोइ सहु वासण धरै, रूडां चूल्हैं रंधानी ।
पीसण खांडण प्रसिद्ध वले गो दूहि विलोवे ।
जीमण रांधि जिमाव लाज सु जिमैं लुकोवै ।
सिर गुंथि विनय संतोषणी, सासू जिठाणी सहू ।
कुल धर्मशील शोभा करण, बड़े कष्ट जीवैं बहू ।। ५३ ।।

जल

हुवै पिंड जल हुता, वेल जल ही ज वधारै ।
जल सहु रो जीवन्न, सहु ब्रह्मंड सुधारै ।
नीर तहां ही ज नूर, आब तिहां आबादानी ।
सरस सुभिक्ष सुकाल, प्रबल बरसे जिहां पाणी ।
धर्मसीह सरब कारण धुरा, अम्बरं पृथ्वी पवन अगि ।
पंचभूत मांहि अधिको प्रगट, जल उपरांत न कोइ जगि ।। ५४ ।।

गृह प्रवेश निषेध

लंपट तजि प्रौलीयौ निगुण प्रभु नीलज नारी ।
चौकीदार ज चोर, जोर वर जोध जुआरी ।
ठिक विण बांभण ठोठ भ्रमी मित्र कायथ भोलौ ।
वलि रीसट वाणीयो, दूत बोले डमडोलौ ।
विन सिद्धि वैद जोसी जडौ, धर्मसीख विण धारणैं ।
मांनि जो वैंण आणौं मतां, बारै ही घर बारणैं ॥ ५५ ॥

क्षमावंत सौ खरो, सकज हुइ गाल्यां सांसैं ।
नेही तेहिज नेट, बिछड़्यां झूरै वांसैं ।
पंडित तेहिज परखि, शास्त्र अरथ समझावै ।
ज्ञानी तेहिज गिणौं, वस्तु पहिली ज बताव ।
सांकड़ै आइ पडिया सही, सैंण सोइ राखै सरम ।
दातार छतें ऊतर न द्यै, धीर सोइ न तजें धरम ॥ ५६ ॥

सतरैं से संवत, वरस तेपनौ वखाणाँ ।
श्रावण सुदि तेरसैं, जोग तिथि शुभ दिन जाणां ।
राजैं बीकानेर, सूरि जिणचन्द सवाइ ।
भट्टारक बडभाग, गच्छ खरतर गरवाइ ।
श्री विजयहर्ष वाचक सुगुरु पाठक श्री धर्मसी पवर ।
बावनी एह प्रस्ताव बहु, कीधी छप्पय कवित्त कर ॥ ५७ ॥

—:ॐ:०:ॐ:—

दृष्टान्त छतीसी
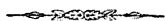
श्रीगुरू को शिक्षा वचन, दिल सुध धरि निरदंभ ।
हितकारण सबकुं हुवैं, अड़वडताँ औठंभ ॥ १ ॥

हितूआं हितकारी हुवै, वांकौ ही कोइ वैण ।
पारिख रतन परीखतां, निरखैं वांकी नैण ॥ २ ॥

दूषण दीधैं दुरजणे, ओपै कवित असझ ।
लूअ झलक्के लागतैं, आंवै स्वाद अवझ ॥ ३ ॥

दूजां नै सुख देखिनै, निपट दुखी ह्वै नीच ।
सूकैं जव्वासो सही, वरिपा जलरइ वीचि ॥ ४ ॥

ध्रमसी कहै वधतैं धनैं, त्रिसना वधै अथाग ।
धुरथी अधिकी धग-धगइ, इंधन मिलियां आगि ॥ ५ ॥

स्वारथ अंपणौ नां सधैं, मित्र धरेंता मेलि ।
माली फल पाम्यां पछै, काटे पर ही केलि ॥ ६ ॥

मोटां री पिण पांति मैं, नान्हैं काज कराय ।
काम पड्यें क्युं कोडियां, नाणां में न गिणाय ॥ ७ ॥

बल इकवीस विश्वा-वधइ, एका बीयै आइ ।
पांतैं बैसै पाधरा, तौइ वारां बल बोलाय ॥ ८ ॥

मुखी सलांमत पांतिमै, तौ सकंजा बोलै सर्व ।
तिण ठांमै ह्वै सून्यथा, तौ गयौ सहूनौ गर्व ॥ ९ ॥

पग मेल्हीजैं पाधरा, वधीयौ जौ वहु वित्त ।
निज निंदा थी कीध नृप, चीतारी दृढ़ चित्त ॥ १० ॥
गुरू निंदा करणी नहीं, माठौ देखे मग्ग ।
सेलग गुरू मदवसि सूऔ, पंथग चांपै पग्ग ॥ ११ ॥
पाप किया जायै परा, जौ पछतावै जोइ ।
गौसालौ स्वर्ग गयौ, अंत समै आलोय ॥ १२ ॥
दूजा दिपावै दीप ज्यूं, आप धरै अंधार ।
पहुचाया शिवपांचसै, खंदक पोतैं ख्वार ॥ १३ ॥
बल सगलौ बैठौ रहै, देव हुवै दुख देण ।
बारवती नगरी बलै, निरखै केसव नैण ॥ १४ ॥
करि हितनै पीडा करे, ते तौ पुण्य तरक्क ।
स्वर्ग गयौ श्री वीररा, खीला काढि खरक्क ॥ १५ ॥
अवसर सभा अटकले, वायक वंद्यां संवाद ।
दूहा दे जीतउ जती, वृद्धोवादी वाद ॥ १६ ॥
सबलां री ह्वै पूठि सिरि, निबलां रौ रहै नीर ।
चमर शक्र साम्हौ चढ़यौ, वांसौ राखण वीर ॥ १७ ॥
कोप वसै कारिज करैं, वलि सोचैं मतिवंत ।
इन्द्र दौड़ि लीधौ उररौ, वज्र भगति भगवंत ॥ १८ ॥
धरम्यांनै पिण तजि धरैं, सहु वखतावर सीर ।
इन्द्र चेडा नै अवगिणी, भयौ कोणिक री भीर ॥ १९ ॥
जतन करें जो देवता, क्रूर मिटैं नहि कर्म ।
वीर श्रवण मैं कील कै, महापीड हुइ मर्म ॥ २० ॥

मोटा ही भ्रम काम मैं, अधिकौ करैं अदेख ।
दसारण री रिधि देख नैं, शक्र संज्यों सुविसेष ॥ २१ ॥
मोटां रैं पिण कष्ट में, जतन नेह सहु जाय ।
रातैं रमणी रांन मैं, नांखि गयौ नलराय ॥ २२ ॥
राज लैंण मांहे रहैं, वडां तणी मति वक्र ।
भरतैं मारण भ्रात नैं, चपल चलायौ चक्र ॥ २३ ॥
दांन अदान दुहूं दिसी, अधिक भाव री ओर ।
नवल-सेठ नैं फल निबल, जीरण नैं फल जोर ॥ २४ ॥
धरमी जे धरमैं धरैं, निसचौ न तजैं नेट ।
चंद्रवतंसक नां चल्यौ, थिर दिवालगि थेट ॥ २५ ॥
दिढता धरमैं देखिनैं, भलौ करैं सुर भाव ।
हित जंबू देवी हण्यौ, प्रभवा तणौ प्रभाव ॥ २६ ॥
प्रापति होवैं पुण्यरी, बखत खुलैं तिण वेल ।
संगम पायस संग में, मुनिवर संगम मेल ॥ २७ ॥
दान सराहै देवता, चेला दीध विशेष ।
मूलदेव नैं राजपद, देवैं दीधो देखि ॥ २८ ॥
पापी नैं दुख पाडिजैं, तो इ पाप न तजंत ।
कालकसूरे कूप मैं, मन सौ मारे जंत ॥ २९ ॥
आप कष्ट अंग आंगमैं, पंडित टालैं पाप ।
सुलस दया पाली सही, पग पोता रो काप ॥ ३० ॥
मुनीसरां सिरि मोहरा, ताजां वाजैं तूर ।
अंगज मृति आख्यां भरी, श्री शय्यंभवसूरि ॥ ३१ ॥

पण अपणौ नहि पालटै, धरमी धीरिज धार ।
लाडू हरि लबधइ लह्या, तजिया ढंढण त्यार ॥ ३२ ॥
वृत लीधौ ही है वृथा, करम उदय अधिकार ।
वरस चौवीस गृहे वस्यो, मुनिवर आद्रकुमार ॥ ३३ ॥
पतित थका ही परभणी, गुणी करै उपगार ।
नर दश दश नंदषेण नित, बोधै वेश्या बार ॥ ३४ ॥
काम विषम न सधै किम्ही, सो ल्यै शील सुधार ।
चालणीयै करि सीचीयौ, नीर सुभद्रा नारि ॥ ३५ ॥
रे कलियुग गज मत गरज, हुं हिज आज अबीह ।
तुम्ह मद उत्तारण तपै, सकजौ जिन ध्रमसीह ॥ ३६ ॥

इति श्रीसदगुरु शिक्षा दृष्टांत षट्त्रिंशिका ।

—:०:—

परिहां (अक्षर वतीसी) वतीसी

काया काचे कुंभ समान कहैं क कौ ।
धांखै धेखी काल सही देसी धको ।
करवट वहतां काठ ज्युं आउखो कटै ।
परिहां न धरै तोइ धर्मसीख जीव नट ज्युं नटै ॥ १ ॥
खमिजैं गालि हितूनी इम कहै ख खौ ।
रीस करी कहैं तेह कहीजे हित रखो ।
आणा सैंणा वैंण सुं आख्यां उपरैं ।
परिहां धर्म कहै सुख होइ धूअें ही धूप रैं ॥ २ ॥
गरथ पामी गुण कीजे इम कहे गगो ।
साहमी साधु सुपात्र संतोषीजैं सगौ ।
लाधि छै जो लाछि कहैं धर्म लाहल्यौ ।
परिहां संची राख्या सैंण अपांनै स्वाद सौ ॥ ३ ॥
घड़ि मांहे घड़िजाहे, आयु कहै घ घो ।
अमर न दीठौ कोई जीव अठा अघौ ।
पहिली को दिन च्यार दिन को पछै ।
परिहां आखर कहै धर्मसीह सही चालणो अछै ॥ ४ ॥
नेह बधै नहीं नेट, हुए अंगुल ढीहीयै ।
लुलि नमीयौ तो का सुं लोक लजा लीयै ।

गांठि हीयै धर्मसी कहै सुख मतां गिणौ ।
परिहां औ गुण इणहिज ङ ङि यो आमण दूमणौ ॥ ५ ॥

चकवा ज्युं चल चित्त, न हूजे कहे च चो ।
पर वसि प्रीति लगाइ तलफि कैं क्युं पचो ।
सिरज्यो है सम्बंध किसु हा हा कियै ।
परिहां धीरज धर धर्मसीह रखे हारे हीयै ॥ ६ ॥

छक देखि खेलीजैं एम कहो छ छै ।
पछतावो जिण काज सही न हुवे पछैं ।
आखर जे धर्मसीह हुवै उतावला ।
परिहां विणसाडे निज काज सही ते वाउला ॥ ७ ॥

जोबन जोर गिणैं नहीं केहनैं कहैं ज जो ।
गरब चलें तां सीम हुवे देही गजौ ।
धीरो रहे धर्मसी कहै हासी होइसी ।
परिहां जोबन बीते कोइ न साम्हो जोवसी ॥ ८ ॥

झगड़े म करै झूठ, कहै छै युं झ झै ।
ग्रै नहीं कोइ साखि दुखे देही दझै ।
कूडै की परतीत न, साचो ही कहै ।
परिहां रागां बिना धर्मसी कहै चेजो क्युं रहे ॥ ९ ॥

न धरो तिण सुं नेह, मिले नहीं जे मुखै ।
ढुपडौं दीसै दूर, अनै बोले दुखै ।
आखर एह अछै जो इणहिज वेतरो ।
परिहां चीतारैं नहीं कोइ ञञयो भाट चुलेतरो ॥ १० ॥

टलिये नहीं विवहार, ग्रही निज टेक रे।
वात सहु नौं दीसे एह विवेक रे।
निखरौ ही धर्मसी कहै ल्यो निरवाह रे।
परिहां महादेव विष राख्यो ज्युं गल मांहि रे॥ ११ ॥

ठांम देखि उपगार करो कहियौ ठठैं।
तत्त तणी तूं वात म नाखि जठे तठैं।
कीजें नहीं धर्मसी उपगार कुजायगा।
परिहां सींह नी आखि उघाड़्यां सीह ज खायगा ॥ १२ ॥

डेरा आइ दीया दिन च्यार कहे डडौ।
गयो हंस तब काय बलौं भावैं गडौ।
वाय वाय मिल जायें, मट्टी मट्टीयां।
परिहां खूब किया धर्मसीह, जिणें जस खट्टीयां॥ १३ ॥

ढुँढ़ो ढ़ाढ़स लागि, दोस मिस कहै ढ ढो।
पारद गोली पाक करौ पोथा पढ़ो।
जंत्र मंत्र बहु तंत्र जोवो जोतिष जड़ी।
परिहां घाट बाध धर्मसीह न होइ तिका घड़ी ॥ १४ ॥

नहु लंघीजै लीह, एक मावीत री।
राखीजै वलि लीह सदा रज रीति री।
ईस तणी इक लीह धरो धर्मसीह अखी।
परिहां राणें आखर न्याय त्रिणे रेखा रखी॥ १५ ॥

तत्त जाणी इक बात तिका कहै छै त तो।
माया संचै सुंब तिको खोटौ मतो।

खाडि गाडि राखी ते कोइ खायसी ।
परिहां थेट नेट धरती में धूड़ ज थायसी ॥ १६ ॥

थिर न रहीं जगि कोइ इसो बोले थ थो ।
फोगट फिरि फिरि कांइ माया जालें फथो ।
टलै केम धर्मसीह कहै आयौ टांकड़ौ ।
परिहां मांडी आप जंजाल उलझ्यौ माकडौ ॥ १७ ॥

देइ आदर दीजैं दान कहै द दौ ।
माणस रैं धर्मसी कहै आदर सुं मुदौ ।
पाणी ते पिण दूध गिणो हित पारखी ।
परिहां आदर विण साकर ही काकर सारिखी ॥ १८ ॥

धरौ सीख मोटांनी एम कह्यो ध धै ।
बालक जीव्या हंस पड्या घाजै बधै ।
शुकै दीधी सीख कढ़ी कानां तलै ।
परिहां राज गमाइ गयो बलिराइ रसातलै ॥ १६ ॥

न करो मन में रीस कह छै युं न नौ ।
मानी छै जो रीस तोइ वइगा मनो ।
तांण्या अति धर्मसीह कहै तूटै तणी ।
परिहां राइ पड्यां मन मोती जाइ न रेहणी ॥ २० ॥

परदेसी सुं प्रीति म करि कहीयो प पे ।
जोरै उठी जाय तठा सुं तन तपै ।
बार बार चीतारैं धर्मसी बत्तियां ।
परिहां छूटै नयणां तीर भरायै छत्तियां ॥ २१ ॥

फल दीधै फल होइ कहै छै यु फ फौ ।
निफल पहिली हाथ किसु आणै नफो ।
सेवा कीधां ही ज सही कारिज सरै ।
परिहां दाखै धर्मसीह दिल्ल ठरैं तो ह्वाफुरै ॥ २२ ॥

बोल्यां मोटा बोल किसुं कहियो बवे ।
दीसैं आयौ दाव तठै नचो दबै ।
साच नहीं जिणरैं मन तिणसुं सरम सी ।
परिहां धैठे माणस सुं हित केहो धर्मसी ॥ २३ ॥

भलपण कीजैं कांइक एम कहो भ भौ ।
लोकां माहे जेम भली शोभा लभौ ।
जीव्या रौ पिण सार इतौ हिज जाणीयै ।
परिहां उपगारें धर्मसी कहै काया आणीयै ॥ २४ ॥

मित्राइ रो मूल कहै धर्मसी म मौ ।
नयणे देखौ मित्र तरै पहिली नमौ ।
दीजे लीजे कहीजे सुणीजे दिल्ल री ।
परिहां खावै तेम खवावै प्रीति तिका खरी ॥ २५ ॥

या यौ कहै यारी करि तिण हीज यार सु ।
पडीयां आपद माँहि बुलावै प्यार सु ।
पूरौ प्रीतो ते जे तलफै तिण पगा ।
परिहां सुख में तो धर्मसी हुवे सहु को सगा ॥ २६ ॥

रंक राउ इक राह चलै बोलें र रौ ।
द्वेष राग धर्मसी कहै एता क्युं धरौ ।

एता नव नव रंग बणावै अंग सुं ।
परिहां राख सहुनी होस्यै एकण रंग सुं ॥ २७ ॥

लोभ गमावै शोभ कहै छै युं ल लौ ।
भाखै लोक सहु को लोभी नहीं भलौ ।
लालच वसि धर्मसी कहै थोडो लग्गीयै ।
परिहां मान महातम मोह रहैं नहीं मग्गीयै ॥ २८ ॥

वात घणी वणसाड हुवै कहै छै व वो ।
निखरी नीकलि जाइ उदेग हुवैं भवो ।
बहु गुण छै धर्मसी कहै थोड़ो बोलीयै ।
परिहां थोडी वस्तु सदाइ मुंहगी तोलीयै ॥ २६ ॥

शीख न मानें सुंआलारी को सही ।
कलियुग मांहे खैंडैं री प्रृथ्वी कही ।
आंकत्रीयो ते लाठी ले ने उरडियौ ।
परिहां मान्यो अखरां में पिण शशियो कोठा मुरडियौ ॥३०॥

क्षेत्र सहे खण धार खरैं रिण नांखिसै ।
खेले खीले वांस खले खेत्रे खसै ।
पेट काज धर्मसीह इता दुख पाडीयै ।
परिहां फाड्यो पेट सुन्यायै ख खें फाडीयें ॥ ३१ ॥

सत्त म छाडौ सैंण कह्यो छे युं ससै ।
कष्ट पडे ते ईस कसोटी में कसै ।
जोवो सत्तो सिद्धि हुइ विक्रम जिसी ।
परिहां साकौ राखैं सोइ सही कहै धर्मसी ॥ ३२ ॥

हरखै हियो जिण नैं देखि कहै ह हौ ।
पूरव भव री प्रीति कंइ तिणसें कहौ ।
हेत कहै धर्मसीह छिपायौ नां छिपै ।
परिहां चुंबक मिलिया लोह तुरत आवी चिपै ॥ ३३ ॥

संवत सतरैसार वरस पेंत्रीस (१७३५) में ।
जोड़ी अखर बतीसी श्री जोर में ।
विजयहरष जसवास सु लोकां में लहै ।
परिहां करि कंठ प्रस्तावी, धर्मसी जे कहै ॥ ३४ ॥

—:o:—

सवासो सीख

श्री सदगुरु उपदेश संभारो, धर्मसीख ए सुबुद्धि धारो ।
विधि सहु मांहि विवेक विचारौ, सगला कारिज जेम सुधारो ।१।
प्रथम प्रभाते शुभ परिणाम, नित लीजे श्री भगवंत ना नाम ।
धणी रा स्वामिधरम में रहिजैं, कथन न मुख थी झूठ कहिजै ।२।
धरम दया मन मांहे धार, अधिको सहु में पर उपगार ।
बात म करि जिहां वसिवौं वास, वैरी नौ म करे विश्वास ।।३।।
वरजे सन स ठामि व्यापार, चालें अपणें कुल आचार ।
माइतांरी आण म खंडै, मोटां सेती हठ म मंडै ।।४।।
झगडे साख म देजे झूठी, आप वडाइ न करि अपूठी ।
म लडे पाडोसीसुं मूल, अपणां सुं होजे अनुकूल ।।५।।
सजि व्यापार तुं पुंजी सारू, अटकलि ठाम देइ उधारूं ।
रखे बधारे ऋण नै रोग, लखण लीजैं ज्युं हसै न लोग ।।६।।
वसती छेह म करिजे वास, पापी रै मत रहिजै पास ।
ऊंचौ मत सूए आकाश, वित्त छतैं म करै देखास ।।७।।
दिल रौ स्त्री नैं भेद न दीजैं, कदे ही सांझै पंथ न कीजे ।
सुत भणावे डर डाकर साधे, म चाढे लाड म मारै माथै ।।८।।
नांन्हा ते मत जाणे नांन्हा, छिद्र पराया राखे छांना ।
अधिकारी म करे अदिखाइ, भंभेरे मत भूप भखाइ ।।९।।

राजा मित्र म जाणे रंग, सुमाणस रो करिजे संग ।
काया रखत तपस्या कीजै, दान वलै धन सारू दीजै ॥१०॥
जोरावर सुं मत रमे जुऔ, करिजे मत घर मांहे कुऔ ।
वैदां सुं मत करजे वैर, गालि बोले तो ही न कहै गैर ॥११॥
नारि कुलक्षण नै धन नास, हलकौ पडीयो पाम्यो हास ।
अति पछतावैं चित्त उदास, पंच में पांचे मत परकास ॥१२॥
अमल न कीजै होडैं अधिका, दूरा करीजै घर में विधिका ।
गरथ परायौ तुं मत गरहे, निखरैं पाडोसैं पिण न रहे ॥१३॥
दोइ विढ़ता एकलौ मत देखे, धणीनैं बुरौ म कहिजे धेखे ।
जूपे मत मोंटां नी जोड़े, छोकरवाद री रामत छोड़े ॥१४॥
गांम चलंता सुकन गिणीजे, हणतौ विण किणही न हणीजै ।
विण ग्रहणैं दीजे मत व्याज, निश्चै वरस नो राखे नाज ॥१५॥
दुसमण ने दुसमण मत दाखै, रीस हुवै तोही मन राखै
खत्त लिखावै मत विण साखे, मांण पोता नौ गालि म नांखे ।१६।
लाज न कीजै नामै लेखे, वह्वारै परतीत विशेषें ।
धरिजे मेल ज गांम धणी सुं, इकतारी कर अपणी स्त्री सुं ॥१७॥
चलतां वसतां सहु ची चीतारे, वाल्हा सैण मतां वीसारे ।
जबाब करतौ रातैं जागै, न हु सुइजैं अंगे नागे ॥१८॥
जे करतो हुवै चोरी जारी, उण सुं अति नहीं कीजै यारी ।
वसत न लीजैं चोरी वाली, लूंबै मत तुं निबली डाली ॥१९॥
दे फुंका म बुझावै दीवौ, पाणी अणछाण्या मत पीवौ ।
छींक कीयां कहिजे चिरंजीवो, रूस्यौ मनावे फाटो सीवौ ॥२०॥

म करे रवि साम्हो मल मूत्र, लखण म करिजे लावा लूत्र ।
पाप तजे तु सकजै पूत्र, सांभलिजे शुभ शास्त्र सूत्र ॥२१॥
मुंडा सुं पिण करे भलाइ, परिहरि पांचे जेह पलाइ ।
बैठां बात करैं बेइ जौ, तेड्या विण तिहां म हुवे तीजौ ॥२२॥
कारिज सोच विचारी कीजैं, खता पड़्या ही अति मन खीजै ।
सुधर्यै काम कहे साबास, न करे याचक निपट निरास ॥२३॥
न करे मूल किण हि री निंदा, छावीजैं वलि गुरु रा छंदा ।
नांम लोपी नै न हुजै निगरा, नवि थांपीजै कीड़ी नगरौ ॥२४॥
आदर दीजै माणस आये, जिहां नहीं आदर तिहां मत जाये ।
हसजै मत विण कारण हेत, कपड़ौ पिण म करे कुवेत ॥२५॥
बहु विषमें आसण मत बेसें, परवल अणजाण्यां मत पेसे ।
पाणी अति ताणीय न पीजै, सारौं ही दिन सोइ न रहीजैं ॥२६॥
बांधे मत मल मूत्र अबाधा, खाजे मत फल जीवां खाधां ।
वसत पराइ मतिय विछोड़ें, छानी पर नी गांठ म छोड़ें ॥२७॥
जिमिजै अगले भोजन जरीयै, शत्रु न हुजै कारज सरीयै ।
पेसे मत अण कलीयै पांणी, तोडे प्रीति अतां मति ताणी ॥२८॥
घर में मत खा फिरतो घिरतो, न कहे मरम बोलीजे निर तौ ।
तारु सुं मत तोड़ें तिरतौ, बडां रै काम म थाए विरतौ ॥२६॥
पंथ टलै तव लीजै पूछ, मोटां साम्ही म मौडे मुंछ ।
तुच्छ वचन म कहै तुंकार, मत बेसै वलि डांसणी मार ॥३०॥
भोजन उपमा म कहे भुंडी, अपणी जाति विचारे ऊंडी ।
जिण सांभलतां उपजे लाज, एहो म कहे वैंण अकाज ॥३१॥

कीजे नहीं पग पग कचाट, अणहुंतौ उपजे ऊचाट।
मांहिला सु न हुजे मन मट्टइ, हाणि न कीजे अपणे हट्टे ॥३२॥
टेढ़ा न हुजे जंगी टट्टू, ललचाये मत थाए लट्टू।
पंडित मूरख कीजें परिखा, सगलां नैं मत कहिजें सरखा ॥३३॥
न कहें फिर फिर अपणो नांम, ठिक सु वेसे देखी ठांम।
सुंव नो नाम न लेइ सवारौ, कोई हुसी अणहुंतौ कारौ ॥३४॥
वरजे पर ही वेट वेगार, आप वसे जिहां हवै अधिकार।
डुटपी वात कहें दरवार, सहु नौ समझीजें तत सार ॥३५॥
सीख सवासो (१२५) कही समझाय, साचवतां सहुनै सुखदाय।
थिर नित विजयहर्ष जस थाय, इम कहै श्री धर्मसी उवझाय ॥३६॥

गुरु शिक्षा कथन निसाणी

इण संसार समुद्र कौ ताकैं पेलौ तट्ट।
सुगुरू कहै सुण प्राणीयां तु धरिजै धर्म वट्ट ॥ १ ॥
सुगुरू कहै सुणप्राणिया, धरिजै धर्म वट्टा।
पूरब पुण्य प्रमाण तैं मानव भव खट्टा ॥
हिव अहिलौ हारे मतां, भांजे भव भट्टा।
लालच में लागै रखै, करि कूड कपट्टा ॥ २ ॥

उलझै नौं तु आप सु ज्यु जोगी जट्टा ।
पाचिस पाप संताप में ज्यु भोभरि भट्टा ।
भमसी तुं भव नवा नवा नाचै ज्यु नट्टा ।
ऐ मंदिर ऐ मालिया ऐ ऊंचा अट्टा ॥ ३ ॥

हयवर गयवर हींसता, गौ महिषी थट्टा ।
लाछ दु लीपी झूबका पहिंग सु घट्टा ।
मांनिक मोति मूंदड़ा परवाल प्रगट्टा ।
आइ मिल्या है एकट्ठा जैंसा थलवट्टा ॥ ४ ॥

लोभे ललचाणा थकौ, मत लागि लपट्टा ।
काल तकै सिर उपरैं करसी चटपट्टा ।
ले जासी इक पल में ज्यु वाउ छलट्टा ।
राहगीर संध्या समै सोवै इक हट्टा ॥ ५ ॥

दिन उगो निज कारिजे जायें दहवट्टा ।
त्यु ही कुटंब सबै मिल्यौ मत जांणि उलट्टा ।
एहिज तो कु काढिसी करि वेस पलट्टा ।
साथि जलैंगे बपड़े दुइ चार लकुट्टा ॥ ६ ॥

स्वारथ का संसार है विण स्वारथ खट्टा ।
रोग ही सोग वियोग का सबला संकट्टा ।
दान दया दिल में धरो दुख जाइ दहट्टा ।
धरम करौ कहै धरमसी सुख होइ सुलट्टा ॥ ७ ॥

—:०:०:—

वैराग्य निसाणी

काया माया कारिमी, चिहुं दिन तणी चट्टकि,
इण माहे तुं आत्मा, उलझै रखे अटकि ॥ १ ॥

इण माहे तुं आतमा उलझै न अटक्कि,
पहिली तौ पोता तणी, करि शोध घटक्की ।
कूड़ धूड़ री कोथली मद मैल मटक्की,
झाली मूढे पंडिते, झंझेडि झटक्की ॥ २ ॥

जोध विरोध वृथा करैं, कन्है काल कटक्की,
मांन मछर मन जांणि मत, मृति नैण मटक्की ।
ठग माया झूठी ठटैं खल रूप खटक्की,
फोगट जाइस फुंकि तुस जाइ फटक्की ॥ ३ ॥

एकणि लोभैं आवतां छुए जाय छटक्की,
धरम सरम हित धीरता गुण ज्ञान गटक्की ।
मन मातैं मृग ज्युं भमैं, त्रग साथि वटक्की,
पर निंदा क्षेत्रे पडैं हिव राखि हटक्की ॥ ४ ॥

नाच्यो वेसे नव नवे धरि रीति नटक्की,
पुण्यैं नर भव पामियौ भवे भव भटक्की ।
सुगुरू वचन सहकार री लुलि लुंबि लटक्की,
इण विलग्यां सुख फल अवल त्रुटे न टक्की ॥ ५ ॥

नंदे माया मेलवी पिण नेट न टिक्की,
वाविसु क्षेत्रै ज्युं वले वधै रीत्ति वटक्की।
श्रीधर्मसी कहै ज्ञान री अमृत गुटक्कि,
पीयां दुख जायें परा, सुख होई सटक्की ॥ ६ ॥

—:※:०:※:—

उपदेश निसाणी

मोह बसै केइ मानवी, मांड्या घोलमघोल,
गमियो नर भव गाफिलै, वयविन धरम विटोल ॥१॥
विण धरमे ते जीवड़ा, वय सर्व विटोली,
दस मासां थिति उदर री, बहु दुख में बोली।
कोडि अठावीस कष्ट तें खमिया इण खोली,
जनम्यां दुख हुंता जिके, भूल्या भ्रम भोली ॥ २ ॥
मातां धोतां त्रमल, झुलरायौ झोली,
हालरि हुलरावियौ, हींडोल हिंचोली।
वलि रमीयौ अठ दस बरस तुं बालक टोली,
परणावौ तुं नइ पछैं दयिता हुइ दोली ॥ ३ ॥
मगर पचीसी मांणतौ, करै काम कल्लोली,
गाहड में घुमे घणुं, गिलि मफरा गोली।

धन खाटन धपटै धरा, धंधै धमरोली,
लेतां देतां लालचे लुब्धों लपचोली ॥ ४ ॥
मावीतां ही नां मनै दुख द्यै दंदोली,
गरढ़ैं न सरैं का गरज नाणें विण नौली।
परहा सडिया पांन ज्युं तर्जीया तंबोली,
पूता नवा नव पांन ज्युं पाले पंपोली ॥ ५ ॥
छहु रितु मद मातौ छिलै, छवि छाका छोली,
अफल गमावै आउखो, ठाली ठग ठौली।
उडिसी सास अचांणरौ डिगसी डमडोली,
आभ्रण सगलां ले उरा करै काया अडोली ॥ ६ ॥
फूक्यौं लकड़ फूस में, होइ जांणे होली,
विण ज्ञानें इण जीव री, वय सगली वोली।
आदर पर उपगार हिव मन आणि इलोली,
सुखदाइ धर्म सीख सुणि तत लीजै तोली ॥ ७ ॥

वैराग्य सज्भाय

ढाल—मुरली बजावै जी आवो प्यारो कान्ह—

जोबनीयो जायै छै जी लेज्यो कांइक लाह।
परवत थी उतरतौ पाणी, कहौ फिर चढ़ै न काह जो० ॥ १ ॥

चित्त धरज्यो धर्म चाह, यौबनीयौ ।।आंकणी।।
च्यार दिनां री एह चटक छै नेट नहीं निरवाह ।।जो०।।
यौवन रूप अथिर ए जाणौ, ज्युं बीजली जल वाह ।।जो०।।२।।
भव इण जो तुं करिस कमाइ, (भलाइ) तौ सहु करिस्यै सराह ।
बल चलिस्यै नहीं आये बूढ़ापा, रोकै चंद ज्युं राह ।।जो०।।३।।
पाको पीलौ पान पीपल नो, थिर न रहै इक थाह ।।जो०।।
ज्युं आया त्यौं सगला जास्यैं, सिरखा रंक पतिसाह ।।जो०।।४।।
रंग पतंग तणै मत राचौ, काचौ घट कलि माहि ।।जो०।।
कहै धर्मसी भलपण करिवा, आदर करज्यो उमाह ।।जो०।।५।।
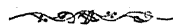
वैराग्य सज्झाय

करिज्यो मत अहंकार ए तन धन कारिमा,
हिव लही नर अवतार तुं आलै हारि मा ।
बावरीयउ नहीं हाथ जिणइ इण वार मां,
माणस हुइ दस मासे मारी भार मां ।। १ ।।
आचरिज्यो उपगार तरुण वय आज री,
दिन दिन जास्ये देह जरा ये जाजरी ।
उठणन हुस्यै आय काय किण काजरी,
सत्त नही नही स्वाद ज्युं बोदी बाजरी ।।२।।

ठगै काल आउ धन किम करि ठाहरै,
सिंहा री जिम छानो माखण साहरै।
कोइ जाणे नहीं ले जास्यै काहरै,
वैगा होइ चढ़ो हिव किण हिक वाहरै ॥ ३ ॥

दोइ दोइ तरवार कटारि दावता,
जोरावर जोधा करै जे जावता।
करतां मौजां फौजां मांहि फावता,
सुभट तिको पिण काल न राख्या सावता ॥४॥

जड़ीयउ कुविसन जीवज्यु तणीए ताकड़ी,
फैलैं लोकां माहि कुजसनी फाकडी।
पापैं तो पिण राचि रह्यौ हठ पाकड़ी,
पीतौ दूध विलाड़ मिणै नहीं लाकड़ी ॥ ५ ॥

जीव जंजाले उलझ्यो ज्यु जोगी जटा,
पाचैं पाम मंझार ज्यु भोभर में भटा।
नाणैं मन में धरम करै साटा नटा,
घेरी जास्यै काल जेम वाउलि घटा ॥ ६ ॥

भव भव भमते परवसि प्राणी वापडें,
कोडि सह्या जो कष्ट सूजी वसि कापडै।
बिलवै जीव घणुं ही तलफैं तापडै,
आखर अपणी कीध कमाइ आपडै ॥ ७ ॥

परनै वंचै संचै पोते. पापरो,
ए तु पोखे पिंड नहीं ते आपरौ।

खोटो चोर वसैं जिण मैं मन खापरौ,
तप हथियारे तोडि तुं तिण रो टापरौ ॥ ८ ॥
सुहिणां माहै रांक हुऔ राजा सही,
मन माहे खुसीयाल हरष मावै नहीं ।
मोजै पहिर्‍यां मांणिक मोती मुंदडा,
जागी जोवैं गोढ़ै घर रा गूदड़ा ॥ ९ ॥
जुड़ियौ तिम संबंध सहु सुहिणा जिसौ,
वीखरतां नहीं वार गरथ गारब किसौ ।
देइस जोतुं कांन सुगुरू वचनां दिसौ,
तौ दुख नहीं जिण ठाम लहिस थानकतिसो १०
क्रोध मान माया वलि लोभ मतां करौ,
दान शील तप भाव अमल मन में धरौ ।
विजयहरष जसवास सु लोकां में वरो,
धरमसीह कहै एक धर्म मन में धरो ॥ ११ ॥

—❀—

हितोपदेश स्वाध्याय

राग सामेरी

चेतन चेत रे चलि मां चपलाइ, सुगुरु कहै छै साचौ ।
संबल काइंक लेजो साथे, काया घट छै काचौ । चेतन । १ ।

पूर्व पुन्यइ नर भव पायौ, उत्तम कुल पिण आयौ।
सगली बात विशेषे समझ्यौ, सुकृत संच सवायो। चे०। २।
वहे जीव वलि झूठौ बोले, राखैं पर धन राचैं।
मैथुन सेवे परिग्रह मेले, परिहरि आश्रव पांचे। चे० ३।
च्यार कषाय तिके चकचूरौ, बंधन त्रोडो वेही।
कलह कलंक न करि तुं निंदा, करैं अरति रति केही। चे०। ४।
परिहरि तुं परही पिसुनाइ, माया मोस म धारैं।
मन मांहे मिथ्यात न आणैं, ए छै पाप अढारैं। चे०। ५।
म रमे जूऔ आमिष मदिरा, वलि वेश्या नी वाते।
आहौडौ चोरी पर स्त्री, सवला कुविसन साते। चे०। ६।
वाइ माइ आई वावड, सहु संसार सगाई।
स्वारथ काज मिल्या छै सगला, साथैं धरम सखाइ। चे०। ७।
सांझइ भेला आइ सराहइ, हेकण हाटइ हूया।
परभाते पौताने पंथे, जाय सहु को जूआ। चे०। ८।
जोरैं रीस रहे छै जलतौ, तल तौ छाती ताती।
जोतां जोतां में जलि जासी, वीतइ तेलइ वाती। चे०। ६।
सींग मांडइ छइ सहु सुं साम्हा, ऊंचौ रहै छै ऊडी।
तूटी झोरि किहां ही पडसी, गुडथल खाती गूडी। चे०। १०।
मोसै लोक घणा करि माया, वगलौ होइ अबोलो।
दोलै ताकि रह्यौ छै दुस्मण, सीधे हाथ गिलौलो। चे०। ११।
लोभै लागौ खाय नै खरचै, रांक मनैं लछि राखी।
घाटौ मिलीयां हाथ घसेलौ, महु त्रुटै जिम माखी। चे०। १२।

जतने राखीजें जीवाणी, पाणी छांणे पीजें ।
सहु ठामें परिणांम दयारां, रूडी विधि राखीजें । चे० । १३ ।
दया धरें ते न हुवें दुखीया, विनय कियां जस वारू ।
सद्‌गुरू सीख कहे छै सखरी, साचवणीं तुम्ह सारू । चे० । १४ ।
सहु संसार अथिर समझी नें, कोई प्रमाद म करिजो ।
विजयहरष सुख साता वंछो, धरम सीख चित्त धरिज्यौ ।चे०।१५।

:—:—:

सप्त व्यसन त्याग सझाय

ढाल-चतुर विहारी रे आतमा

सात विसन नौ संग रखे करौ,
सुणि तेहनो सु विचार । विवेकी ।
सात नरक ना भाइ सातए,
आपइ दुख अपार । विवेकी सा० ।। १ ।।
प्रथम जूआ नै विसन पड्यां थकां,
पांडव पांच प्रसिद्ध । विवेकी ।
नल राजा पिण इण विसने पड्यां,
खोइ सहु राज ऋद्धि । विवेकी सा० ।। २ ।।
बीजैं मास भखण अवगुण घणा,
करि पर जीव संहार । विवेकी ।

महाशतकनी नारि रेंवती,
नरक गइ निरधार। विवेकी सा० ॥ ३ ॥
तीजौ मदिरापान व्यसन तजि,
चित्त धरी वलि चाहि। विवेकी सा०।
दीपायन ऋषि दूहव्यौ जादवै,
द्वारिका नो थयौ दाह। विवेकी सा० ॥ ४ ॥
चौथे विसने वैश्या नै वसै,
लोक में न रहे लाज विवेकी।
कयवन्नादिक नौ गयौ कायदौ,
कुविसन विणशै काज। विवेकी सा० ॥ ५ ॥
पाप आहेडे कुविसन पांचमै,
प्राणी हणिय प्रहार । विवेकी ।
मारी मृगली श्रेणिक नृप गयौ,
पहिली नरक मंझार वि० सा० ॥ ६ ॥
छठै चौरी नै कुविसन करी,
जीव लहै दुख जोर । वि० ।
मूलदेव राजाये मारीयौ,
चावौ मंडक चौर। वि०। श० ॥ ७ ॥
परत्रिय संगत कुविसन सातमै,
हाणि कुजस बहु होइ । वि० ।
राणै रावण सीता अपहरी,
नास लंका नो रे जोय। वि०। सा०।८।

इम जाणी भव्य प्राणी आदरो,
सीख सुगुरु नी रे सार । वि० ।

इण भव पावइ आणंद अति घणा,
कहै धर्मसी सुखकार । वि० । सा० ॥६॥

—:०:—

तम्बाकु त्याग सज्झाय

ढ़ाल-आज निहेजो दीसै

तुरत चतुर नर तम्बाकू तजौ, इण में दोष अनेक ।
विरती करौ पाछौ मन वालिनै, वारू धरिय विवेक ।१। तुरत०

स्वाद नहीं इण मांहि सर्वथा, मांहे नहींय मिठास ।
दूषण देखे तो पिण नवि तजै, पडियौ विसन नै पास ।२। तुरत०

कुटउ एह अंछौ छकायनौ, सुंस करौ मन शुद्ध ।
पोतै पुण्य हुवै तो तुम पियौ, दही घृत साकर दूध ।३। तुरत०

होठ विन्हेइ दांत काला हुवै, वलि मुखि मुंडी वास ।
बलै तम्बाकू तिम छाती बलै, सोषायै तिम स्वास ।४। तुरत०

नइ एंठी मुख घालै नविगिणै, काइ जात कुजात ।
पर नौ थूक तिकौ मुंह में पडै, विसन तणी ए वात ।५। तुरत०

ढाल (२) कर्म परिक्षा करण कुंवर चल्यौ । एहनी ।

सूक्ष्म पांचै काय संसार मैं रे, ठावा सगली ठाम ।
धुअैं करि नै तेह धुखाइयै रे, अधिकी हिंसा छै आंम ।६। तुरत०

वनस्पति फुलणि वरसात में, उत्पति जीव अपार।
पाणी तम्वाकू नौ जिहां पडै रे, सहुनो होइ संहार।७। तुरत०
चिलम भरै हाथा सु चोली नै रे, अंधारा में आइ।
केइ कीड़ा माखी कंथूआ रे, मांहि घणा मसलाइ।८। तुरत०
जांणै नहीं छै तु हिव जीवड़ा रे, प्रकट करै छै पाप।
वैर पौतानौ ए सहु वालिस्यै रे, ए दुख सहिस तु आप।६। तु०
तोवाकू छै नामैं तेहनै रे, तंवाखू वलि तेम।
नाम तणौ पिण अरथ भलौ नहीं रे, कहौ पीवे गुण केम।१०। तु०
वजर पीयै ते वजर हीयौ हुवै रे, वज्र करमी कहिवाय।
वज्रलेप लेपायै ते वली रे, नाम दियौ वज्र न्याय।११। तु०
पर नै आदर करि नै पावतां रे, पापै भरियै रे पिंड।
आरंभ ते पिण लागै आपनै रे, पछइ अनरथ दंड।१२। तु०
पुन्य संयोगे नर भव पांमियौ रे, श्रावक नौ कुलसार।
विसन तम्वाकू नो तुम्है वारज्यौ रे, इण में पाप अपार।१३।तु०
एसांभलि नै कांइक ओसरै रे, जेह हुवै भव्य जीव।
धर्मनी सीख धरौ कहै धर्मसी रे, ज्यु सुख लहौ रे सदीव।१४।तु०

—:०:❀:०:—

रात्रिभोजन सभाय

ढ़ाल-केसरीयौं हाली हल खड़े हो

कर जौडि कामण कहै हो, कंत भणो सुखकार ।
भोजन रात्रि नहीं भलौ, इण मांहे हो इण में दोष अपार ।
पिउ रात्रिभोजन परिहरौ हो,
सहु मांहे हो सहु में ए धर्म सार ।पि०।
वलि मन सु हो मन सु जोइ विचार । पिउ ॥ १ ।

आहार मांहे आवतां हो, जीव इता दिन ज्यांन ।
कीड़ी तो निरबुद्धि करै,
वलि माखी हो माखी वमन विधान । पि० ॥२।

कोढ करै कुलियातड़ो हो, जुंअ जलोदर जेह ।
कांटौ फांटौ काकरौ, तिम वीधै वीधै हो तालुओ तेह ।पि०॥३।
आवी वाल गलैं अडै हो, साद रहै ग्रहैं सोष ।
जोवौ थे निस जीमतां, ए तो दीसे हो दीसे
परतिख दोष । पि० ॥ ४ ।

पंच महाव्रत पाखती हो, ए छट्ठो व्रत अैन ।
पालैं जेह भली परै, जगि जांणो हो जांणो ते शुद्ध जैन ।पि०॥५।
शिव पिण ते चौमास में ह्रो, जीमैं नहीं निशि जांण ।
इण व्रत लाभ घणो अछै, इम अधिकै हो अधिकौ हिज
फल आण । पि० ॥ ६ ।

सांभलियै शिव शासनै हो, सहु मान्या नहीं सुंस।
वनमाला लखमण भणी,
इण सुंसै हो दीध विदा भली हूंस। पि०। ७।
सूरज आथमियै ही हो, अभख समौ अनपांन।
व्रत पालै मन वालि नै सुख पामै मोक्ष प्रधान। पि०। ८।
हितकारी सहु में हुवे हो, एह भलौ उपदेस।
श्रीधर्मसी कहै सांभलौ,
ग्रहि लेज्यो हो लेज्यो ज्युं गुरु सेस। पि०। ६।

:—:—:

औपदेशिक पद

(१)

राग—भैरवी

ज्ञान गुण चाहै तो सेवा कर गुर की,
घृत नाली जैसी जाकी गाली घुरकी।
कोउ पढौ हिन्दुगी को कोऊपढौ तुरकी,
इक गुरु संगकुलफ खुलै उर की। १। ज्ञा०।
जानतौ न अच्छर सो जानै वानी सुर की,
प्रगट वचनसिद्धि सिद्धि शिवपुर की। २। ज्ञा०

दिन सुध भजि तजि सुर का दुर की ।
धर हित धारि धरमसीख धुर की । ३ । ज्ञा० ।

(२)

राग—वेलाउल

सुग ग्यानी संभाल तुं अब अप्पा अप्पणा ;
निसनेही सुं नेह सों विनु ऋहैं वपणा ।
स्वारथ को संसार है सुख जैसा सपना ;
च्यार घड़ी की चटक है ज्युं तिलका तपना । २ । सु० ।
धीरज आऊ छिन छिनै ज्युं करवत कपना ;
धरि सुवुद्धि श्रीधरमसी थिर शिव पद थपना ।३। सु० ।

(३)

राग—वलाउल

गुणग्राहक सो अधिको ज्ञानी, अवगुण ग्रहिवो सोइ अग्यानी;
अवगुण गुण रहइ एकहि आश्रय,
पिण विष तजि करि अमृपान । १ । गु० ।
परनिंदा करिकै तुं प्राणी, मल सुं मुख क्यों करे मलान ;
अपनी करणी पार उतरणी,
तुं क्युं फोगट करैय तोफान । २ । गु० ।
दूर सुं डूंगर वलती देखै, पग-तल जलती क्युं न पिछान ;
धर्मसीख जौ इतनी धारै, तौ हुइ तेरै कोड़ि कल्याण । ३ । गु० ।

(४)

राग वेलाउल, अलहीयउ

मूढ मन करत है ममता केती ।
जासुं तुं अपणी करि जाणत, साइ चलै नहीं सेती । १ । मू० ।
माया करि करि मेलत माया, काणी करत कुवेती ।
देखत देखत आए परदल, खाइ गए सब खेती । २ । मू० ।
पल पल पवन सुं उलट पलटसी, रहत न थिर ज्युं रेती ।
धर तुं रिद्धि धरमवरधन को, या सुखकारक जेती । ३ । मू० ।

(५)

राग—रामकला

मेरे मन मानी साहिब सेवा ।
मीठी और न कोइ मिठाइ, मीठा और न मेवा । मे० । १ ।
आत(म) राम कली ज्युं उलसे, देखण दिनपति देवा ।
लगन हमारी यों सों लागी, रागी ज्युं गज रेवा । मे० । २ ।
दूर न करिहुं पल भर दिल तें, थिरयुं मुंहरी थेवा ।
श्रीधर्मसी कहै पारस परसैं, लोह कनक करि लेवा । मे० ।३ ।

(६)

राग—ललित

करहुं वश सजन मन वच काया ।
और मसकीन हो, वश की न होक्त कहा,
ए महा मत गज कवज नाया । १ । क० ।

तुरग ज्युं चपल अति उरग ज्युं वक्रगति,
ठगत जिन जगत आया ठगाया ।
वचन वहु वंचन सत्य जहाँ रंच न,
कंचन कामिनी लोभ लाया । २ । क० ।

खह की गेह इण देह सुं नेह खिण,
छिन ही बदलात ज्युं बदल छाया ।
आप प्रभात प्रभात प्रगट्यो प्रगट,
उदय धर्म-शील उपदेश आया । ३ । क० ।

(७)

राग—वसंत

वह सजन मेरे मन वसंत,
उनके गुण सुनि अंग उलसंत । व० ।
तजि क्रोध विरोध हिते त्रसंत,
पर निंदाने परहा नसंत । १ । व० ।
खलता करि कोऊ कैसे खसंत,
हठता शठता तजि कहै संत । व० ।
प्रभुता अपणी नही प्रशंसत फंतु,
आफि सीयाद मैंना फसंत ।२।व०।
शुभ ध्यान विज्ञान मांहे धसंत,
वाणी अमृत रस वरसंत । व० ।
करि विनय विवेक काया कसंत,
साचा श्रीधर्मसी उहिज संत ।३।व०।

(८)

राग—प्रभाति जाति

प्रणमीजे गुरु देव प्रभाते,
बोलें मत दिन विकथा वाते । १ । प्र० ।
मूके मत त्युं पंच पंच मिथ्याते,
समकित धर गुण पंच संघाते । २ । प्र० ।
दिल शुद्ध धरि धर्म-शील दयाते,
सहु विध थाय सदा सुख साते । ३ । प्र० ।

(९)

राग जैतश्री

सब में अधिकी रे याकी जैतसिरि,
काहू और न होड करि । १ । स० ।
आठौ अंग योग की ओटें
उद्धते मार्यो मोह अरी । स० ।
अंतर बहि तपतेज आरोवे,
जोर मदन की फौज जरी । २ । स० ।
ज्ञानी हनी ज्ञान गुरजा सुं,
ममता पुरजा होइ परी । स० ।
अनुभौ बलसुं भव दल भागे,
फाल फते करि फौज फिरी । ३ । स० ।
श्री धर्मसी आतम नृप दाता,
देत सदाना मुक्तिपुरी । ४ । स० ।

(१०)

राग—आशा

आतम तेरा अजब तमासा।
खलक सुं खेल बणावे खोटा,
खिण तोला पुनि खिण में मासा ।१।आ०।
परणी अपनी तजि प्यारी,
और सुं अधिकी आसा।
पद्मनी छोर संखनी परचै,
एक तो दुःख अरु दूजा हासा ।२।आ०।
दीपक बुझाइ अंधेरे दोडें,
फंद बिचे पग फासा। आ०।
परच्या धर्म-शील सुं पावै,
अविचल सुख लील विलासा ।३।आ०।

(११)

राग—आसा

कबहु में धर्म को ध्यान न कीनो।
आर्त रौद्र विचार अहोनिश,
दुर्गति घर करिवें थर दीनो। क०। १।
दीप ज्युं और न पंथ बतायो,
आप ही लागि रह्यो तमसीनौ।
मेरे तन धन कहि सुख मान्यो,
मणि परखे पिण अंतर मीनौ। क०। २।

परमारथ पथ नाहिं पिछान्यो,
स्वार्थ अपनो मानी सगीनो।
सुगरु कहे धर्मसीख न धारी,
निष्फल गयो नर जन्म नगीनो। क०। ३।

(१२)

राग—तोड़ी

तुं करे गर्व सो सर्व व्यथारी।
स्थिर न रहे सुर-नर विद्याधर,
ता पर तेरी कौन कथारी। तु०। १।
कोरिक जोरि दाम किये इक ते,
जाकैं पास विदाम न थारी।
उठि चल्यो जब आप अचानक,
परिय रही सब धरिय पथारी। तु०। २।
संपद आपद दुंहु सोकनि के,
फिकरी होइ फंद में फथारी।
सुधर्म शील धरें सोउ सुखिया,
सुखिया राचत मुक्ति मथारी। तु०। १३।

(१३)

राग—मारू

वारू वारू हो करणी वारू हो।
पांमै सुख दुख प्राणीयो, सहु करणी सारू हो। क०। १।

एका रै धन मिलै, मोटा थल मारू हो।
एक एकही टंक नैं, अन्न आणें उधारू हो। क०। २।
मोटा माणस इक मुदै, एक कांजर कारू हो।
के नीरोगी काय के, नित रीवै नारू हो। क०। ३।
दौलति लहीये दान, सील सद्गति सारू हो।
जागे तख की जाम की, उड जायै दारू हो। क०। ४।
भावना मन शुद्ध भावियै, सहु बात सुधारू हो।
धन धर्म-सील जिके धरै, ते भव जल तारू हो। क०। ५।

(१४)

राग—नट्ट

नट बाजी री नट बाजी, संसार सबही नट बाजी।
अपने स्वार्थ कितने उजरत, रस लुब्धो देखन राजी। सं०। १।
छिकरी ककरी के करत रुपये, वह कूदत काठ को बाजी।
पंख ते तुरत ही करत परेवा, सबही कहत हाजी हाजी। सं०।२।
ज्ञानी कहै क्या देखे गमारा, सबही भगल विद्या साजी।
मगन भयो धर्मसीख न मांनत,
जो मन राजी तो क्या करे काजी। सं०। ३।

(१५)

राग—बेहागडो

ठग ज्युं इहु घरियाल ठगे।
घरि घरि जातु है रहट घरी ज्युं, लेखे न कोइ लगैं।१। ठग ज्यु०।

इण खिण पिण न मिले आउखो, मोल दये मुंह मंगे।
खैरु होत है औसौं खजीनो, जीवन तौहि जगे। २। ठग०।
ठग काल सुं जोर नहीं काहुको, देत ही सवहिं दगै।
धर्मसीख कहै इक ध्यान धर्म को, भय सव दूर भगे। ३। ठग०।

(१६)

राग केदारौ

कलि में काहु को नहीं कोइ।
तामें मूरख अधिक तृसना, तजै नाही तोइ। १। कलि०।
काहू सो उपगार करिवो, सार जग में सोइ।
जीव रे तुं चेत जोलुं, देखवै की दोइ। २। कलि०।
काल दुस्मन लग्यो केरैं, जागि के तुं जोइ।
धर्मसी इक धर्म सवकुं, हित हित को होइ। ३। कलि०।

(१७)

राग—गौडो

जीव तुं करि रे कछु शुभ करणी।
और जंजाल आल तजि जो तुं, मुक्ति गौरी चाहे परणी। १। जी०।
मात तात सुत भ्रात सकल तजि, तज दूरे घरणी।
जास संग पापाग्नि प्रकटत, आक अनै ज्युं अरणी। २। जी०।
जौ लु स्वार्थ तौलुं सगपण, नहीं तरं आवत लरणि।
ऐसो जाणी पाप गज भंजण, धर्म सिंह धरौ सरणी। ३। जी०।

(१८)

राग—गौडी

कछु कही जात नहीं गति मन की ।
पल पल होत नई नइ परणति, घटना संध्या घनकी । क० । १ ।
अगम अथग मग तुं अवगाहत, पवन के धज प्रवहण की ।
विधि विधि बंध कितेही बांधत, ज्युं खलता खल जनकी ।क०।२।
कवहु विकसत फुनि कमलावत, उपमा है उपवन की ।
कहै धर्मसींह इन्है वश कीन्हे, तिसना नहीं तन धन की ।क०।३।

(१६)

राग—सांमेरी

दुनियां मां कलयुग की गति देखो ।
किह पाई काई अधिकाई, उणको करेय अदेखो । १ । दु० ।
अनुचित ठौरें खरच अलैखैं, लेत सुकृत में लेखो ।
माननि कह्यो साच करि मान्हो, घर पित मात सुं धेखो ।२।दु.।
करि वहु प्यार पढ़ाइ कियो है, सुविज्ञानी सुविसेखो ।
कहे धर्मसीह करे ताही सुं, पीछी फेरि परेखो । ३ । दु. ।

(२०)

राग—सामेरी

मन मृग तुं तन वन में मातौ ।
केलि करे चरै इच्छाचारी, जाणें नही दिन जातो । मन. । १ ।
माया रूप महा मृग त्रिसनां, तिण में धावे तातो ।
आखर पूरी होत न इच्छा, तो भी नहीं पछतातो । मन. । २ ।

कामणी कपट महा कुडि मंडी, खबरि करे फाल खातो।
कहे धर्मसीह उलंगीसि वाको, तेरी सफल कला तो। मन.।३।

(२१)

राग—कल्याण

हुं तेरी चेरी भई; तुं न धरे हेत रे।
एक पखी प्रीति कौसौं, आइ बण्यो वेतरे।१।हुं.।
दूर छोड जाइ कै, संदेसहु न देत रे।
लोक लाज काजहुं न, मेरी सुधि लेत रे।हुं।२।
तुं ठौर ठौर करै और सुं संकेत रे।
रंग विना संग करै, तामें परो रेत रे।हुं.।३।
तोही सुं सचेत में तौं, तो विन अचेत रे।
मेरो धर्मसील रहै, तोही सुं समेत रे।हुं०।४।

(२२)

राग—जयवंती

काया माया बादल की छाया सी कहातु है।
मेरो वैन मान यार, कहत हुं बार बार।
हित ही की बात चेत, कहा न गहात है।का०।१।
नीकै दिल दान देहुं, लोकनि में सोभ लेहु।
सुंब की विसात भैया, मोहे न सुहात है।का०।२।
खाना सुलतानां, राउ राना ही कहाना सब।
बातनका बात जग कोऊ न रहात है।

ऐसो कहै धर्मसिंह, धर्म की गहो लीह।
काया माया बादर की छाया सी कहात है। का० । ३ ।

(२३)

राग—सौरठा

रे सुणि प्राणिया, लही गरथ अरथ अनेक, म करे गर्व रे।
बहि जाइ, एकैंजहि प्रवाहैं, सबल निबला सर्व रे । सु० । १ ।
चंद सूर ही राहु चिगल्या, प्रगट जोइ तु पर्व रे ।
नर असुर सुर सहु काल नांख्या, चबीणा ज्यु चर्ब रे । सु० ।२।
मूढ़ धी पुदगल पिंड मैलें, अरथ अर्ब ने खरबरे ।
सुज्ञान सु धर्मशील सुखियो, देखि आत्तम दर्व रे । सु० । ३ ।

(२४)

राग—काफी

मानोवैंण मेरा, यारो मानो वयणा मेरा ।
सैंन तु मोह निद्रा मत सोवे, है तेरे दुस्मन हेरा । यारो ॥१॥
मोह वशे तु इण भव मांहे, फोगट देत है फेरा ।
यार विचार करो दिल अंतर, तु कुण कौन है तेरा । यारो॥२॥
कीजै पर उपगार कछु इक, लीजै लाह भलेरा ।
धर्म हितु इक कहैं धर्मसी और न कछु अनेरा । या० ॥३॥

(२५)

राग—धन्याश्री (कबहु मैं नीके नाथ न ध्यायो)

किण विध थिर कीजे इण मनकु ।
वचन करूं वशि मौन ग्रहैते, त्योंथिर आसन तनकुं । किन ।१॥

मन उद्धत इन्द्रिय सुं मिलकैं, धूरि करैं तप धनकुं ।
यह चंचल शुभ क्रिया उड़ावैं, ज्युं वायु मिली घन कुं ।कि०॥२॥
मन जीते विन सबही निःफल तुस बोए तजि कनकुं ।
मन थिर कुं धर्म सीख बतावइ,
सुगरु कहै शिष्यजनकुं । कि० ॥३॥

(२६)

राग—धन्याश्री (आयो २ री समरंता दादो आयो)

कीजइ कीजै री, मन की शुद्धि इण विध कीजै ।
आलस तजि भजि समतारसकुं, विषयारस विरमीजैरी ।म०॥१॥
राग नै द्वेष दुहुं खल कै बल, मन कसमल मल भीजे
दे उपदेश दुहुं दुस्मन को, ताथइ संग तजीजैरी । म० ॥ २ ॥
शुद्धातम कइ ध्यान समाधि हि, परम सुधारस पीजे ।
श्रीधर्मसी कहै थिर चित कारण,
कारिज अलख लखीजै री । म० ॥३॥

(२७)

धन्याश्री

धर मन धर्म को ध्यान सदाइ ।
नरम हृदय करि नरम विषय में, करम करम दुखदाइ ।ध० ॥१॥
धरम थी गरम क्रोध के घर में, पर मत परम ते लाइ ।
परमातम सुधि परमपुरष भजि, हर म तु हरम पराइ । ध०॥२॥
चरम की दृष्टि विचर मत जीउरा, भरम रे मत भाइ ।
सरम बधारण सरम को कारण, धरमज धरमसी ध्याइ ।ध०॥३॥

धमाल (वसंत वर्णन)

ढाल-फागनी

सकल सजन सैली मिली हो, खेलण समकित ख्याल ।
ज्ञान सुगुन गावै गुनी हो, खिमारस सरस खुस्याल ॥१॥
खेलो संत हसंत वसंत में हो,
अहो मेरे सजनां राग सु फागरमंत । खे० ॥२॥
जिनशासन वन माहे मौरी विविध क्रिया वनराय ।
कुशल कुसम विकसित भये हो, सुजस सुगंध सुहाय । खे० ॥३॥
कुहकी शुभमति कोकिला हो, सुगुरु वचन सहकार ।
भइ मालति शुभ भावना हो, मुनिवर मधुकर सार । खे० ॥४॥
प्रवचन वचन पिचरका वाहै, यार सु प्यार लगाइ ।
शुभ गुण लाल गुलाल की हो, भोरी भरी अतिहि भुकाइ ॥५॥
वर महिमा मादल बजे हो, चतुराइ मुख चंग ।
दया वाणी डफ बाजती हो शोभा तत्व ताल संग । खे० ॥६॥
राग सहित जिनराज आलापै, दौलति सु निसदीह ।
सब दिन विजयहर्ष सुख साता, धमाल कहै धर्मसीह ॥७॥

उपदेश

अब तौ सब सौ वरसां लगि आउसु,
तामें तो आध गयौ निसि सूतां ।
चौस गयाँ रस रामति रौस,
खटै गृह धंध कै धुंस में खूतां ॥

केस भए सब सेत तु चेत रे,
देख दिखाउ दियो जमदूतां।
जातैं सबैं अपनौ कछु स्वारथ,
सो श्रमसील धरौ रे सपूतां ।।१।।

प्रस्ताविक विविध संग्रह

सरस्वती स्तुति

अगम आगम अरथ उतारै उर सती,
वयण अमृत तिके रयण ज्युं वरसती ।
हुअइ हाजर सदा हेतु आ हरसती,
सेविजै देवि जै सरसती सरसती ॥ १ ॥
विद्या दे सेवकां विनौ वाधारती,
अडवड्यां सांकडी वार आधारती ।
इंद नरिंद जसु उतारे आरती
भणां तुझ नैं नमो भारती भारती॥ २ ॥
वेलि विद्या तणी वधारण वारदा,
हुआ प्रसन्न सहु पामिजे हारदा ।
प्रसिद्ध सकल कला नीरनिधि पारदा,
शुद्ध चित्त सेव नित सारदा सारदा ॥ ३ ॥
अधिक धर ध्यान नर अगर उखेवता,
व्यास वाल्मीक कालीदास गुण वेवता ।
सुवुद्धि श्री धर्मसी महाकवि सेवता,
दीयह सहु सिद्धि श्रुतदेवता देवता ॥ ४ ॥

परमेश्वर

सहि सबलां निबलां करें संभाला,वलि नहि ईस विसरण वाला ।
जीव पडें मत वहु जंजाला, प्रभु साचा सहुचा प्रतिपाला ॥१॥

मेंगल लहैं मलीदा मण मण, कीडी उदर भरैं ताइ कण कण ।
जितरौ वरौ जियैं जण जण, पूरैं तितो ईस आपण पण ॥२॥
चूण दियें सहु नें विधि चंगी, हसती गंज रंज हीनंगी ।
अति अंदोह धरैं मत अंगी, साहिव आस पूरै सरवंगी ॥ ३ ॥
श्रविजै सदा चूरमे थिथंगर, चीटी चख इक चूण लहै चर ।
धर्मसीह मन चिंत मतां धर, पूरण आस सहु परमेसर ॥ ४ ॥

सूर्य स्तुति

हुदैं लोक जिण रैं उदै,
मुदै सहु काम ह्वै पूजनीकां सिरै देव पूजौ ।
साचरी वात सहु सांभलौ सेवकां,
देव को सूर सम नहीं दूजौ ॥ १ ॥
सहस किरणा धरै हरै अंधकार सही,
नमैं ग्रहसमै तियां कष्ट नावै ।
प्रगट परताप परता घणा पूरतौ,
अवर कुण अमर रवि गमर आवै ॥ २ ॥
पडि रहै रात रा पंखिया पंथिया,
हुवै दरसण स कौ राह हींढें ।
सोभ चढ़े सुरां सुरां असुरां शिहर,
मिहर री मिहर सुर कवण मीढ़ें ॥ ३ ॥
तपे जग ऊपरा जपै सहु को तरणि,
सुभां अशुभां करम धरम साखी ।
रूड़ा ग्रह हुवइ सहु रूडैं ग्रह राजवी,
रूडां रजवट प्रगट रीति राखी ॥ ४ ॥

दीपक—छप्पय

अलग टलै अंधार, सार मारग वलि सूझै ।
जीव जंतु जोइ नें, सरव विवहार समूझइ ॥
मन संशा सहु मिटै, वलि पुस्तक बांचीजै ।
दिल सुद्ध गुरुदेव नैं, रूप दरसण राचीजै ॥
वलि लाछि आइ वासौ वसइ, सुख पावै सहु सेवता ।
सहु लोक मांहि दीसै सही, दीवौ परतिख देवता ॥ १ ॥

पर उपकार—घरा कट्ठ सांणोर

दुनी दाम खाटै केता केइ दाटे दरब,
नाट नाटे घणा साट माटै ।
बाट पाडै तिकौ काल वाटै वहै,
खट्यो सो पर कजू विरुद खाटै ॥ १ ॥
कीयां चढ़ि चोट गढ़ कोट कबजै किया,
वहस छल बल प्रबल किया बीया ।
हालिया किता ने किता वलि हालसी,
जियां गुण किया तियां धन जीया ॥ २ ॥
हुकम सुं हल चलां उथल पथला हलां,
करौ अकलां गलां बात काइ ।
चहल वहला चलें चट्टक दिन च्यार री,
भलां री भलां एक रहसी भलाइ ॥ ३ ॥
भार कोठार भंडार लोभै भर्या,
वार सहु सारखी कठैं वहसी ।

साच कर धार 'धर्मसी' संसार में,
रिधू जग सार उपगार रहसी ॥ ४ ॥

मेह (वर्षा)

सबल मेंगल वादल तणा सज करि,
गुहिर असमाण नीसाण गाजैं ।
जंग जोरैं करण काल रिपु जीपवा,
आज कटकी करी इंद राजैं ॥ १ ॥
तीख करवाल विकराल वीजलि तणी,
घोर माती घटा घर र घालै ।
छोडि वासां घणी सोक छांटां तणी,
चटक माहे मिल्यौ कटक चालै ।
तडा तड़ि तोव करि गयण तडकै तड़ित,
महाझड़ झड़ि करि झूझ मंड्यौ ।
कडा किडि कोध करि काल कटका कीयौ,
खिणकरैं वल खल सबल खंड्यौ ॥ ३ ॥
सरस वांना सगल कीध सजल थल,
प्रगट पुहवी निपट प्रेम प्रघला ।
लहकती लाछि वलि लील लोको लही,
सुध मन करैं धर्म-शील सगला ॥ ४ ॥

मेह (वर्षा) गीत

मंडि झड़ घमंड कर ईस ब्रह्मण्डरा तुझ घर मांहि किण बात त्रोटा।

सार इतरी गरज परज री अरज सुणि,
मेह करि मेह करि धणी मोटा।
खेत कुम्हाइजैं रेत उडैं खरी, हेति हिनूआं गया चेत हारे।
वैंत एहैं धरौ नितरी वीनती, ध्रवौ करतार जलधार धारै ॥२॥
घणैं धन होइ धन धांन धीणा घणा,
पाल्हवै भार अड्डार प्राम्भा।
दरद मन रा मिटै मिटै जगरा दलिद,
जलद वरसाइ जगदीस झाम्भा ॥३॥
सफल करि आस अरदास धर्मदास री,
तुरत तिण दीस जगदीस तूठा।
हुआ उमांह उछाह सगला हुसी,
वाह हो वाह जलवाह वूठा ॥४॥

मेह (वर्षा) अमृतध्वनि

जल थल महियल करि जलद, सहु जग होइ सुभक्ख।
इक घण तो अण आवतैं, दिखैं खलक सु दुख ॥ १ ॥
दिखैं खलक सु दुख खिजि खिजि,
सुख खिण नहीं दुख खिण खिण भुख।
खल हल करत्र खद्धिय, चख खड विण पख खय पशु।
कु ख खु ह वसि तुख खुटि खुटि, लुख खजि कजि।
लख खिजमति अखै खलक अरज्ज ॥१॥ जल थल महियल०

दोहा

जग सगलैं जगदीसरी, पूरण कृपा प्रसिद्ध।
घण वरष्यां हरख्या घणुं, सिद्ध धरि सहु रिद्ध ॥ १ ॥

चालि

सिद्धे द्धरि सहु सिद्धि, धन धन किद्ध, द्धरणिय वृद्धि द्धन्नह ।
खुद्ध द्धम, गय लद्ध धीरज, द्धुद्धु वि पुणि दद्धि द्धिप्पिय ।
रिद्धि द्धण भर वद्ध द्धामह दिद्ध द्धन रिण,
वुद्धि धर्मसी शुद्ध द्धरि हित सज्ज ॥ २ ॥ जग सगलैं जग०

—:०—:

सीत उष्ण वर्षा काल वर्णन

ठंड सवली पडें हाथ पग ठाठरें,
वायरौ उपरां सवल वाजै ।
माल साहिव तिकै मौज मांणे मही,
भूखियइ लोक रा हाड भाजै ॥ १ ॥
किड किडै दांत री पांत सीसी करै,
धूम मुख ऊखमा तणा धखिया ।
दुख सु ंगरव सौ जांणि गुजें दरक,
दरव हीणा सवै लौक दुखिया ॥ २ ॥
सौडि विचि सूइजे तापिजें सिगडिए,
सवल सी मांहि पिण सद्रव सोरा ।
एतिण वार में पांण ती ओजगी,
दोजगी भरै निसदिस दोरा ॥ ३ ॥
झाड उन्हाल री झाड ह्वै झाखरा,
जल तजे पालि पाताल जावैं ।
साधन वैठा पियै मालिए सरवतां,
निधन नइ पिण नीर हाथ नावैं ॥ ४ ॥

किसौ सीतकाल उन्हाल सखरौ कहां,
हुदो सुख दुख तणो देव हाथै ।
आवियै जेण संसार रो ह्वै उदौ,
मुदौ सब बात रो मेह माथै ॥ ५ ॥
धुरा जलधर ध्रुवैं धान धीणैं धरा,
सरस मानै सरह सको सरिखा ।
फसल फल फूल री हूंस सगले फलै,
बडी ऋतु सहु रित मांहि वरिषा ॥ ६ ॥
दुः काल वर्णन
मन मैं धरता मरट घरट जिम भूखैं घूमैं,
मेले घर गया मऊ भटकि मूआ पर भूमैं ।
बेटा नैं मा बाप बेचि द्यै जीमण वेइ,
रूलतां रिगता रांक करै बेललाटा केइ ॥ १ ॥
कोइ काल महा दुस्मण कहां, आखा देस उजाड़ीया ।
ए दैव वरस इकावनैं, पडतैं बहु नर पाडिया ॥ १ ॥
पण धरि वण पोखता निहोरे कण पिण नापैं,
कवल एक कारणैं बहस हुवै बेटा बापैं ।
हीओ माइ हारि नैं छोरूआं ऊभा छोड़ैं,
ऊचैं कुला आदमी आइ नीचा कर जोडैं ।
गति मत्ति उगति भूलै गइ, गिणै न को आभौ गिनो,
कोई आप पाप प्रगट्यो प्रबल एवो वरस इकावनो ॥२॥
दुनियां दीधौ दुख वरस इण इकावनैं,
पहुती जाय पुकार इन्द्र सांभलि विण अन्ने ।

आप कहायौ इन्द धीरज मन मांहे धरिजो,
बहु वरषा बावनो करिस सखरौ धर्म करिज्यो ।
धन धान घमंड धीणा घणा, परजा बहु सुख पावसी ।
सहु थोक भला होसी सरस, उमगि बावनौ आवसी ॥ ३ ॥
इकावन्ने आइ दुनी दुरभख दुलाइ,
काढ्यौ सौ कूटि नैं भीर बावनैं भाइ ।
बावनां बाहिरौ त्रिपट पड़ीयौ तेपन्नो,
दातारे तजि दूदौ, निपट करि झाल्यो नन्नो ।
काढ़िस्यौँ सोइ जिम तिम करैं, मत चिंता आणइ मनइ
सत झालि काल्हि सखरइ सुभिख, चहचंद होसी चोपनैं ॥४॥

कुस्त्री-सुस्त्री वर्णन

सुकलीणी सुन्दरी मीठ बोली मतिवंती,
चित चोखे अति चतुर जीह जीकार जपंती ।
दातारणि दीपती पुन्य करती परकासू,
हस्तमुखी चित्त हरणी, सेवि संतोपे सासू ॥१॥
सुकलीण शील राखैं सुजस, गहैं लाज निज गेहनी ।
धरमसी जेण कीधो धरम, तिण गुणवंत पामी गेहिनी ॥ २ ॥
गुण हीणी गोमरी वडक बोली बहु रंगी,
चंचल गति चोरती अधिक कुलटा ऊधंगी ।
सत विहुणी सुंवनी दूत जिती दुरभासू,
करणी घर में कलह, सूकती जायैं सासू ।
नाहरी नारी गूंजें निपट, धूजे नित घर रो धणी ।
धरमसी जेण न कियौ धरम, पामी इण परि पापणी ॥२॥

पुण्य पाप फल कथन

गीत सपखरौ ।

सझै साली चित्रसाली ढाली पौढै के सुहाली सेज,
खूंटाली कूटी में एक उखराली खाट ।
दिखाली विना ही भाली सुखाली दुखाली दसा,
नेह पाप पुण्य वाली विचाली निराट ॥१॥
सोना थाली माहे के आरोगै साली दाली,
सुखी बीया के हथाली, जिमैं पीयै बूक ।
एकां लील लाली लाली पाली, धंधाली जंजाली एक,
सढ़ाली अढालीवार कमाइ सलूक ॥२॥
एकां ऊन वाली छाली दूझाली न दीखैं एकां,
थूंभाली झमाली हेकां दूझैं काली थाट ।
सदारा सुगाली एक दुकाली किताक दीसै,
बंसाली कमाइ चाली वाली जायैं बाट ॥३॥
सम्भाली ल्यैं वडां सोह, सुचाली कलत्त सुत्त,
क्या करै कंकाली नाली अनाली कपूत ।
वांणी के रसाली वदैं विरसाली एकां वात,
कली कालि उजवालि आपरी करतूत ॥४॥
दाढ़ाली वाढ़ाली वंधै रंढ़ाली करतां दौड़,
मानै नहीं मच्छराली, मझाली मरम्म ।
उढ़ाली उलाली जग्गि, ताली दियै जायै आउ,
धारौ हितवाली बात, संभाली धरम्म ॥५॥

—:०:—

प्रभात आसीस—छप्पय।

आलस ऊंघ अज्ञान, तमस तस्कर पिण त्रसीया।
श्रावक साधु सुपात्र, वले धर्म करणी वसीया॥
पडिकमणा पचखांण, गुणे गुरुदेवां गावै।
सुणीजै झालर संख, सुकवि आसीस सुणावै॥
भलै भाव कमल विकसै भविक, महिमा जिन धर्म री सुदै।
सु प्रताप सयल मंगल सदा, अरक ज्योति धर्मसी उदै॥१॥

जव ऊगे जग चक्ख तिमिर जिण वेला त्रासै।
प्रगट हसै जव पद्म, इला जव होइ उजासै॥
चिडीयां जव चहचहै, वहै मारग जिण वेला।
धरम सील सहु धरै, मिलै जव चकवी मेला॥
घुम घुमै माट गोरस घणा, पूरण वंछित पाईयै।
जिनदत्तसूरि जिनकुशल रा, गुण उण वेला गाईयै॥२॥

संध्या आसीस—छप्पय

संध्या वंदन साध, सज्ज सावधान स कोइ।
विवेकी श्रावग सजै, पडिकमणा सोई॥
चौवीहार दुविहार ग्रहै, व्रत करि निज गरहा।
सारै दिन संचीया, पाप नासै सहु परहा॥
धर्म ध्यान साधु श्रावक धरै, धोरी धर्मरथ ना धुरी।
सुखकरण संघ धर्मसी सदा; सकतिरूप संध्या सुरी॥१॥

धुरि देवल धर्मसालि, पंच सदं सुणिजै झाझा।
झालर रा झणकार, देवगृह दीपक झाझा॥

पशु पंथी पंखिया, आपणी ठामै आवै ।
आरंभ किया अलग्ग, सको थिर चित्त सुख पावै ॥
आकास चंद तारा उदैं, दिन चिंता अलगी दुरी ।
सुखकरण संघ धर्मसी सदा, सकति रूप संध्या सुरी ॥२॥

—:❀:०:❀:—

सर्व संघ आशीर्वाद

परव अवसर सदा दरब खरचैं प्रघल,
गरव न करैं करइ सरब उपगार ।
धरवि जलधार जिम दान वरसै धरा,
जगतपति संघ रौ करौ जयकार ॥ १ ॥
सूध मन सेव गुरू देव री साचवैं,
सखर समझै अरथ सूत्र सिद्धंत ।
दियै बहु दान मन शुद्ध पालइ दया,
भलौ नित संघ रौ करौ भगवंत ॥ २ ॥
राय - साधार वंदिछोडि मोटा विरूद,
साह पतिसाह सम मौज महिरांण ।
संघ सुप्रसन हुआं नवे निध संपजै,
करौ प्रभु संघ रौ सदा कलियाण ॥ ३ ॥
वरण अढ़ार ने जिके दिये वरा,
खरा द्रव्य खटिनै करैं धर्म काज ।
कहै धर्मसीह सुकवि लोक सहि को कहैं,
महाजन तणौ उदो करै महाराज ॥ ४ ॥

—❀—

ढुंढ़ियां रो कवित—छप्पय

आया नैं उपदेस, प्रथम प्रतिमा मत पूजौ ।
वांदौ मत अम्ह विना, दरसणी यति को दूजो ।
दीजैं नहीं वलि दान, भवे बीजे भोगवणां ।
आगम केइ उथपैं, लोह सुं जड़ीया लवणा ।
सीख द्यौ लाख न हुवैं समा, खोटी जड रा खुंढीया ।
पारकी निंद करता प्रगट, धरमी किहां थी ढुंढ़िया ॥ १ ॥

(२)

अधिक आदि अनादि री मातवटि उथपैं,
देवपूजा तणा सुंस दीधा ।
देखि अन्याय आचार अंदेस मैं,
काल नैं चाल जगदीस कीधा ॥ १ ॥
प्यास मरतां पसू पंखिया पंथियां,
पाप है पावज्यो मतां पाणी ।
भरमिया भल भला लोक एहैं भरम,
धरम कियौ तिणैं धूल धाणी ॥ २ ॥
गिणइ नहीं शास्त्र वलि मूलगा देवगुरु,
लाज विण लोक इण कुमति लागैं ।
ऊंधली रीति ऊधा तिके ऊठीया,
ऊठिसी ई ए उतपात आगैं ॥ ३ ॥
मेलि परवान मान महाराज कीधा मन्हैं,
लोपीयो हुकम करतूत लहसी ।
हुइ सहुको कहैं हाकमैं हाकमी,
रैत वर वैत दुष्ट दूर रहसी ॥ ४ ॥

—❀—

मांकण (जवा) छप्पय

आवैं केइ अथग्गरा, हलवें हलवे हेर ।
मांकण मांडें मामला, मेवासें रा मेर ।
मेंवासें रा मेर, झरे कोचर में, झाझा ।
रतिवाहा द्यै राज, प्राछ करि जायइ प्राझा ।
छलवल करि छेतरैं, चूसैं लोही चटकावैं ।
चावा चिहुं दिसि चोर, नींद कहो किहांथी आवै ॥१॥आवै०

सवैयो

खाट में पाट में हाट में त्राट में आसन वासन थिर थानें ।
आवत जावत भी चटकावत, नावत हाथ छिपैं कहुं छानै ।
रैंन में नैंन में नींद परै नहीं, द्यौस ही रूंस भरैं दुख दानें।
गाउ न रांक न को गिनैं हांकन, मांकण काहु की सांक न मानै ।

—०—

धरती री धणियाप किसो

भोगवि किते भू किता भोगवसी, मांहरी मांहरी करइ मरैं ।
ऐंठी तजि पातलां उपरि, कुंवर मिलि मिलि कलह करैं ।१॥
धपटी धरणी केतेइ धुंसी, धरि अपणाइत केइ ध्रूवै ।
धोवा तणी शिला परि धोबी, हुं पति हुं पति करै हुवै ॥२॥
इण इल किया किता पति आगैं, परतिख किता किता परपूठ ।
वसूधा प्रगट दीसती वेश्या, झूझै भूप भुजंग सु झूठ ॥३॥
पातल सिला, वेश्या, पृथ्वी, इण च्यारां री रीति इसी ।
ममता करै मरै सो मूरख, कहै धर्मसी धणियाप किसी ॥४॥

—:❀:—

छप्पय

रावण करतां राज, लीक लंका तै लागी ।
जीवतें किसन जी, द्वारिका नगरी दागी ॥
चावा रवि चंद नइ, राहु आवी नै रोके ।
पांडव कौरव प्रसिद्ध, सहु पडिया दुख शोकै ॥
सकजो न कोइ मो सारिखौ, बहु मुरख गर्वे बकै।
धर्मसीख धारि धोखो म धर, जीती कुण जाइ सकै ॥१॥

छप्पय

गुर थी लहियै ज्ञान, शास्त्र सहु तत्त सिखावइ ।
वलि सगली ही वस्तु दोष निरदोष दिखावैं ।
चूल्हा रौ जे चंद कर, तिण काज कला धर ।
गुरू सेवा कर गिण्यां, नहीं उसरावण को नर ।
वलि अलग टालि छट्ठउ वर्ग, अधर होठ अलगा रहै।
त्युं रहै अलग निंदा तठै, कवित सीख साची कहै ॥ २ ॥

"शोभनीय वस्तु"—छप्पय

नरपति शोभा नीति, विनय गुणिजन त्रिय लज्जा।
दंपति दिल संतोष, शोभ गृह पुत्र सकज्जा ।
वचने शोभा साच, बुद्धि शोभा कविताइ ।
वपु शोभा विज्ञान, शान्ति द्विज शोभ वताइ ।
सकज की शोभ अधिकी क्षमा, शोभ मित्र राखैं शरम ।
गृहवास शोभ संपति सुधन,
सवहि शोभ निज निज धरम ॥ २ ॥

राजनीति—छप्पय कवित्त

सकले गुणे सकज्ज, पांच दस परिखा पुहतौ ।
आण्यौ म्हे इतबार, मन शुद्ध थाप्यौ मुहतौ ।
सहु आगै कहै सांन, वांन इम अधिक वधारे ।
तिणरौ बाधै तोल, सही सहु काम सुधारे ।
प्रभु काज साधि पोतै पछै, काज प्रजा रा पिण करै ।
परसिद्ध भली परधानरी, राज काज सगला सरै ॥ १ ॥
पुखतौ गुणे प्रधान, कदे नहीं मन में कावल ।
पिण काइ पर कृति, साम नहीं मन मैं सावल ।
कहै म्हेइज सहु करां, मंत्रि रो कह्यौ न मानां ।
म्हां थी बीजी ठाम, छेतरावौ मत छांना ।
सहु नै इकांत इम सीखवै, अदेखाइ आणै इसी ।
अधिकार तणो जिहा नहीं अमल,
कहौ तिणमें बरकत किसी ॥ १ ॥

—:※:—

वरसी दान

त्रणसै कोडि अठ्यासी कोडि,
असी लाख उपर वलि जोडि ।
इतरा सौनइया नौ मांन. दे सहु अरिहंत वरसीदान ॥ १ ॥

छप्पय छत्तीस विधान रो

गुरु गुरु[1] दिनमणि[2] हंस,[3] मेघ[4] मंदर[5] मुगता गण[6] ।
मति[1] द्रुति[2] गति[3] अति सोह, बाणि[4] मणि[5] गुण[6] जाके तण ॥

सुरंग[1] पुव्व[2] सर राज[3], गयण[4] धर[5] धुरि वारिध[6] थिति ।
वासव[1] ग्रह[2] अति चतुर,[3] जगत[4] सुर[5] पारिख[6] सेवित ॥
उच्चह[1] प्रभात[2] पंकति[3] सहित, गरजित[4] निरमल[5] ग्रथित[6] गुण ।
बहु[1] ज्ञान तेज[2] केली[3] वरिस,[4] धीर[5] पवित्र[6] ध्रमसीह भण ॥१॥

एकक्खर उत्तरा

वंदे नहीं क्यु देव गुरु, विकै न वस्तु विवेक ।
छोडैं अैठों अन्न क्यु, उत्तर त्रिहुं रो एक ॥१॥ भाव नहीं ।
दूधै केम स्वाद नहीं, दीधै किम फिर दिद्ध ।
दाडिम कण ज्यों पोस्तकण, जुदा नहीं किण विद्ध ॥२॥ थर नहीं
हाथी जनमि किसौ न ह्वै, वैद दियै किम पत्थ ।
नर आदर किम नां लहै, उत्तर त्रिहुं इक अत्थ ॥३॥ जर नहीं
देशै नीपति क्यु नहीं, क्यु न घडै लोहार ।
किम वसतां मुहँगी विकै, उत्तर एक प्रकार ॥४॥ घण नहीं

होयालियें

(१)

कुण नारी रे कुण नारी रे, पंडित कहौ अरथ विचारी रे ।
चतुराइ बुद्धि तुम्हारी रे, सहु कोइ वखाणै सारी रे ।कुण०॥१॥
मन मोहन सुंन्दरि माती रे, रहै पंच भरतारे राती रे ।
सखरी पहिरै ते साड़ी रे, तौ पिण सहु अंगै उघाड़ी रे ।कु०॥२॥
आइ वैसे मुजरै ऊँची रे, तिण घरि नहीं ताला कुंची रे ।
दिन उगै घाहडी उठी रे, पल मैं जइ वैसे पूठी रे ॥कुण० ॥३॥

बूढी पिण वाली भोली रे, तनु केसर चंदन खोली रे।
कहै धर्मसी एह हियाली रे, मति करज्यो बात विचाली रे।
॥कु० ॥४॥
(थापना)

(२)

ढाल—गांठलदे सेत्रुंजे हाली

कहो पंडित ए हीयाली, मत करिज्यो बात बिचाली रे ।कहो०।१
निरखी नैं सुन्दर नारी, धरमी आदर करि धारी रे ।कहो०।२॥
नव नव विधि कूदैं नाचैं, पिण सहु वखाणैं साचैं रे ।कहो० ।३।
करैं घुंघट पिण तिण च्यारैं,
सकुचैं पिण नहीं किणहीक वारैं रे । कहो॥४॥
फिरती रहै सहु अंग माथैं, हिरदै ने बैसे हाथै रे ।कहो० ॥५॥
बोलतां आड़ी आवै, पिण तेहनो भेद न पावै रे ।कहो० ॥६॥
निंदै ते भारी करमी, धर्मसी कहै धरस्यै धरमी रे ।कहो०।७॥
(मुहपत्ता)

(३)

ढाल-चतुर बिहारी रे आतम एहनी ।

अरथ कहौ तुम वहिलौ एहनौ, सखर हीयाली रे सार।
चतुर नर एक पुरप जग मांहे परगड़ो, सहु जाणै संसार चतु०।१
पग विहुणो पिण परदेसे भमै, आवै तुरतड जाय ।
बैठो रहै अपणे घरि बापड़ो, तौ पिण चपल कहाय । च०अ०॥२
कोइक तो तेहनै राजा कहै, कोई तो कहै रंक ।च०

साचौ सरल सुजाण कहै सहु, वलि तिण गाहे रे वंक ।च०अ०३।
पोते स्वारथ सुं पाचां मिलै, आप मुरादौ रे एह । च०
धन तिकै नर कहै श्री धर्मसी, जीपै तेहने रे जेह ।च० अरथ ।४।

(मन)

(४)

ढ़ाल—नायक मोह नचावियो

चतुर कहौ तुम्हे चुंप सु, अरथ हीयाली एहो रे ।
नारी एक प्रसिद्ध छै, सगला पास सनेहो रे । चतुर ॥ १ ॥
ओलै बैठी एकली, करै सगलाई कामो रे ।
राती रस भीनी रहै, छोडै नहीं निज ठामो रे । चतुर ॥ २ ॥
चाकर चौकीदार ज्युं, वहुला राखै पासो रे ।
काम करावै ते कन्हा, विलसै आप विलासो रे । चतुर ॥ ३ ॥
जोड़े प्रीति जणे जणे, त्रोडे पिण तिण वारो रे ।
करिज्यो वस धर्मसी कहै, सुख वांछौ जो सारो रे । चतुर ॥४॥

(–जीभ)

—:०—:

आदे अक्षर, मझखरौ, अंतखरौ नैं वलै
मझखरौ सर्व एक कवित्त माहें सांगठा ही ज आणया छै ।

कवित्त

रक्षक बहु हित साधु, राति सूरज दिन नक्खत ।
सहु भोजन कटु जीह, नहींय सुचि पीड़ा दुक्खित ॥
वृद्ध अछेह धन वयण पहिल हिव सुसतैं तूनैं ।
रिसि छोरू पति तेज, याम रिधि दुखित धुनैं ॥

लखमी सुबुद्धि तारण सरव रयण पुन्य निरजर सुधर ।
धुरि मझ अंत मझ अक्खरैं, पारसनाथ प्रतापकर ॥१॥

पा ल क	अ पा र	कि र पा	सु पा त्र
र ज नी	अ र क	वा स र	ता र क
स र व	अ स न	वि र स	र स ना
ना का र	स ना न	वे द ना	अ ना थ
थ वि र	अ थ ग	ग र थ	क थ न
प्र थ म	सां प्र त	अ क्षि प्र	तो प्र तौ
ता प स	सं ता न	भ र ता	प्र ता प
प हु र	सं प ति	सं ता प	कं प न
क म ला	अ क ल	ता र क	स क ल
र त न	ध र म	अ म र	ध र णी

च्यार वार अक्षर दसे, एक कवित्त मैं आँणि ।
कवि माहे धर्मसी कहैं, तौ कहुं तौकुं जांण ॥१॥

—:०:—

सवैया—सर्वगुरू अक्षर देवाधिदेवस्तुतिः

सांई तेरी सेवा सच्ची, दूजी काया मायकच्ची,
साता दाता माता भ्राता, तुं ही दूजा दंभा है।
मोटां ही तैं तुं ही मोटा, मैं तो छोटां ही में छोटा,
तेरी ओटा धोटा ज्युं मैं लेख्यां ही का लंभा है।
तेरैं पासा खासा दासा, पासा वांसाहि का प्यासा,
मेरी आसा वेलि फैली तुं ही इछ्या अंभा है।
दूजा को हैं तेरैं दावैं, ज्ञानी लोका तोकुं गावैं,
रातैं प्रातैं धर्म ध्यावैं तेरा ही ओठंभा है॥ १ ॥

—:०:—

सवैया—तेवीसा

गंग तरंग के संग उरंग सु, मंतु विना बहु जंतु मारै।
ताहि समै विनता सुत ताहि जु, जाति विरोध संभारि संहारैं।
सौ मरि कै अहि होइ चतुर्भुज, ताहू कैं ही सिर आसन धारै।
अहो अहो यों सुखी सरिता सु तो, पानी के संग ही पार उतारैं।१।

—:०:—

यति वर्णन—सवैया

केइ तौ समस्त वस्तु चातुरी विचार सार,
वैंन भी दुरस्त वदै अैंन सरस्वती हैं।
केइ तौ प्रशस्त काव्य भाषा गुण चुस्त करैं,
और कवि अस्त होत एतौ दिव्य दुती है।

केइ राग रंग मांझि रस्त गुस्त होत जात,
केइ तर्क विद्या में विहस्त शुद्ध मती है।
हस्त सिद्धि धर्मसींह वादि हस्ति गस्त होहि,
जैन में जबरदस्त ऐसे मस्त जती हैं ॥१॥

—:०:—

समस्या—मान कर्यो के पतिव्रत पार्यो

ठौर संकेत की आगैं ते आइ कैं, नायक सेज को साज सुधार्यो।
आइ तिया तव आई गइ रितु, ह्वै कें उदास विलास विसार्यो।
बैठि सकोचि सलज्ज न बोलत, नायक केतौ निहार कै हार्यो।
साच कहौ अब क्यों न मिलौं तुम,
मान कर्यो कै पतिव्रत पार्यो ॥ १ ॥

:—❀—:

भोजन विच्छती—सवैया इकतीसा

आछी फूल खंड के, अखंड से जौ लड्डू होइ।
ताकै संग ताजै ताजै खाजै फुनि खाईयै ॥
पैडनि सु प्रीति घूरी, लापसी तौ थोरी थोरी।
सीरैं के स्वाद काज बूढा कुं बुलाईयै ॥
हेसमी की भइ हुंस, साबूनी कौ नहीं सूंस।
घी के भरे घेवर जलेबी युं अघाइयै ॥
फूल हुं ते झीणी फीणी, सब ही में खांड चीणी।
धर्मसी कहत कीनी पुण्य जोग पाईयै ॥१॥
चोखे नान्है कैर चूणैं, चोखे छमकारे चणें।

आछे से अथांने घने और भी कुं बोल है ।
चीरडी पटीरडी सीरावडी वड़ी पुड़ी ।
हरद सौं जरद आछे भुजिया कौ झोल है ॥
सांगरी निरोग फोग राइ खेलरा के जोग ।
भाजी भली भांति की में, नीबू को निचोल है ॥
एकली मिठाइ तो धिठाइ कहै धर्मसीह ।
सालणां के साथ सु बोलावै कैसी बोल है ॥२॥

सवैया तेवीसा

दाख वदाम अखोडै सिंघोडे, गिंदोडै सौं जोडै सबै ही सुहावैं ।
खारक खोपरे याही के भेट, छुहारी गिरी है पै न्यारी कहावैं ॥
पूछहुधौं गुजरातिय लोक, निवात मिलें निमजे भलै भावै ॥
मेवे इते नितमेव लहै, सु कहै धर्मसीह भैया पुण्य प्रभावैं ॥३॥
चटपट में पकवान चलावत, खावत है खीर खांड भी खातै ।
तो से चाउल दाल तजै नहीं, पालि करै फुनि घीउ की घातें ॥
सुधारी धुंगारी पीयैं फुनि छाछहि, पाछै कै जाइ चळू किये पातैं ।
बचै सु लुकाइ कै दैण की देरहि, ताली युं देत दिखावत दांतैं ॥४॥

—:o:—

अध्यातममतीया रो :—सवैया इकतीसा

आगम अनादि के उथापी डारे आपै रुढ़ि,
अबके बणाए बाल-बोध मानै संमती ।
जोगी जिंदे भक्तनि पैं, दूरहुं ते दोरे जात,
देखे न सुहात ताहि एक जैन के यती ।

ऐसो उदैं क्रोध मान, दूर कीए क्रिया दान,
ऐसे पछिपाती गुण काहू कौ न ल्यैं रती।
बावन ही अच्छर कुं, पूरे से पिछानैं नाहि,
कैसैं कै पिछानैं कहां आतमा अध्यामती ॥ १ ॥

शरीर अस्थिरता—सवैया इकतीसा

ज्ञान के अभ्यासा मिसि, आवत उसासा सासा,
छिन न विसासा तहां कहां दिन मासा है।
पर्यौ प्रेम पासा, तामैं मानत विलासा खासा,
देखैं जो विमासा घरि हानि लोक हासा है।
आसा तो अकासा जेती, खेलत दुवासा सेती,
केती है उजासा घन बीजुरी का वासा है।
अंतर प्रकासा कर धर्मसी सुवासा धर,
पानी मैं पतासा जैसा[1] तन का तमासा है॥ १ ॥

रूपैया—सवैया तेवीसा

आपणी देह सु नेह नहीं पुनि, जानत खेह के गेह छिपैया।
मोह नहीं मन में धन में, वन में तन में तप ताप तपैया॥
लोक बडे बडे पाय लगे, जु सबै गुण सोभत लोभ लुपैया।
वांटन कौ नउ उभ्फाटन को डर, सौइ बड़ौ जाकैं भ्फांठ रूपैया।१।
कोइ तो पाइ छिपाइवा धन, धारे नहीं धर्मसीख कहैया।
सुब कहाइ खवाइ न खाइ, भखाइ लगाइ लरावत भैया॥
कौन कहै तिनकुं जु बडौ है, मडौ सब ही सु करै हैं लडैया।
वांट वंटाइ उडाइयै फांट तें, सोइ बडौ जाकै भ्फाँठ रूपैया।२।

—०—

२४ शोभा—सवैया इकतीसा

नृपति[१] की शोभा नीति, गुनिन[२] की विनैं रीति,
दंपति[३] के प्रीति जो निवाहे धुरि छेह की।
ललना[४] की शोभा लाज, वचन[५] की शोभा साच,
बुद्धि[६] शोभा कविताइ, पुत्र[७] शोभा गेह की।
गृह[८] की हैं शोभा वित्त, मित्र[९] की चितारैं चित्त,
सकज[१०] की क्षमा त्युं, कला[११] विचित्र देह की।
द्विजन[१२] की शोभा शांति, रतन[१३] की शोभा कांति,
साधुन[१४] की शोभा धर्म, शील कैं सनेह की॥ १॥

वस्त्र शोभा—सवैया इकतीसा

दूर तैं पोसाकदार, देखियत सिरदार,
देखिकै कुचील चीर ह्वै हैं कोऊ वपरा॥
सुन्दर सुवेश जांणै, ता को सहु वैंन मानें,
बोलै जो दरिद्री तो लवार कहैं लपरा॥ १॥
पीतांबर देख के, समुद्र आप दिनी सुता,
दीनौ विष रुद्र कुं विलोकी हाथ खपरा
धर्मसी कहै रे मीत, ऐसी हैं संसार रीति,
एक नूर आदमी हजार नूर कपरा॥ २॥

आशिकबाजी—सवैया इकतीसा

देखिवैकुं दौरि दौर, ठाढौ रहै ठौर ठौर,
बाध्यो प्रीति रीति डौर किधौं नाथ्यौ वर्द है।

आस पास वास चहैं, भूख दुख प्यास सहैं,
दास सौं उदास कुक[१] लासकी सी नई है॥ १॥
नैंन वान लगै मर्द, हर्द सौ जरद भयौ,
मोह मद छर्दि किधुं सीतांग की सर्द है।
हैं कोइ न कौ हकीम, धारैं धर्मसीम नीम,
आसिकी कें दर्द आगै और दर्द गर्द है ॥ २ ॥

—:०:—

छः जनों को दुख न देना

सवैया इकतीसा

ऐसी नर देह दाता, पूजनीक पिता माता,
इनकुं असाता दे असाता बीज वावैगो ।
देत गुरुदेव ज्ञान, या कुं मन शुद्ध मान,
इनकैं बुरैं ध्यै कां न निगुरौ कहावेगो ॥
साचा सगा वाल्हा सैन इणो सेती दगा दैंन,
बात बुरी करैं सो कुपात खाक खावैंगो ।
आपकुं जो चाहै सुख, मांनौ धर्मसीख मुख,
छ जनां कुं दुख दै सौ विशेष दुख पावैगौ ॥१॥

—:०:—

१ कि र का टीया री रामति

आणंदरामजी नाजर की दी हुई समस्याओं की पूर्ति

समस्या—भावी न टरे रे भैया भावे कछु कर रे

सवैया इकतीसा

अटक कटक विचि झटक निझाट मांझि,
एक टूक होत जात एक कुं न डर रे।
आधन मैं मुंग ऊरे करडू रहैं हैं कोरे
कीनो है, जतन किनि देखि भावी भर रे।
करैं एक करतार कहन कौ विवहार,
होत सब भावी लार, धर्मसीख धर रे।
भावी को करणहार सो भी भम्यो दश वार,
भावी न टरत भैया भावैं कछु कर रे ॥ १ ॥
श्रवण भरैं तो नीर, मार्यो दशरथ तीर,
ऐसी होनहार कौण मेटि सकैं पर रे।
पांडव गये राज हार, कौरव भयौ संहार,
द्रौपदी कुदृष्टि मार्यो कीचक किचर रे।
केती धर्मसीख दइ, सीत विष वेलि वइ,
रावन न मानि लइ जावन कुं घर रे।
भावी कौ करनहार, सो भी भम्यौं दश वार,
भावी न टरत भैया, भावैं कछु कर रे ॥ २ ॥
मच्छ कच्छ होइ पीवैं, वनकौ वराह भयौ,
नरसिंह एक पिंड दोइ रूप डर रे।
वामन परशुराम राम कृष्ण बौद्ध रूप,
केते ही चरित्र कीने एते रूप धर रे।

दसमौ कलंकी नाम, ह्वै हैं कहुं ही न ठाम,
अजहुं अधुरौ कांम देखि भावी पर रे।
भावी कौ करणहार, सो भी भम्यौ दस वार,
भावी न टरत भैया भावै कछु कर रे ॥ ३ ॥

यंत्र मंत्र तंत्र जाल, झंपि धुं हुताश झाल,
पैंठ धौ पताल वीचि, बैठ भावै घर रे।
देसते विदेश जाहु, देखि मेख मीन राहु,
भटकी सवेर सांझि, सिंधु मांझ तर रे।
जैसे ही संयोग योग, भोग रोग सोग भावी,
धर्मसी सुबुद्धि धार, भावी लार नर रे।
भावी कौ करणहार, सो भी भम्यौ दश वार,
भावी न टरत भैया, भावै कछु कररे ॥४॥
फांसी तैं निकास ग्रीव, देत फाल पर्यो जाल,
जाल कौ जंजाल तोरि, पड्यौ आगि झर रे।
जीवन जरी के जोर, जर्यो नांहि मर्यो रान,
वागुरीनि डार्यो वान टार्यो सोऊ सर रे।
कहै धर्मसींह मृग, केते ही मिटाइ कष्ट,
भावी आगे पर्यो कूप मांझि रह्यो मर रे।
भावी कौ करणहार, सो भी भम्यो दस वार,
भावी न टरत भैया, भावै कछु कर रे ॥५॥

—:※:—

समस्या

सवैया इकतीसा

द्वार कौं न गहें मौन कहै मैं हुं नीलकंठ,
करहु झिंगौर कला देखि जलधार कुं ।
सूली न बढ़ाउ रीस चोर कुं चढ़ाउ सीस,
ईस हुं बढ़ैया देहै खाट कैं अधार कुं ॥
मैं तो हु इशान सोहै प्राची उदीची कैं वीचि,
रुद्र हुं कपाली जाहु प्रेत वन छार कुं ।
लीनौ महाव्रती लील धारै क्यु न धर्म शील,
गोरी ठग ठोरी करै अैसे भरतार कुं ॥ १ ॥

—✿—

सवैया इकतीसा

वाकैं तुम्ह जीवन हो, जीवन तुम्हारैं वह,
दुहुं एक जीउ देह देखवे कुं द्वै धरी ।
देव प्रतिकूल होत, होत प्रतिकूल सब,
ऐसी अनुकूल ही सौं कैसी तुम्ह या करी ॥
आप रहै कहुं भूलि भामिनी बकत भूलि,
अजहुं न आए सो तौ मोही सुं मन धरी ।
तजि कै अमूल तूल सूलज्यु विडारी फूल,
पीपर कैं पात पर च्यारो पात पापरी ॥ १ ॥

—:o:—

समस्या—चरण देख चतुरा हसी

इक दिन ख्याल हि अटकि, अरध निशी प्रीतम आयौ ।
नींद मांझि तिय निरखी, लेइ महावर पगि लायौ ॥
वहुरि गयौ बाजार, वहुत विधि देखी बाजी ।
पुनि आयौ परभात, रसिक कोतक चित्त राजी ॥
निसनेह नाह तुम मोहि तजी, डुसक डुसक रोवइ डसी ।
अध दृष्टि इतइ अलतैं अरूण, चरण देखि चतुरा हसी ॥१॥

—:※:—

समस्या-वामन के पगतै जु वची
धरि जानत है विरलो जग कोऊ ।

धरि जानत है विरलो जग कोऊ।
सूखत नां कवही सव ही रस,
जागत हैं वरषा विनु जोऊ।
जोर करै तै लाइ नहिं जातु,
है है पुनि नांहि गहै विधि दोऊ॥
पावत पार न को धर्मसी कहै,
शेष उपारि सकै नहीं सोऊ।
वामन के पगतै जु वची धरि,
जानत है विरलो जगि कोऊ ॥ १ ॥

—o—

समस्या-हरि शृंगनि तें अंसूआं ढरि आइ ।

एक समै शिव शैल सुता रति रीति रसै विपरीत वणाई ।
संभु डस्यौ अधरा अध तैं तिण पीर पीया दृग नीर वहाइ ।
भाल कै चंद परी वहुं विंद धरी है कुरंग के शृंग सखाइ ॥
ऊठत ईस ही सीस धुण्यौं
हरि शृंगनि तै अंसूआं ढरि आइ ॥ १ ॥

वनमें मृग एक मृगीकै वियोगहि,
वैठि रह्यो निज ठौर निसाइ ।
तव ही दोइ पंथक वात करै,
अधरात भइ हरिंणी सिरि छाई ।
आनन ऊरध कैं चितयौ,
मृग देखत व्योम प्रिया नहीं पाई ।
दुख तैं मुख ऊरध रोवतही,
हरि शृंगनितैं असूआं ढरि आई ॥२॥

—:o:—

समस्या-'आरसी में मुख देखौ मुख ही में आरसी'

सुन्दर पलंग पर वैठौ है चतुरवर,
आगै आइ वैठी प्रिया देव की कुआंरसी ।
ताहि समै प्यारी प्रिया देखि आपु दर्प्पणकुं,
पीउ कुं दिखावैं भावैं कीनै मनुहारसी ।
देखत हौं तेरौ मुख मैं तो अति पाउं सुख,
वीचि धरी आरसी तौ लागत है आर सी ।

मेरौ रूप तेरि नैन कहा तु कहत वैंन,
आरसी मैं मुख देखौ मुख ही मैं आरसी ।१।

—:※:—

समस्या-चंप कैंसे च्यार फूल फूले ही रहतु है ।

अति ही अनूप नाभि रूप कूप उपरितैं,
मोतिनि की माला घटमालासी वहतु है ।
नूर नीर ऊर पूर रभ थंभ वाहुलता,
आनन कमल स्वास सौरभु गहतु है ।
नाक कीर भौंहि भीर आली कौ सुहाग वाग,
साचौकरि देख्यो हैं पैं धर्मसी कहतु है ।
आंखनि उरोजनिकी एती अधिकाइ पाइ,
चंप के से च्यार फूल फूले ही रहतु है ॥१॥

—०—

सगस्या—ठाढे कुच देख गाढे प्राण अकुलात है ।

गोरी तेरी देखि गति दूर हुं विसारि मति,
देखत न कैसे मन ठौर ठहराति है ।
घुंघट की ओट मांझि नैननि सो चोट करै,
जाकैं लागैं सो तो लोट पोट होइ जाति है ।
सोनै सुं सुधारे सारे आधे से उघारे भारे,
काठ तौ चोगान के निसान से कहातु है ।
कहै धर्मसीह कसे ऊभै पौरीयै से ऐसे ,
ठाढे कुच देखै गाढै प्राण अकुलात है ॥ १ ॥

—※—

समस्या-नीली हरी विचि लाल ममोला

थोरी सी वेस में भोरी सी गोरीसी,
गोरी चलावति नैंन गिलोला।
जाकै लागै ते डिगै मुन ही, मनहि महि मारत मार झलोला।
मोहैं सबै मन मौहैं अचंभजु, कौहै कहौ यह रैंन अमोला।
हसै घट घुंघट ओट में आनन
नीली हरी विचि, लाल ममोला ॥ १ ॥

एक समे वृषभान कुमारि, सिंगार सजै मनि आनिइ लोला।
रंग हर्ये सब वेस वणाइ कैं, अंगुल काइ लए तिहि ओला।
आए अचाण तहां घनश्यांम, लगाइ झरी करैं केलि कलोला।
घुंघट में ए कर्यो अधरा मनुं, नील हरी विचि लाल ममोला ॥२॥

—❀—

समस्या पूर्ति—टेरण के मिस हेरण लागी

चंप सुं च्यार सखी मिलि चौक में, गीत विवाह के गावन लागी।
गौख तें कान्ह कौ साद सुणैं तैं, भइ वृषभान सुता चित रागी।
जाइ नही चितयौ उत ओर, सखीनि कै वीचि में बैठी सभागी।
उतैं कर कौ सुकराज उडाइ कै, टेरण के मिसि हेरण लागी ॥१॥
भानि मै बंद ज्युं गोए के वृंद में, बैठे हैं नंद के नंद सोभागी।
एते मैं आइ घटा घुरराइ, घनाघन की बरसै झर लागी।
आधि कै राधिकै कांन कै अंग, आलिंगनु काजु भइ अनुरागी।
आइ कै गाइ वताइ द्यौ कांन्ह यौ, टेरण के मिसि हेरण लागी ॥२॥

—❀—

सवैया (समस्या)

अरे विधि तु विधि जाणत थौ पुनि,
एक विचार कहा यह कीनौं।
गोरी करी पतरी करि की कुच,
कै उच कौ पुनि बोझ ही दीनौं।
जो कबहु वहु पौंन वसै करि,
टूटि जैहैं करि के जु करीनौ।
ता तव ऐसे ही कैसे वणावेगो,
धर्म कौ वैंण तै मोनि न लीनौ ॥ १ ॥

समस्या—कर्म की रेख टरै नहीं टारी

नीर भर्यो हरिचंद नरिंद ही, कंस कौ वंस गयौ निरधारी।
मुंज पर्यो दुख पुंज के कुंज, गयौ सब राज भयौ है भिखारी।
लंक कुवंक कलंक लगाइ है, रावण की रिधि जावण हारी।
मीन रु मेख कहै धर्म देख पै, कर्म की रेख टरै नहीं टारी ॥१॥

समस्या—टारी टरै नहीं कर्म की रेखा

छप्पय

एक कौ एक रु दोइ न आवत, एक करैं केई लाख के लेखा।
एक कै रासभ ही नहीं एक कै, द्वार हजार करैं हय हेंखा।
कोऊ सुखी जगि कोऊ दुखी जन,
काहैं कौ काहू कौ कीजै अदेखा।
कोडि उपाय करौ धर्मसी कहैं,
टारी टरैं नहीं कर्म की रेखा ॥ १ ॥

समस्या—सवैया तेईसा

तत्त की या धर्मसीख धरौजु, कहा बहु गल्ल कथा विस्तारौ ।
मोल न ह्वै मणि की मणिहारीयैं, अमृत विंदु न कूपक खारौ ॥
चंद उद्यौत करैं सबहुं दिशि, तारक कोरि छतें ही अंधारो ।
सारकी होडि कहा करैं टार, सपूत घरी न कपूत जमारौ ॥१॥

—::—

समस्या—निसाणी घर जानकी सवैया इकतीसा

आयौ जाकौ दूत जमदूत को सौ पौनपूत,
या तौ देखौ वावि की प्रसिद्धि लोक वानि की ।
कीनौ उतपात पात, पात सौ आराम कारि,
वैठो है आराम करि, कैसें लंक थान की ॥
मंदोदरी कहैं राज, मंदौ दरीखांनौ आज,
धारौ धर्म सीख पैं न, धारौ सीख आनि की ।
कांनि कानि फैली बात, कांनि तैं न कही जात,
आंनी घरि जांनकी, निसाणी घरि जांन की ॥ १ ॥

सवैया—समस्या, हरिसिद्धि हसै हरि यों न हसै

हनुमान हरौल कियैं चढै राम,
तयों निधि संनिधि लंक ध्वसे ।
करि रौद्र संग्राम लंकेश कुं मारि,
कियौ सुखवास की नास नसे ॥
शिव चिंत्यो त्रिलोक कौ कंटक सोऊ,
नमावतौ मो पद सीस दसे ।
उत दैत्य हसे उत देव हसे,
हरि सिद्धि हसे हर यौं न हसे ॥ १ ॥

अपणै भुज भार पहार उपारि,
गोवर्द्धन धार जो धार जसे ।
तिण माखण ले मटकी पटकी,
अपराध ते कौल के नाल कसे ॥
अब खोल दे गात जसोदह मात,
न माखन खाऊं न जाऊं नसे ।
उत दैत्य हसे उत देव हसे,
हर सिद्धि हसे हरि युं न हसे ॥ २ ॥

—::o—

समस्या—योग, भोग पर

रिण देंणौ घणौ लहणौ न कछु,
गहणौ घर में कर एक छलौ है ।
इत भूतसौ पूत कुपात है तीय,
कहा[1] कहि बात में जात ललौ है ॥
नित गेह कै नेह में देह दहै,
न गहै ध्रमसीख न तत्त तलौ है ।
नहिं जानत है चित में इतनौ,
इण भोग हुते जति जोग भलौ है ॥ १ ॥
कहै नाम अत्तीत अनीति धरावत,
पावत लोक अलोक गिलो है ।
विह साव सौ वेष धरै बहु वेख,
अलेख कहै पें अलेख ललौ है ॥
न सरें जब काज गरें जु परें,
झगरैं बहु सु पकरैं जु पलौ है ।
कहौ साध्यौ कहा इण जोग गहे,
इण जोगहु तैं गृह भोग भलौ है ॥ २ ॥

समस्या—चतुराई पर

एक एक चातुरी सौं अकल नकल आनैं,
सकल सयाने लोक सुनि के थगतु है ।

१—कलहा, कलहि, बालत, जालत

एक तौ विचित्र चित्र शत्रु मित्र जंत्र मंत्र,

राग रंग रस मांझि जावता जगतु है ॥

कर्म कला करणै में धर्मसीख धरणै में,

चातुरी तें भूषण है दुख न भगतु है ।

पूरे वेद पाठी तेऊ चातुरी कुं चित्त चाहैं,

चारू वेद चातुरी के चेरे से लगतु है ॥ १ ॥

समस्या—मान पर

मित्र उदै मेरा जीव राजी है राजीव सम,

जासु मन मेल सो तौ दूर ही नजीक है ।

प्यार धरि सीख सो मैं मानुं कुल लीकजैसी,

प्यार विन सीखसो मो लागति अलीक है ॥

हित सु दें तिनको सो मोतिनि को हारमानु,

हेत विनु हार सोऊ तिनिके की सीक है ।

मान कौ तौ बीरा मेरे हीरा कै समान मानु,

बिना मान हीरा मेरे बीरा कै सी पीक है ॥१॥

:—※—:

समस्या—साहिबी न भावै ताकुं साहिबी फकीरी है ।

देश की विदेश की निसे की न चिंता कछु,

हीनता न दीनता न काई तकसीरी है ।

सग्गकी न जग्गकी न दग्ग की न चाहि काहि

काहू की प्रवाहि नां न कोई दिलगीरी है ॥

सोच कौ सकोच कौ न पौच कौ आलोच मंत्र,

आप है स्वतंत्र काहू जोर न जंजीरी है ।

साहिब के नाम धर्मसील गह्यो एक टेक,
साहिबी न भावैं ताकुं साहिबी फकीरी है ॥१॥
मन के महल मांझि समता प्रिया के संग,
अनुभौ के अंग रंग सुखनि कौ सीरी है।
ममता न मोह द्रोह रमता है आपा राम,
ज्ञान गुन कला धारी ध्यान दशा धीरी है ॥
काहू की न संक बंक तैसो राउ राना रंक,
सबही कुं मानैं सम कुंजर सुकीरी है।
मंदिर रुचै न जाहि कंदर कौ वास ताहि,
साहिबी न भावैं ताकुं साहिबी फकीरी है ॥२॥

—:०:—

समस्या—थारी में युं ठहरात न पारौ।

दूर सौं दौरि मिलै छिन में, छिन मैं गहि लेत है एक किनारौ।
भौंर से खात फैलात चहुं दिसि, नेंकुं अटै नहीं होतनि नारौ।
एक न ठौर कहौ ठहरात, ग्रह्यो नहीं आवत हाथ अतारौ।
युं तृष्णामैं भमै चित्त चंचल, थाली में ज्युं ठहरात न पारौ ॥१॥
मैं हर वीरज धीरज कारण, गौरी कौं प्राणनि होतैं पियारौ।
मैं कियौ कारितिकेय कुमार, करुं उपगार स धातु सुधारौ।
कांसी में होइगी हांसी हमारि, निकारि बतातलि पीसही डारौ।
त्रिधातु त्रिकूट त्रिजाती मैं ना रहुं, थारी मैं युं ठहरत पारौ ॥२॥

:—❀—:

समस्या—काकै के दोठैं कुटंब ही दीठौ।

मोहनभोग जलेबीय लड्डूअ, घेवर तामै कहौ कहा मीठौ।
बाद भयौ धर्मसी कहै नागर, न्याउ कुं जंगल जट्ट प्रतीठौ।
सौ कहैं बूरे कैं पूर भये सब, ताकौ भाइ गुड लाल मजीठौ।
सो गुड दीठौ है मैं अति मीठौ तौ,
काकैं के दीठैं कुटुम्ब ही दीठौ॥ १॥

:—❀—:

समस्या—युं कुच के मुख स्याम कीये हैं।

तीय कौ रूप अनूप विलोकत, लोकनि के लख मोहि लियें हैं।
कोऊ कहै कुच कंचन कुंभ धुं, श्रीफल मंगल रूप ही ए हैं।
लगै जिनु दृष्टि विचारि विरंचहि कज्जल के दुइ बिंदु दीयै हैं।
बात कौ मर्म कहै कवि धर्म जुं, युं कुच के मुख
स्याम कियै हैं॥ १॥

:—❀—:

समस्या—छानोरे छानो रे छानो रे छैंया।

काम कलोल में लोल भयौ, पिऊ तीय करैं ओहि ओहि रे दैया।
नैकु हरै हरै मानि बुलाइ ल्यो, कोउ सुणैं जिनु लोक पछैया।
सेज के उपर नुपर के सुर, बाल जग्यो लग्यो रोवन मैया।
दैं तेरैं बाप कै थाप डरैं जिनु,
छानुं रे छानुं रे छानो रे छैया॥ १॥

:—❀—:

सवैयो बात करामात

शास्त्र घोष कंठ शोष पंडिताई करै पोष,
पूछ्यौ होत राग दोष रोष न समात है।
एक ही वचन कला दूझै कामधेनु तुला,
याही कला आगैं और सबे कला मात है॥
मानें सुलतान खान रीझै सब राउ रान,
पावै दान मान थान हित की हिमात है।
सब कुं सुणै सुहात मुख की ह्वै मुलाखात,
धर्मसी कहैं रे भ्रात बात करामात है॥ १॥

चोरनि की करामात, चाहत अंधारी रात,
साहिनि की करामात घर में बिसात है।
बालनि की करामात, पास अपणी है मात,
पंछनि की करामात जागत प्रभात है॥
जोगिनि की जाति में जमात करामात कहीं,
गणिका की करामात सुन्दर सुगात है।
सबहुं कुं सुण्यै सुहात मुख की ह्वै मुलाखात,
सब ही कुं धर्मसीह बात करामात है॥ २॥

दोहा

ओरंग पतिसाहि ग्रही, दहवटि करि दाराह।
रज्ज पियारा रज्जियां, भाइ दुपियाराह॥ १॥

स्वारथ मिट्ठा सब ही कुं, विण स्वारथ खाराह।
रज्ज पियारा रज्जियां, भाइ दुपियाराह॥ २॥

मुलतान रे अध्यातमीये प्रश्न पूछायां रो उत्तर, सवैया १ काव्य १ दूहो १ नवा करिने मुक्या, दुरस्त बात जांणी ने खुशी थया ॥

सवैया इकतीसा

तुम्ह जे लिखे है प्रश्न, ताके भेद भाव बूझे,
तुम ही सौं नाहिं गुझे सुझे है सुदच्छ सौं ।
मानो "परमात्मा—प्रकाश" 'द्रव्यसंग्रहादि'
और न प्रमाणौ ग्रन्थ ताणौ आप पच्छि सौं ।
ता तें और आगम के उत्तर न आवै चित्त,
लिखि कै बतावैं केते हेतु युक्ति लच्छ सौं ।
दुर हुंते तैं भ्रम होइ, सैली नांहि कहै कोइ,
बात तौ वणै जो ज्ञान (द)ष्टि ह्वै प्रतिच्छ सौं ॥१॥

श्लोक

युष्माभिर्लिखिता विचित्र रचना प्रश्नाः परीक्षार्थिभिः ।
केचिच्छास्त्रभवाः सुबोध विभवा केचित्प्रहेलीमया ।
ते वो नो मिलनादृते नहि कृते भ्रांतेर्हतेवः क्षमा ।
स्तत्प्रत्युत्तर जाल मंगन मनो मीनौ धुनानीयते ॥ १ ॥

दोहा

तजै नांहि व्यवहार कुं, भजै नांहि पछपात ।
तत्व धरैं दूषण हरैं, सोइ सुज्ञ कहात ॥१॥

—:०:—

सवैया

उपजी कुल शुद्ध पिता हनि कै, फुनि शुद्ध भई करि दोष विलै ।
करि संग पितामह सु प्रसयौ, पित आप कुवांरि कै खेल खिलै ॥
जग मित्र जिवाइ चरित्र बणाइ पवित्र भलै धर्मसील भिलै ।
कहि कौन सखी पित कै पित सु, बिछुरै दुरिकै फुनि जाइ मिलै॥१॥

—:※:—

सवैया—तैवीसा

चम्पक मांझि चतुर्भुज राजत, कुंद में आप मुकुंद विराजैं ।
केतकी मांझि कल्याण वसैं नित, कूजकै कूंच में केसव छाजैं ॥
मालती माधौ मुरारी जु मोगरैं, गुलाब गुपाल सुवास सुसाजै ।
कान्ह वसैं कल्पतरु मांझि, नरायण फुलनि हुं कुं निवाजैं ॥१॥
केतकी में केसव, कल्याण राइ केवरा मैं,
कुंज मैं जसोद सुत कुंद मैं विहारी है ।
मालती मैं मुकुन्द मुरारि वास मोगरैं,
गुलाब में गुपाल लाल सौरभ सुधारी है ।
जूही मैं जगतपति कृपाल पारजात हु में,
पाडल में राजै प्रभु पर उपगारी है ।
चंप में चतुर्भुज चाहि चित्त चुभि रह्यौ,
सेवंत्री में सीताराम स्याम सुखकारी है ॥२॥

वैद्यक विद्या

(डंभ क्रिया)

शंकर गणपति सरस्वती, प्रणमुं सब सुखकार ।
वैद्यनिके उपकार कुं, अग्नि कर्म कहुं सार ॥ १ ॥
जो चरकादिक ग्रन्थ में, विविध कह्यौ विस्तार ।
वागभट्ट तैं में कहुं, भाषाबंध प्रकार ॥ २ ॥

रोग संख्या संग्रह

ताप सन्निपात जाणी अतीसार संग्रहाणि,
फीहौ विध राल पांडु गोला सूल खैंन है ।
हीया रोग सास खास रुधिर प्रवाह रूप,
सीस पीड रोग अरू जेतें रोग नैन हैं ॥
और उन्मादवात कटीवात सीत अंग,
मृगीवात कंपवात सोफोदर अैंन है ।
जलोदर अंडवृद्धि धनुष चोवीस रोग,
ताकि कहै दंभक्रिया वैद्य ग्रन्थ वैंन है ॥ ३ ॥

दोहा

संनिपात ज्वर नाश कुं, डंभ बतावै च्यार ।
प्रथम तालवै दीजिये, दंभ गोल परकार ॥ ४ ॥
दूजौ लंबो ग्रीव परि, जहां धरिजै जोत ।
दो लवणै द्यौ वर्त्तुला, च्यारे इहि विधि होत ॥ ५ ॥

अतीसार ग्रहणी विषें, दंभ बतावे पंच।
नाभि चिहुं दिसि च्यार द्यौ, कूरम पद कै संच ॥ ६ ॥

त्रय अंगुल फुनि नाभि तजि, अधो भाग शुभ ठाण।
लंबो अंगुल च्यार कौ, पंचम डंभ प्रमाण ॥ ७ ॥

परिहां

पूठि दशा सु आणि उदर कर सु ग्रहै,
फीहा की जहां पीर आंगुली अग्र है।
दीजै तिहां दोइ डंभ एक एक उपरैं,
परिहां, एहि विधि वैद सुजाण तुरत वेदन हरै ॥ ८ ॥
डंभ तीन विध राल तहां विधि सु करै,
लांबो आंगुल च्यार एक तिहि उपरैं।
दूजौ हिरदौ मूल दंभ वर्त्तुल धरौ,
परिहां, पूछै जहां बहु पीर, तहां धरि तीसरौ ॥ ९ ॥

चौपांई

पांडु रोग सोफोदर सही, तीजो रोग जलोदर लहि।
च्यारे डंभ चिकित्सा जाणि, ज्युं कीजै त्युं कहुं बखाणि ॥१०॥
ह्रदे मूल वर्त्तुल इक होइ, दुहु कुखे लांबा द्यौ दोइ।
इक अंगुल तजि नाभि प्रकार, चउथौ डंभ चूड़ी आकार ॥११॥
फीहै जो विधि कहु बखाणि, गुल्म रोग पिण सो विधि जांण।
पेट सूल जो होइ अगाध, सूल डंभ तैं नासे व्याध ॥१२॥
प्रबल होइ जब खैन प्रकार, बोली दंभ क्रिया तहां बार।
एक तालवै दीजै गोल, दूजौ ग्रीवा जोत्रें ओल ॥१३॥

ग्रहणी रोग बताये पंच, तिण विधि सु देणा तिण संच ।
पंच उदर हिरदै प्रकार, इहि विधि द्वादश डंभ विचार ॥१४॥

हिरदै रोग स्वास अरू खास, डंभ क्रिया तिहां पंच प्रकास ।
हुदैं लीक अरू वत्तुंल च्यार, दंभ अस्थि के मध्य विचार ॥१५॥

रूधिर वहै नासा मुखि जबै, सीस डंभ वत्तुंल इक तबै ।
डंभ कह्या सन्निपाते जोइ, सीस रोग सीतांगै सोइ ॥१६॥

परिहां

मृगी धनुष वात जब जाणियै,
दीजै खट खट डंभ क्रिया पिहिचाणियैं ।
दो लवणे दोइ पाय एक पुनि तालवैं,
परिहां गुदड़ी उपरि एक इणै विध चालवैं ॥१७॥
कटी वात जब जाइ न ओषध गोलीयैं,
कटि नीचैं दोइ डंभ वणावौ चूलीयैं ।
अंड वृद्धि जब होइ दंभ इक दीजियै,
परिहां, पाय अंगुली पास समझि विधि लीजियै ॥१८॥
वामी दिसि जो होइ कुरंड विथा घणें,
दक्षिण दिसि द्यौ दंभ तुरत पीड़ा हणैं ।
पद अंगुल दश जाण तहां दश दंभ है,
परिहां, पंच पंच दोइ जानु संधि विचि थंभ है ॥१९॥

...न पीड अति ही जन औषध औसरैं,

दो लवणे द्यौ दंभ, तुरत पीड़ा हरैं।

अग्नि क्रिया के श्लोक वागभट ग्रन्थ में,

परिहां, कही भाषा सु सरल वचन के पंथ में ॥२०॥

सतरैं चालीस विजयदशमी दिनैं,

गच्छ खरतर जगि जीत सर्व विद्या जिनैं।

विजयहर्ष विद्यमान शिष्य तिनके सही,

परिहां, कवि धर्मसी उपगारैं दंभक्रिया कही ॥२१॥

—:०:※:०:—

ऐतिहासिक व्यक्ति वर्णन

बीकानेर नरेश

अनूपसिंह सवैया

केई तौ विकट वाट लंघत अलंघ घाट,
बीते हैं मुहीम मैं वरस बीस त्रीस जू ।
केइ उमराउ राउ चाकरी चपल कीनैं,
भीनैं बरसाति राति दौरै निस दीस जू ।
तेऊ सिरपा कुं उपा करैं कोरि भांति,
तो भी ताकूं नानति है दिल में दिलीस जू ।
धन्य महाराज श्रीअनूपसिंह तेरौ तेज,
बैठे ही कुंपातिसाह भेजे बगसीस जू ॥ १ ॥

—:※:—

संस्कृत

भुज्यत इष्ट जनैः सह मृष्ट मऽवे हि तदेव हि भोजन मिष्टं ॥
स्मर्यत एव परोक्षतया किल वर्य्यम ऽजर्य्य मथेह विशिष्टं ॥
ज्ञान गुणत्व मिदं भुवि वर्णय यत्रां हि कर्म्म वचश्च न दुष्टं ॥
छद्म विना द्रियते रूचिरं शुभ धर्म विधान महोउपदिष्टं

कवित—(सं० १७२६ मध्ये माघ मासे कह्यौ)

बीकपुर तखत महाराज मोटै वखत,
बजै सुजसां तणा जास बाजा ।

वड़ो उमराव दिल्लेस वखाणियो,
रूप भूपां अनूपसिंह राजा ॥१॥
कहर अरि कंटकी काटि कांने किया,
विरुद मोटा लिया आप वाहे।
करण तण आपणौ सुजस सगले कियौ,
सही परसंसियो पातिसाहे ॥ २ ॥
पाट वैठा प्रथम हरष हुयौ प्रजा,
दसो दिस भूपते भेंट दीधी।
सूरहर आप सुलतान साराहि नैं,
कुंजरां धनां वगसीस कीधी ॥३॥
हिन्दुआं मौड राठौड़ मौटे हसम,
पुहवि पत्ति मांहि परताप प्राभ्मौ।
अनूपसिंह राजवी अटक कटके अडिग,
आप श्रीजी करैं जास आभ्मो ॥ ४ ॥

अमरसिंह जी सवैया

तेरे तो प्रतांप के प्रकाश त्रास पाइ अरि
नास सरणैं की आस डोलत घराघरी।
तेरे ही नि देस देस नेस न प्रवेस कहुं
वन मैं निवेस काज धर की धराधरी।
सिंह न कौ डर डारि कन्दर कैं अन्दर ही
वैरि हीये तेरौ भय भयौ हैं खराखरी।

राज श्री अमरसिंह नामै सिंह सम ह्वै पै
सूरापन कैसे सिंह करिहैं बराबरी ॥ १

दोहा

खड...लाराखेसि, अमरेसैं लीधी उरा ।
राख्यो नही वहु रोस, दोइ आखर बगसे दीया । १ ।
अमरेसैं बाह्यौ सु असि अटक्यौ अरि उर आइ ।
तिण अरि धार बांधी तुरत, जोयौ मन्त्र जगाय ॥२ ॥

काव्य

श्री मच्छ्री अमरादिसिंह भवता नूनं रणे वैरिणा ।
वारूत्तारित मित्थमत्रमयकावाकूकिं वदंत्या श्रुता ।
मन्ये नाह मिति त्वया त्वति तरां तत् स्त्रीषु सिक्तं दकं ।
नोचेन्निर्ज्जरवत् साद प्रवहति स्त्री दगंभः कथं ॥ ६ ॥

अमृतध्वनि

सबल सकल विधि सबल सुत, गढ़ जेसाण गरिंद ।
अमरसिंघ इल मैं अखी, सोभत जांणि सूरिंद ॥ १ ॥
चालि—तौ सोभ सुरिन्द द्दुतिहि दिणंद द्रविण धनद्दानसमंद।
द्दुथिय दरद्द द्दलित दरिद्द दसहि दिशिंद ।
द्धितां हद्द द्देव विरुद्द द्दल बलरुद्द द्दूठ द्विरद्द द्दिढ़
असि वृन्द ।
दुंदुदभि नद्द द्दुसह सबद्द द्दुयण दहद्द द्दवट दंद ।
दूर सिस ह्रद द्दिल विहसद्द द्दुनिय कुमुदद्
द्दीपति चन्द द्देखि नरिंद दिन कविंद
द्यौ जयसद्द द्दीरघ आउख तास ॥२॥ स० ॥

गीत—राउल अमरसिंहजी री

बलोचांरा मांडला री संवत १७२६ जेठ माहे श्री जैसलमेर में कह्यौ ।

कवित्त

जेठ तपते तपत जीव जगरा जिके,
आपणी ठाम सहु रहैं अटकी ।
छोडि सहु काम ताके सहु छांहडी,
कीध तिणवार अमरेस कटकी ॥१॥
सांभली वात वडलोच सीमा हुता,
धपटिया धेगुआं करे धाड़ौ ।
खलकती लूअ मैं खण्ड करिवा खलां,
आवियो अमरसिंह तेथि आड़ौ ॥२॥
काटि खग झाटि अरि धाटि दहवाटि करि,
अधिक जस आपरे तखत आयौ ।
भलभली भेट भूपां तणी भोगवै,
सबल तण आज प्रतपै सवायौ ॥३॥
दौलति परजि सहु एम आसीस द्यै,
जोपिया जंग तिम वले जीपौ ।
दूथियां पाल सु दयाल दायाल हर,
दीपते सूर जिम सदा दीपौ ॥४॥

कवित्त जसवन्तसिंहजी (जोधपुर महाराज) का सं० १७३६ रें पोस माह मध्ये कह्यौ महाराजा जसवन्तसिंहजी देवलोक हुआं पछलौ। देहरा पड़्या तिण समीयैं रो।

हुतौ जसवंत तां थोक सगला हुंता,
हुती हिन्दुआं तणै बात हाथै।
देखसी असुर कवण तजि देहरा,
सलकिया देव जसवन्त साथैं ॥१॥

पड़्यैं जिण जोध पौकार सगलैं पड़ी,
धरैं नहीं अरज पातिसाह धीठौ।
राह बंधी हुइ रखे कोइ रोकसी,
देवैं जसवंत रौ साथ दीठौ ॥२॥

हुतौ हिंदुआ तणौ धरम सूरा हरौ,
सबल चिंता पड़ी देस सारैं।
दुख मरूधर तणा रखे हिव देखस्यां,
ललकिया देव जसवंत लारैं ॥३॥

सुणी सुर लोक में बात गजसीह रैं,
हुसी हिदुवां तणी रखै हासी।
आपणै बीज निज अंश अवतारिया,
आवियौ आप हिव देव आसी ॥४॥

कवित्त न० २ (जसवन्तसिंहजी रा समईया पछलो)

मरूधरै देस महाराज मोटौ मरूद,
कदै नहीं परज नै चिंत कांइ।

असुर सुं बीहतै इन्द्र आलोचि नै,
भीर नैं तेडियौ जसू भाइ ॥ १ ॥
जाइ सुरलोक मैं अमल कीयौ जसु,
असुर सहु नाठि मृतलोक आया।
कसर सहु आपणी मूलगी काढ़िवा,
लागतै जोर जंजाल लाया ॥ २ ॥
लोक सगलां कन्हे जीजीया लीजियै,
देहरा ठाम महिजीद दीसै।
थरहरै गाय इण राव इन्द्रसी थकां,
हियौ इण राज सुं केम हीसै ॥३॥
खुंदिजै परज चिहुं पाखती खोसिजै,
सहु कहै लोक इम केम सरसी।
धरौ मन धीर सुख हुसी हिंदू धरम,
कुंअर जसराज रा राज करसी ॥४॥

कवित्त दुर्गादासजी का

(महा) मौड मुरधर तणा खलां दल मौडतां,
दौड़ पतिसाह सुं करै दावा।
रौड़ रमतां थकां चौड रिम्म चूरतां,
ठौड ही ठौड राठौड़ ठावा ॥१॥
छात ढलतैं जसू हुइ नाका छिली,
सांक तजि साह सुं करै साका।
दाव पाका कीया सुजस डाका दिया,
जोध बांका करै नाम जाका ॥२॥

आगला भूप श्री अजीतसिंह आगला,
डागला दौड़ज्यूं दिली कति दूर ।
भागलैं भुजां बल खलां करि खागलैं,
सागलैं कीध जस सूर हर सूर ॥३॥
खीजीया यवन ल्यै जीजीया खूटिवैं,
खेचलां बीजीयां रैत खाखी ।
प्राण जोधाण रैं पाजीया पी जीया,
रेख दूर्गदास राठौड़ राखी ॥४॥

गीत श्री शिवाजी रो

श्री सूरत मध्यै कह्यौ सं० १७३३ आसाढ़ मांहे ।

सकति काइ साधना, किना निज भुज सकति,
वड़ा गढ़ धूणिया वीर वांकै ।
अवर उमराउ कुण आइ साम्हौ अडै,
सिवारी धाक पातिसाह सांके ॥ १ ॥
खसर करतां तिके असुर सहु खुंदिया,
जीविया तिके त्रिणौ लेहि जीहैं ।
शब्द आवाज सिवराज री सांभले,
बिली जिम दिल्ली रो धणी बीहैं ।२।
सहर देखे दिली मिले पतिसाह सुं,
खलक देखत सिवौ नाम खारैं ।
आवियौ वले कुसले दले आपरे,
हाथ घसि रह्यौ हजरत्ति हारै ॥३॥

कहर म्लेच्छां शहर डहर कन्द काटिवा,
लहर दरियाउ निज धरम लोचैं।
हिन्दुओ राउ आइ दिली लेसी हिवैं,
सवल मन माहि सुलताण सोचं ।४।

नाजर आनंदराम जी रो सवैयो

ज्ञायक गुणैं अगाह, न्याय कौ करै निवाह,
आलोची वडौ अथाह धीरज को धाम जू।
सज्जन फल्यो उमाह, दुज्जनां के हिये दाह,
पुण्य को सदा प्रवाह जाको शुभ नाम जू।
चित्त में धरंते चाह नित्त ही उडीके राह,
पूज्यौ इष्ट देवताह कीनौ इष्ट काम जू।
सब ही करै सराह वाह वाह वाह वाह,
आयौ तो भयौ उच्छाह श्री आनन्दराम जू।१।

:—❀—:

वर्त्तमान जिन चौवीसी

१ आदि जिन स्तवन

राग भैरव

आज सुदिन मेरी आस फली री ॥ आज० ॥
आदि जिणंद दिणंद सो देख्यो,
हरख्यो हृदय ज्युं कमल कली री ॥आज सु०॥१॥
चरण युगल जिनके चिंतामणि,
मूरति सोइ सुरधेनु मिली री ।
नाभि नरिंद को नंदन नमतां,
दूरित दशा सब दूर दली री ॥ २ ॥
प्रभु गुण गान पान अमृत को,
भगति सु साकर मांहि मिली री ।
श्री जिन सेवा सांइ धर्म सीमा,
ऋद्धि पाइ साइ रंग रली री ॥ ३ ॥

२. अजितनाथ स्तवन

राग—भैरव

प्रभु तूं अजित किन्हीं नहिं जीतो,
सोभत रवि ज्युं तेज सदीतो ।
अधिको को नहीं तोहि अगीतो,
तेरी महिमा जगत जगीतो ॥ प्रभु० ॥ १ ॥

सुर नर सब में अनंग अजीतो,
काम कठिन सो ते वश कीतो ।
जल सब अनल बुझाइ वदीतो,
पानी सोइ वडवानल पीतो ॥ प्रभु० ॥ २ ॥
बिन प्रभु दरसण काल वितीतो,
भवभय भमीओ बहु भयभीतो ।
गुणवंत तेरी सेव ग्रहीतो,
श्री धर्मशील सुशील लही तो ॥प्रभु०॥३॥

३. श्री संभव स्तवन

राग—सोरठ

सेवा बाहिरो कइये कोइ सेवक (ए देशी) ॥

संभवनाथ जी सब कुं सुखदाइ, किम ए विरुद कहावै ।
इहां आछी दीसैं अपणायत, सेवैं ते सुख पावैं ॥ संभव ॥ १ ॥
खिजमत करि कर जोडि खिजमत, आप नरीकैं औजांह ।
मोल दियै पिण मसकित माफक, मोटां री नहीं मौजांह॥२॥सं.॥
भगति करै त्या राखै भेला, कठै न फेरैं कबही ।
श्री धर्मशील कहै सुणजो साचो, स्वारथ राचैं सबही ॥स०॥३॥

४. श्री अभिनन्दन स्तवन

राग—वसंत

धन धन दिनकर उग्यो उछाह,
अभिनन्दन जिन वंदन उमाह ॥१॥

सब तमस मिट्यौ प्रगट्यौ सराह,
वर्त्यो शुभ ज्ञान प्रकाश वाह ॥२॥
चित कोक विलोकवै करत चाह,
सब सुर नर जिनकी करत सराह ॥३॥
फरस्यौ शुभ यश परिमल प्रवाह,
लुलि नमतां समकित रतन लाह ॥४॥
इनके गुण गण महिमा अथाह,
गावइ धर्मशी गुण गीत गाह ॥५॥

५. श्री सुमति जिन स्तवन

राग—वेलाउल

मेरे माई सुमति की सेवा साची।
जिनके नाम प्रसाद जगी है, राधा आप सुं राची ॥१॥
बांदी कुवुद्धि किए बहु कामण, नटवी ज्युं बहु नाची।
दूर निकार दइ बहु दूती, तृष्णा मारी तमाची ॥२॥
सुज्ञानी कै परप्यारी सुं, करनी प्रीति सुकाची।
सुधर्म शीलवती सुखदाइ, युवती याहीज राची ॥मेरे०॥३॥

६. श्रीपद्मप्रभु जिन स्तवन

राग—तोड़ी

हृदय पद्मप्रभु राचि रह्यो री।
मंगल सकल हर्ष भयौ मेरे, लाभ अनोपम रतन लह्यो री ॥१॥

काम क्रोध प्रवेश न पावत, गेह सुज्ञानी आप गह्यो री।
दुश्मन सकल निकल गये दूरे, सबल प्रताप न जाइ सह्यो री ॥२॥
अब अपने घर साहिब आयौ, चरण न छोड़ुं चित्त चह्यौ री।
शासन बगस्यौ जिन धर्म सीमा,
करिहौं मैं पिण आप कह्यौ री ॥ ३ ॥ ह० ॥

७. श्री सुपार्श्व जिन स्तवन

राग—सारंग-वृन्दावन

सही, न तजुं पार्श्व सुपास कौ ॥न०॥
सकल मनोरथ पूरण सुरमणि, सुरतरु लील विलास कौ ॥न०॥१॥
सुरनर और की करि करि सेवा, हुइ थानक कुण हास कौ।
अधिकौ लही साहिब को आदर, दास हुवै कुण दास कौ ॥२॥
शुद्ध समकित धर जिनवर सेवा, करण पातिक नास कौ।
श्री धर्मसींह कहै मोमन मधुकर, प्रभु पद पद्म सुवास कौ ॥३॥

८. श्री चंद्रप्रभु जिन स्तवन

राग—मारु

चंद्रप्रभु नी कीजइ चाकरी रे, चित चोखे हित चाहि।
सूधी कीधी सेवा स्वामिनी रे, लीधौ तिण भव लाह ॥१॥चं०
चाकर होइ रह्यो जसु चंद्रमा रे, लंछन मिशि पग लाग।
स्वामी नै सेवक उपमा सारखी रे, जुगति नहीं इण जागि ॥२॥चं०
प्रभ नी ठामै प्रभु एहवौ पढ्यां रे, योग्य अर्थ ए जाण।
श्री धर्मशी कहै सूधो समझियै रे, पंडित कहै ते प्रमाण ॥३॥चं०

९ श्री सुविधि जिन स्तवन ।

राग—आसा

कबहु मैं सुविधि कौ ध्यान न कीनउ ।
आरत रौद्र विचार अहोनिंश,
दुर्गतिघर करिवै घर दीनौ ॥ १॥
दीप ज्युं औरनि पंथ दिखायौ,
आपहि लाग रह्यौ तम लीनौ ।
मेरो तन धन करि सुख मान्यौ,
मणि परखी पिण अन्तर मीनौ ॥२॥
परमारथ पंथ नाहिं पिछाण्यौ,
स्वारथ अपणौ मानि सगीनौ ।
सुविधि कही धर्म सीख न धारी,
निकल गयौ नर जन्म नगीनौ ॥३॥

१० श्री शीतलनाथ स्तवन ।

राग--कान्हरौ

सुखदाइ शीतल स्वामी रे, शुभ सुमता रस विशरामी रे ।
उपकारी गुण अभिरामी रे, नमीयै एहनै शिर नामी रे ॥ १ ॥
केइ क्रोधी कपटी कामी रे, खल केइ केहि में खामी रे ।
अज्ञानी अगुण अथामी रे, करु तनु सेवा किण कामी रे ॥ २ ॥
जिनवर जग अन्तर्यामी रे, गुण गावै ते शिवगामी रे ।
ध्यावै धर्मशी धर्म धामी रे, पुण्ये प्रभु सेवा पामी रे ॥ ३ ॥

११ श्री श्रेयांस जिन स्तवन

राग—सामेरी

केवल वाला रे केवल वाला, कोउ मिलि है केवल वाला।
ताको पूंछु कब तूटेगा, जन्म मरण दुख जाला॥ के० ॥१॥
भव २ ममते पार न पायो, मोह रहट की माला।
पावु ज्ञानी तो अब पूछु, कब यह मिटय कशाला॥ २॥
धन अपनै की शोध न धारी, मद आठूं मतवाला।
सो दिन सफल बचन सद्गुरु के, पीवुं अमृत प्याला ॥३॥
श्रेय भयौ लह्यौ श्रेयांस साहिब, आया समकित आला।
सब सुख कारण अनुभव सानिधि, सु धर्मशील संभाला ॥४॥

१२ श्री वासुपुज्य जिन स्तवन

वाह वाह वासुपुज्य नी वाणी, वासव पण आप वखाणी।
आवइ भावइ आफाणी, उवारणा लेइ इन्द्र इन्द्राणी रे ॥१॥
मधुर ध्वनि गाज मंडाणी, योजन लगि सर्व सुणाणी रे।
सुर नर तिरि सहु समझाणी, अतिशय पैंत्रीस आणी रे ॥२॥
वैर वांतां सहु विसराणी, पशु ए पिण प्रीति पिछाणी रे।
धर्मशील सूधा सचाणी, शिवरमणी तणी सहनाणी रे ॥३॥

१३ श्री विमल जिन स्तवन

राग—मल्हार

विमल जिन विमल तुम्हारा ज्ञान ।
परखै लोक के सकल पदारथ, षट् द्रव्य नीकी खान ॥१॥ वि०
मिथ्या, अविरती योग कषायै, बंध सत्तावन जान ।
अष्ट कर्म, इक सौ अट्ठावन, प्रकृति तजी पहिचान ॥२॥ वि०
आपहि आप सु आप पिछाण्यौ, परगुण नाहिं प्रमाण ।
धरि धर्म ध्यान पिछान सुक्ल पथ, थिर बैठो शिव थान ॥३॥वि०

१४ श्री अनंतनाथ स्तवन

राग—सोरठ

अनंतनाथ रा गुण अगम अनंता, सांभलजो सहु संता ।
रयणायर में गिणती रयणे, मुनि न कहै मतिमंता ॥१॥
भव्य अनंतानंत छयें में, थोवा सिद्ध अनंता ।
एक निगोदी जीव अनंता, वलिय वनस्पति वंता ॥२॥
काल पुग्गल आकार अनुक्रम, अधिक अनंतानंता ।
श्री धर्मशी कहै ए सर्दहिजो, साखी सूत्र सिद्धंता ॥३॥

१५. श्री धर्मनाथ स्तवन

राग—धन्याश्री

धर मन धर्म को ध्यान सदाइ ।
नरम हृदय करि नर म विषय में, कर म करम दुखदाई ।धर।१।।
धरम थी गर्म क्रोध के घर में, परमति सरमति लाई ।
परमातम शुद्ध परमपुरुष भज, हर म तु हरम पराई ।।२।।
चरम की दृष्टि विचर मती जिवड़ा, भर म भरम मत भाई ।
शरम बधारण शर्म को कारण, धर्म ज धर्मशी ध्याई ।।३।।

१६. श्री शान्ति जिन स्तवन

राग—वेलाउल अलहियौ

श्री शान्ति जिनेश्वर सोलमौजी, शान्तिकरण सुखदाइ ।
नाम प्रसिद्ध जस निर्मलो, पूजैं सहु सुरनर पाय हो ।।श्री०।।१।।
आयउ शरण उवारियौ जी, पारेवो धरि प्यार ।
दान दियौ निज देह नौ, इम मोटा ना उपगार हो ।।श्री०।।२।।
उदरे आवी अवतर्याजी, अधिकाई करी एह ।
मरकौ उपद्रव मेटियौ, हर्ष्यौं सहु देश अछेह हो ।।श्री०।।३।।
भव एके हिज भोगवी जी, दीपत पदवी दोय ।
चावौ चक्रवर्ती पांचमौ, सोलम जिनवर सोय हो ।।४।।
समरथ ए लह्यौ साहिवौ जी, कमणा नहीं हिवै काय ।
सेव्यां वांछित हुवै सदा, इम कहै धर्मशी उवझाय हो ।।श्री०।।५।।

१७. श्री कुंथुनाथ स्तवन

राग—पंचम

शुभ आतम हित साधि रे साधि,

उलझ्यौ परसुं म करि उपाधि ।।शु०।।

तुं हिज राजा तुं हिज रंक, सुणि दृष्टान्त ज्युं होइ निशंक ।।१।।

करि नव नव भव कीड़ी कुंथु, क्रमि सर्वारथ सुर जिन कुंथु ।

छठौ चक्रवर्ती साधी छः खंड, पदवी दोइ पाई परचंड ।।२।।

इण हिज वलि दे उपदेश, केई तार्या टालि कलेश ।

आप तुं अंतरदृष्टि सुं ईख, साची धर सदा गुरु धर्मशीख ।।३।।

१८. श्री अरनाथ स्तवन

राग—कड़खौ

कहै अरनाथ इम, अरति रति क्यौं करौ,

आथि अरहट घड़ी एम आखी ।

भरिय खाली हुवै साई खाली भरी,

सूर्य शशि समइ इण बात साखी ।। १ ।।

करहु मन ठाम नै काम पिण वस करौ,

धरहु मत द्वेष मत मान धारौ ।

काल रंक राव नै केड़ि फिरतौ रहे,

वहै सरिखौ नहिं कोइ वारौ ।। २ ।।

सुणौ अरनाथ अरदास सेवक तणी,
स्वामी कही एह धर्म शीख साची।
तेह पलिस्यैं नहीं तोइ तरिसुं तिणैं,
राज री भगति में रहिस राची ॥ ३॥

१६. श्री मल्लिनाथ स्तवन

राग—सिन्धु

मल्लि जिनेसर तु महामल्ल, हणिया मोह मदन हैं ठल्ल।
पिता तणी पिण चिन्ता पल्ल, सगला दूर किया अरि सल्ल ॥१॥
अहो अहो ताहरी अथग अकल्ल, आपणैं रूप रचाइ अवल्ल।
करि जीमण इक एक कवल्ल, भरय तिहां भोजन भल भल्ल ॥ २ ॥
आपणा जे अरि मित्र असल्ल, एकान्ते धरि एक एकल्ल।
जुगति देखाई तें भल जल्ल, दुर्गंध नासै भूत दहल्ल ॥ ३ ॥
तिण सुं अपणइ केहो तल्ल, चारित्र लीधौ चोखी चल्ल।
अरिहन्त पद धर्म शील अदल्ल, पाली पहुतो मुगति महल्ल॥४॥

२०. श्री मुनिसुव्रत जिन स्तवन

राग—जैतश्री

सब में अधिकी रे याकी जैतश्री, काहू और न होड करी ॥स०॥
आठों अंग जोग की ओटैं, उद्धत मार्यौं मोह अरी ॥ १ ॥

अन्तर बहि तप जप आरा बे, जोर मदन की फौज जरी।
ज्ञानी हनी ज्ञान गुरजा सूं, ममता पुरजा होइ परी ॥ २ ॥
अनुभव वल सुं मौदल भागे, फाल फतह करी फौज फिरी।
कहइ धर्मशी मुनिसुव्रत दाना, देत सदाइ मुगतिपुरी ॥ ३ ॥

२१. श्री नमि जिन स्तवन

राग—श्री राग

नित नित नमिजिन चरण नमुं।
मनहि मनोरथ उपजत मेरे, भमर होइ प्रभु पास भमु ॥ १ ॥
न नमुं और कौ तब सब निंदा, खलक करौ तोइ वचन खमुं।
लालच लोभ किही नहीं लागुं, राति दिवस जिन रंग रमूं ॥२॥
गुण गण गान इन्हीं के गावुं, दुर्गति के दुख दूर गमूं।
श्री धर्मशी कहै इण सें राचुं, दूजा इन्द्रिय विषय दमूं ॥ ३ ॥

२२. श्री नेमिनाथ स्तवन

राग—वसंत

करणी नेमिकी, काहू और न कीनी जाय। क०
तरुण वय परणी नहीं हो, राजिमती यदुराय ॥ १ ॥
जीव पुकार सुणी जिणें हो, करुणा मन परिणाय।
गज रथ तजके पुनि गझौ हो, शिलांग रथ सुखदाय ॥ २ ॥
ममता बांदी मूकि के हो, सुमता ली समझाय।
सिद्ध बधु विलसै सदा हो, प्रणमैं धरमसी पाय ॥ ३ ॥

२३. श्री पार्श्वनाथ स्तवन

राग—रामगिरी

मेरे मन मानी साहिब सेवा।
मीठी और न कोइ मिठाइ, मीठा और न मेवा ॥ १ ॥
आतम राम कली ज्यों उलसै, देखत दिनपति देवा।
लगन हमारी यासु लागी, रागी ज्यु गज रेवा ॥ २ ॥
दूर न करिहुं पल भर दिल ते, स्थिर ज्यु मुदरी थेवा।
श्रीधर्मशी प्रभु पारस परसैं, लोह कनक कर लेवा ॥ ३ ॥

२४. श्री वीर जिन स्तवन

राग—वेलाउल

प्रभु तेरे वयण सुपियारे, सरस सुधा हुं ते सारे।
समवसरण मधि सुणि मधुर ध्वनि, बूझति परषद बारे ॥
सुनत सुनत सब जन्तु जन्म के, वैर विरोध विसारे ॥ १ ॥
अहो पैंतीस वचन के अतिशय, अचरज रूप अपारे।
प्रवचन वचन की रचना पसरत, अब ही पंचम आरे ॥ २ ॥
वीर की वाणी सबहिं सुहाणी, आवत बहु उपकारे।
धन धन साची एह धर्मशी, सब के काज सुधारे ॥ ३ ॥

२५. चौवीसी कलस

राग—धन्याश्री

चितधर श्री जिनवर चौवीसी ॥
प्रभु शुभ नाम मंत्र परसादे, कामित कामगवीसी ॥ १ ॥
रागबन्ध ध्रुपद रचनापै, मांहै ढाल मिली सी।
रोटली गहुं की सब राजी, मांगे स्वाद कुं मीसी ॥ २ ॥
सतरैसै इकहुत्तर गढ जेशल, जोरी यह सुजगीसी,
श्री संघ विजयहर्ष सुख साता, श्री धर्मसींह आशीशी ॥ ३ ॥

—:o:—

चौवीस जिन सवैया

आदि ही कौ तीर्थंकर, आदि ही कौ भिक्षाचर,

आदि राय आदि जिन च्यारौं नाम आदि आदि ।

पांचमों रिषभ नांम, पूरैं सब इच्छा कांम,

कांमधेनु कांमकुंभ कीने सब मादि मादि ।

मनसौं मिथ्यात मेट, भाव सौं जिणंद भेट,

पावौ ज्युं अनन्त सुख, गावो गुण वादि वादि ।

साची धर्म सीख धारि, आदिहि कुं सेवो सार,

आदि की दुहाई भाई जौ न बोलैं आदि आदि ॥१॥

राजा जितशत्रु संग रांणी विजया सुरंग,

खेलै पासा सार पै, तमासा कैसी बात हैं ।

आप भूप हारि आई, पटराणी जैंत पाई,

या तौ अधिकाई गर्भ अर्भ की हिंमात हैं ।

गुण को निपन्न नांम [1]धाम कौ [2]सहस्र धांम,

अैसो है अजित स्वामी, विश्व में विख्यात है ।

दूसरे जिनंद जैसो, दूसरौ न देव कोऊ,

ध्यावौ एक यौही धर्म सीख जो धरातु हैं ॥२॥

---

१ तेज २ सूर्य

संभव कौ अनुभौ धरि जातैं मिटै ममता समता रस जागें।
पाप संताप मिटै तब ही जब आपसु आपही की लय लागें।
धरौ ध्रम सील लहौ निज लील, जहाँ गुण ग्यांन अनंत अथागें।
संभव संभव भाव भलें भज, संभव सौं भव के भय भागें ॥३॥
पिता कहैं नंदन सीख सुनौ, जु चलौ अभिनन्दन वन्दन हेतैं।
नन्दन संवर कौ सुध संवर, [1]स्यंदन धारत हैं सिवखेतैं।
कंद के फंद निकंदन दंदन, जा तनु कुन्दन की छवि देतैं।
चंदन चंद सोहै जस उज्जल, चोथो जिनंद नमो सुभ चेतैं ॥४॥
मेघकौ अंगज मेघ ज्यु गाजन, वांणि वखांणि सुजांण सुहाना।
चोतीस आपके हैं अतिसैं, अधिकैं इक एकही वांणी विख्याता।
जैन के बैन महाजग मंगल, न्याय तु मंगल मंगला माता।
पीयूषई इख धरौ ध्रम सीख, भजौहु सुमत्ति सुमत्ति कौ दाता ५
आज फल्यौ सुर को तरु अंगण, आज चिंतामणि सो कर आयौ
काम कौ कुंभ धर्यौ निज धाम, सुधा मनु पांन कराइ धपायौ।
आज लह्यौ रसना रस कौ फल, जा दिन तें जिन कौ जस गायौ।
आज मुदैही उदैं ध्रम सील, भयौ पद्मप्रभु साहिब पायौ ॥६॥
पारस फास प्रसंग कुं पाय, भयो है कला यस कंचन जाचौं।
तो भी मिटैं नहि छेदन भेदन, बंधन तातें सब गुण काचौं।
जैन कुं भेट मिथ्यात कुं मेटि, ज्यु केवलज्ञांन ही कैं रंग राचौं।
न्याय सकार धर्यौ धुर नांम कैं, पारस हुं तें सुपारस साचौं ७
चंद की सोल कला सबही, वदि पछमें मंद दसा मढती है।
याकैं तो चौगुणी चौ दुगुणी[2] पुनि, वांन विसेष सदा वढती है।

१ संवर को रथ २ बहत्तर कला

ग्यांन प्रकास कहैं ध्रमदास, सदा जसवास दुनी पढती हैं।
लंछन चन्द करैं नित चाकरी, चंद्रप्रभू की कला चढती हैं ॥८॥

बीते हैं अनादि काल [1]योनि कैं जंजाल जाल,
चोरासी की फासी सहैं तूं भी ताकै मधिकौं।
पुण्य कैं प्रकार अवतार आयौ मांनव कै,
पायौ हैं जिहाज सोउ जन्म जलनिधिकौं।
यारी समतासौ जोरि ममता सौ तांता तोरि,
आप ही धणी हैं तूं तौ आपणी ही रिधिकौं।
ध्यावौ धर्म सील ध्यांन पावौ ज्युं अनंत ग्यान,
सुविधि बतायौ असौं मारग सुविधि कौ ॥९॥

क्रोध विरोध सबे मिटि जात हैं, धारत हैं मति राग न धेखैं।
मूलतें [2]सात मिटात है घातक, आवत सम्यक भाव अलेखैं।
ताप सन्ताप मिटैं भवके सब, [3]दंड दसा कबहुं नहि देखैं।
शीतल कौ मुख देखत ही मुझ, [4]हीतल शीतल होत विसेषैं ।१०।
पाय श्रेयांस जिणिंद के पाय, उपाय श्रेयांसि [5]अपाय मिटाए।
मातही विष्णु पिता पुनि विष्णु, बडे दुहुं के इक नाम बताए।
इक्ष्वाकु कै वंस वृषें अवतंस है, उच्चकै चन्द सबै ही सुहाए।
इग्यारमें साहिब की लही सेव, इग्यारमी रासि सबे ग्रह आए ११

१ चोरासीलाख जीवायोनि २ चार अनंतानुबंधिया, तीन गोहिनी एवं सात
३ कलह ४ हियो ५ विघन

केईतौ [1]कैलास कौं रहास करि वैठि रहे,
काहू को तौ वास हैं वंवूल [2]बोधितरू कौं।
कोऊ [3]जल-राशि सेष नाग पास सोवत हैं,
काहू को रहास कामधेनु पूंछ खुरकौं।
कौऊ तौ अकास अवकास माहे भटकत,
कोऊ कहे मेरौ मेर में हू धणी धुरकौं।
केवल प्रकासी अविनासी हैं अनैंसी ठौर,
तहाँ कीनौं वास वासपूज सिधपुरकौं ॥१२॥

विमल विसेष ग्यान विमल कला निधान,
विमल विचार सार सुद्ध साधु मगमें।
केते करे उपगार तारे भव्य नर नारि,
बूडते संसार वार अंवुधि अथग में।
एक तेरी करी सेव सव ही मनाए देव,
सबही के पग पैंठे एक गज पग में।
सुद्ध धर्म सील साथ, अैसो देव कौन आथ,
जैसौ है विमलनाथ तेरो जस जग में ॥१३॥
आदि के [4]अनंतानंत, सिद्ध सवे जीव संत,
दूसरैं निगोद जीव तीजैं [5]वनरास हैं।

---

१ महादेव २ कृष्ण वासौ बौधतरु, पीपल ३ समुद्र।
४ सिद्धा निगोय जीवा, वणस्सई काल पुग्गला चैव।
सव्वमलोगनहं पुण, तिवगाऊं केवल गामि ॥ २ ॥
५ वनस्पती

चौथो काल कौ सरूप, पंचमौं पूगल रूप ।
छट्ठो भेद वेद तूं अलोक को आकास हैं ।
इण कें त्रिवर्ग मान, केवल दरस ग्यान,
अैसै धर्म सीख ध्यांन अंतर प्रकास हैं ।
आप तूं अनंतनाथ, नाम है अरथ साथ,
पांचु ही अनंत कहे, ते भी तेरैं पास हैं ।१४।
पुद्गल कैं संग सेती, पुद्गल ही आई मिलै,
ज्ञांन दृष्टि जगी नांहि लगी दृष्टि चर्म चर्म ।
आतम अनंत ज्ञान सोई धर्म थान मान,
और ठौर दौर दौर, करैं सोइ कर्म कर्म ।
विश्व में रहे हैं व्याप, प्राणी करैं पुन्य पाप,
आपकुं न जानै आप, भूल्यौ फिरैं भर्म भर्म ।
ध्यावौ प्रभु धर्मनाथ, शुद्ध धर्म शील साथ,
धर्म की दुहाई भाई, जौ न बोलैं धर्म धर्म ।१५।
छोरि षटखंड भार, चौसठि हजार नारि,
छन्नू कोरि गांम छोरि तोरि नेह तंत तंत ।
वाजै वाजैं तीन लाख, लाख लाख अभिलाष,
तजिकैं चौरासी लाख, तेजी रथ दंति दंति ।
चित्त में वैराग धारि, वित्त के भंडार छारि,
भीनौ उपशांत रस, कीनौ मोह अंत अंत ।
याके गुण हैं अनन्त, धर्म्मसी कहैं रे संत ।
संति की दुहाई भाई, जो न बोलैं संति संति ॥ १६ ॥

जलकै उपल जैसें करणैं यथाप्रवृति,
कर्म थिति तुच्छ कैं परस देस ग्रंथ ग्रंथ ।
कीनो है अपूरवकरण अनुभौ प्रमांन,
ज्ञांन कै मंथान सु मिथ्यात मोह मंथ मंथ ।
करण अनिवृति आयो, धर्मसील ध्यांन ध्यायौ ।
पायौ है उदै सरूप समकित कौ पंथ पंथ ।

कुंथ कुंथ सम लीनौ, चक्रि पद हेय कीनौ,
कुंथ की दुहाई भाई, जो न वोलें कुंथ कुंथ ॥१७॥

सुदर्शन गात सुदर्शन तात है, देवीय मात माहा जसनांमी ।
लह्यो अवतार भयौ चक्रधार, तिर्थंकर है पदवी दोइ पांमी ।
जाकै प्रताप मिटै सब ताप, ज्यौ जप ताप सु अन्तरजामी ।
तरौ भव पाथ[1] सदा सुख साथ, नमौ अरनाथ अढारम
सांमी ॥१८॥

जिनकैं सुर कुंभसौ कुंभ पिता पुनि, मात प्रभावित पुन्यकी पोषी
सुपने दस च्यार लहैं सुविचार, भयौ जिनको अवतार अदोषी
कितने नृप तारि किए उपगार, लह्यौ सिव द्वार भवोदधि सोषी
मति को मतभेद कहौ कोऊ कैसें हुं, मल्लिकी चह्नि असह्निकी
चोखी ॥१९॥

---

१ जल

मात कै कूखि लह्यौ अवतार, भयौ व्रत्त कौ अभिलाख[1] असंदौ[2]
तात कियौ व्रत्त उच्छव देस में, सेस प्रजाहु यही परिछंदौ[3]।
मोटी भई तप की महिमा मुनि-सुव्रत नाम कीयौ निज नंदौ।
तीनहुं लोक कौ नाथ तिर्थंकर, वीसमौ वीस विसे करि
वंदौ ॥२०॥

आलस[1] मोह-कथा[2] अवहीलन,[3] गर्व[4] [5]प्रमाद निद्रा[6]
भय[7] भ्रांमी।
तद्धनता[8] पुनि सोग[9] अग्यांन[10], विषय[11] कुतूहल[12] रामति
[13]कांमी।
त्याग छ सातक घातक काठिए, धारि भली ध्रमसीखसु धामी।
अनाथकौ नाथ नमौ नमिनाथ, सनाथ किए सबही सिर
नांमी ॥२१॥

राजीमती सती सेती नवां भवांहु कौ प्रेम
तोर्‌यौ पुनि जोर्‌यो भाव प्रेम न अप्रेम प्रेम।
अैसौ महा ब्रह्मज्ञांनी, शुद्ध धर्म्मशील ध्यानी,
यासौ निकलंक कोहैं, सोहैं सम हेम हेम।
धन्य सिवादेवी मात, जाकै सोलै अंग जात,
महा सत्य दृढ़ शुभ रिष्ट पांचौ नेमि नेमि।
छठ्ठौ रहनेमि नांमी, तारे सब नेमि स्वांमी,
नेमिकी दुहाई भाई, जो न बोलैं नेमिनेमि ॥ २२ ॥

देवलोक दसमें तैं आप अवतार आयो,
पायो धुरि दसमी जन्म पोस मास मास।

१ डोहलो २ अधिको ३ परिवार।

कासी देसवासी पुरी दुरी नांहि वांनारसी,
आससेन पिता, माता वामा जसवास वास।
जैंन धर्मसींह जागैं, पाप दुख पील भागैं,
जाकैं आगैं देवनिके, देव भए दास दास।
पूरैं सब ही की आस, पदमा निवास पास,
पास की दुहाई भाई, जो न बोलैं पास पास ॥ २३ ॥

गुण कौ गंभीर खीर, सोनैंसो सरीर वीर,
अैसो देव महावीर, धीरनि में धीर धीर।
दान को उदौ उदीर दुनी कीनी दवा गीर,
दीनौ सवा लाखहु कौ, देवदुप चीर चीर।
मारे मोह द्रोह मीर ग्यांनी गुने गंगनीर,
तारे तकसीर वारें, पायौ भवतीर तीर।
साचौ जैनधर्म सीर वीर में वीराधिवीर,
वीर की दुहाई भाई, जो न बोलैं वीर वीर ॥ २४ ॥

साधु भला दस च्यार हजार, हजार छतीस सु साधवी वंदौ।
गुणसठ्ठि सहस्स सिरैं लख श्रावक, श्रावकणी दुगुणी दुति चंदौ
चौवीसमें जिनराज कौ राज, विराजत आज सबैं सुखकंदौ।
श्रीध्रमसी कहैं वीरजिणिंदकौ, शासनधर्म्म सदा चिरनंदौ॥२५॥

इति चौवीस तीर्थंकरां रा सवैया संपूर्ण ॥ पं० सामजी लिखतं
बीकानेर मध्ये संवत् १७८१ वर्षे मिती आसाढ़ सुदि ६ दिने।

—:०:—

नवकार छंद

कामित संपय करणं, तम भर हरणं सहस्स कर किरणं ।
पणमसि सद्गुरू चरणं, वरणिस नवकार गुण वरणं ॥ १ ॥
वरणिस नवकारं सहु तत सारं, एहिज आतम आधारं ।
अनादि अपारं इण संसारं, जिन शाशन में जय वारं ॥
इण पंचम आरं इण अवतारं, श्रावक कुल लहि श्रीकारं ।
सहु मंत्रे सारं सब सुखकारं, नित चित धारं नवकारं ॥ २ ॥
सहु में सिरदारं, अगम अपारं, अक्षर में जिम ॐकारं ।
ध्याने चित धारं विषमी वारं, अड़वढ़ियां नै आधारं ॥
राखे इकतारं अति हितकारं, परभव पण ए उद्धारं ॥स०॥ ३ ॥

पद पंच मझारं पंच प्रकारं, पंच परमेष्ठि अवतारं ।
वरतें इण वारं केवल धारं, बोल्या अरिहंत गुण बारं ॥
कर्म अष्ट क्षयकारं मुगति मझारं, सिद्धगुण आठे संभारं ॥स०॥४॥

गुण दुगुण अढारं धुरि गणधारं, आचारज शुभ आचारं ।
उवझाय उदारं सुत्र सुधारं, गुण पचवीसे आगारं ॥
भल तप भंडारं ए अणगारं, इण गुण दउढा अढारं ॥सहु०॥५॥

शिव नाम कुमारं, कष्ट मझारं, ठग वसि पड़ियो इकतारं ।
तिहांगुण नवकारं खड़ग प्रहारं, नांखि कड़ाहे निरधारं ॥
तलि कीध तयारं सीधो सारं, सोवन पुरिसौ श्रीकारं ॥सहु०॥६॥

पति कीध विचारं जिन मति नारं, श्रीमति मारवीय धारं ।
घटथी पुफभारं आणि अवारं, तिय किय घट कर संचारं ॥
फीटी अहि फारं, हुवउ हारं, धन ए जिनमत जप धारं ॥स०॥७॥

वलि विणठी वारं सांझ सवारं, दंडाकारं कांतारं ।
शांत्रव सिरकारं सिंह शिकारं, दावोदारं दरवारं ॥
गिण वैठि वेगारं कारागारं जय सहु ठामें जयकारं ॥सहु०॥८॥

विणजें व्यापारं वलि विवहारं, लक्ष्मी आप वहै लारं ।
परिवल परिवारं पुण्य प्रकारं, वोले वहु जस वाजारं ॥
वाहें इम वारं कुशल करारं, करे सहु उपरि कण वारं ॥सहु०॥९॥
इम वहु अधिकारं गुण विस्तारं, पामें कहतां कुण पारं ।
धुरि ॐ ह्रीं धारं सौ हजारं, जपतां हुवै जय जेतारं ॥
पूरव दस च्यारं सूत्रे सारं, दोउ भवसुख दातारं ॥सहु०॥१०॥

नित चित धरि नवकार, जप्यां दुख दूरे जावे ।
नित चित धरि नवकार, परवल संपति सुख पावै ।
नित चित धरि नवकार, शत्रु भय न गिणै सांको ।
नित चित धरि नवकार, वाल पिण न हुवे वांको ।
तिम रोग शोक चिन्ता टलै, संकट जावें दूर सही ।
हुवै सकल सुख विजयहरख, कवि धर्मशी उवझाय कही ॥११॥

—:०:०:—

ऋषभदेव स्तवन

ढाल—सफल संसारनी

त्रिभुवन नायक ॠषभ जिन ताहरौ,
सुजस सांभलि मन ऊमह्यौ माहरौ।
तारण तरण नहीं को तो सारीखो,
पुहवि सहु सोभि नैं ए लह्यौ पारिखौ ॥१॥
वलि सुणौं आदिजी माहरी वीनति,
तुम्ह सेवा तिका लहीय निधि तीन ती।
त्रिकरण सुद्ध इकतार तोसुं कीयौ,
हिव विशेषैं करी हरखियौ मुझ हियौ ॥२॥
भगवन माहरैं तुंहिज साहिव भलौ,
तुं किम लेखवैं नहीय मोसुं तलौ॥
विरुद धारो बिया चाल बीजी चलौ।
पूछस्यूं हुं पिण जाव पकड़ी पलौ ॥३॥

धरिय सहुनी दया प्रथम महाव्रत धरौ,
अरि हणी नाम अरिहंत किम आदरौ।
व्रत बीयौ धरी मृषावाद तजियौ वली,
तुं हिज कहै बात अणदीठ अणसांभली ॥४॥
दाखवै कांइ लीजै नहीं अणदियै,
लालची तुं हिज जिण तिण तणा गुण लियै।

जाणि नववाड़ि शुद्ध शीलव्रत जोगवैं,
पंच अंतराय हणि भोग सहु भोगवैं ॥५॥

घरि परिग्रह तजी कीध इच्छा घणी,
सहस चौरासी शिष्य लाख त्रण शिष्यणी।
मुखि कहै कोई सेवक नहीं माहरै,
अणहुंतै कोड़ि इक देव सेवा करै ॥६॥

नयण निरखौ नहीं श्रवण ना सांभलौ,
अंश पिण जीभ सुं स्वाद नां अटकलौ।
किणहीं इन्द्रिय सुं कांइ जाणौ नहीं,
तोई सर्वज्ञ रौ विरुद धारौ सही ॥७॥

क्रोध अलघौ करी कीध कोमल हियौ,
किण विधैं काम रिपु हणिय दहवट कियौ।
कीजै नहीं मान उपदेश एहवा कही,
नेट तुं किणही नै शीश नामें नहीं ॥८॥

कपट नहीं कोय तौ भगत किम भोलवौ,
अवगुण पारका देखि किम ओलवौ।
किणहि वातें कदे लोभ जो ना करौ,
धरिय त्रण रतन नै केम जतने धरौ ॥९॥

भिक्खु अणगार निज नाम मन शुद्ध भणौ,
तीन गढ़ छत्र त्रिण राज त्रिभुवन तणौ।
वचन गुप्ते वली नाम वाचंयमा,
योजन वाणि सुं गाजै च्यारु गमा ॥१०॥

कनक आसण ग्रहै कहै अकिंचणा,
वींजवै चमर नै वलिय निर वींजणा।
समिती तीनज धरौ तौ इ साचा यति,
पास राखौ नहीं ओघौ नै मुंहपति ॥११॥
पर भणी कहौ मत थाओ परमादिया,
कांइ राइ प्रायश्चित आप न करो क्रिया।
जाब हसावरा जुगति सु जांणस्यौ,
आखर महिर मो ऊपर आणिस्यौ ॥१२॥
विहुं मुखे वोलतो लोक निन्दा लहै,
केवली होइ नै चिहुं मुखे तु कहै।
भला भला भव्य तोइ साच करि सर्दहै,
जस तणी रात जाया तिके जस लहै ॥१३॥
प्रकृति म्हारी इसी काइ छै पापिणी,
ओछी अधिकी सही ना सकुं आपणी।
वड़िय ताहरी क्षमा वात तिण सहु वणी,
ध्यान हिव ताहरो तुं हिज माथै धणी ॥१४॥
अवगुण माहरा ते सहु अवगणी,
भगवन् देव सेवक करो मो भणी।
स्वामी सेव्यां विजयहर्ष शोभा घणी,
वृद्धि वलि थाय जिन धर्मवर्द्धन तणी ॥१५॥

॥ कलश ॥

इम विलसी श्रीअरिहंत पदवी, धन्य जगगुरु जगधणी,
हिव सिद्ध हुवा आपरूपी जाव न दीये पर भणी।
इण गुण प्रशंसा मांहि निंदा काइ जाणौ आपणी,
आपजो अमनै उरि एहिज अरज श्री धर्मशी तणी १६॥

:—:—:

शत्रुंजय वृहत् स्तवन

(आलोयणा पचीसी)

सेत्रुंजे नायक वीनति सांभलौ, श्री रिषहेसरु स्वाम ।
दीनदयाल तुम्हाने दाखिवुं, अंतर वीतग आम ॥ सें० ॥१॥

नटवानी परि भव भव नाचता, विविध वणाया वेश ।
कर्म वसे करि ममते मैं किया, केइ पाप किलेश ॥ सें० ॥२॥

केवलज्ञानी तुम्ह आगल किसुं, देखावीजे दाख ।
पिण आलोयण लीजे आपणी, श्री अरिहंतनी साख ॥सें०॥३॥

पाप टलै नहीं आलोयण पखै, कहै ज्ञानी सहु कोय ।
परही मूकयां सिरनी पोटली, हलवी गावड़ी होय ॥ सें० ॥४॥

अरिहंत देव सुसाधु गुरु इसा, जैन धरम तत्त जाण ।
समकित साचौ एनवि सर्दह्यौ, अधिक मिथ्यामति आण ॥सें०॥५॥

पहिले आश्रव हिंसा प्राण नी, कीधी केइ प्रकार ।
जयणा कांयनी जीवनी, पामिस किम भव पार ॥ सें० ॥६॥

कूड़ कपट कलि विकलां केलवी, कीजइ छै केइ काम ।
मृषावाद पगोपग मोकलौ, सी गति थासी स्वाम ॥ सें० ॥७॥

अधिको लीजै ओछो दीजिये, रीति इसी दिन रात ।
अदत्तादान वणा लागै इसा, तरिसुं किण परि तात ॥ सें० ॥८॥

तीन विधेइ सुर नर त्रियंच ना, मैथुन सुं मन लाय ।
काम विटंबन केम कही सकुं, जाणै तुँ जिनराय ॥ सें० ॥९॥

केइ उपाय करी मेलण करूं, परिग्रह विविध प्रकार।
विरति करूं पिण मन न रहै वलि,
तौकिम हुवै भव पार (निस्तार) ॥सै०॥१०॥

इन्द्रिय पांचे आप मुराहिदा, अधिक करे उन्माद।
संवर भाव न आवै सर्वथा, पड़्यो जे प्रमाद ॥ सै० ॥११॥

कोइ स्वभावे रेकारो कहै, चटकी तुरत चढंत।
क्रोध विरोध वधारू केतला, आवै किम भव अंत ॥सै०॥१२॥

आपणा जाणपणा नै आगलै, गिणुं न केहनै गान।
विनय वेयावच्च नहींय विवेकना,
अति मोटो अभिमान ॥सै०॥१३॥

मीठी मीठी बात कहुं मुखे, जीजी करे मिलि जाइ।
पाइ पसारू पैसी पेट में, माया सगी ज्युं माइ ॥सै०॥१४॥

म्हारो म्हारो करि धन मेलवुं, लोभ वसे लयलीन।
नरक तणां घर द्युं छुं नव नवा, इण में मेख न मीन॥सै०॥१५॥

मन तौ खिण पिण वस नहीं म्हारौ, झाझो वचन झखाल।
काय चपलता कहियैं केतली, जासी किम भव जाल॥सै०॥१६॥
अछता पण गुण वर्णुं आपणा, परनिन्दा परकाश।
अवर अदेखो आणुं अति घणौ, एहवौ मूल अभ्यास॥सै०॥१७॥
राजकथादिक विकथा राग सुं, वारु कहुंअ वणाय।
समता धरि न करी मन शुद्धसुं, सूत्र सिद्धान्त सझाय॥१८॥
काणौ आंधौ टूंटौ कूबड़ौ, देखि हंसूं निशदीश।
आखिर कर्म उदय ते आविस्यै, जाणे ते जगदीश ॥१६॥सै०॥

पनरै कर्मादान न परिहस्या, आदर्या पाप अठार ।
निस्तारौ बीजुं थासै नहीं, तुं हिव मुझ नै तार ॥२०॥सै०॥
जीवायोनि चौरासी लाख जे, दीधा तेहनै दुःख ।
वाद नै वास भेलो कहो क्युं बणै, मुझ नै दे हिव मुक्ख ॥२१॥सै०॥
जाण अजाण किया जिके, सहु भमतां संसार ।
देइ मन शुद्ध मिच्छामिदुक्कड़ं, आलोऊं वार वार ॥२२॥सै०॥
तारण तरण विरुद छैं ताहरौ, अशरण शरण आधार ।
आयौ आश धरी तुझ आगलै, समकित दे मुझ सार ॥२३॥सै०॥
समकित ताहरौ आयां साहिबां, परहा जायै पाप ।
राति अंधारो किम करि रहि सकै, उगैं सूरज आप ॥२४॥सै०॥
इम सकल सुखकर विमल गिरिवर आदि जिनवर आगलै ।
आलोवतां मनशुद्ध इण विधि सफल सहु आशा फलै ॥
शुभ गच्छ खरतर सुगुरु वाचक विजयहर्ष वखाणए ।
उवझाय कहै श्रीधर्मवर्द्धन धर्म ध्यान प्रमाणए ॥२५॥

शत्रुंजय तीर्थ स्तवन

तीर्थ सैत्रुंजे जी रहिवा मन रंजे,
(सेवकना) भव भय भंजै मल पातक मंजरे ॥१॥
सिद्धाचल सीमैं जी यात्रा करि जीमैं,
निश्चय इन नीमैजी भमय न भव भीमइ ॥२॥

नयणे करि निरखो जी, हियडै वलि हरखौ ।
सत्रुंजय सरीखो जी, पुहवि न कौ परखौ ॥ ३ ॥

मद मच्छर छोड़ी जी, जिन सुं मन जोडी ।
केइ सीधा कोडी जी, ठावां इण ठोड़ी ॥ ४ ॥

सूत्र सिद्धान्ते जी, भाख्यो भगवंते ।
अनादि अनंते जी, भेटउ तजि भ्रंते ॥ ५ ॥

भवसमुद्र तिराजै जी, परवत नी पाजै ।
जाण्यो चढीय जिहाजैं जी, सिवपुर ने साजै ॥६॥

सिद्धक्षेत्र समीपै जी, पाप न को छीपै ।
देहरा अति दीपै जी, जग चखने जीपै ॥ ७ ॥

जिण पहिलउ जांणी जी, प्रतिमा पहिचाणी ।
आसति बहु आणी जी, पूजौ भवि प्राणी ॥ ८ ॥

बावन देहरियां जी, परिदखणा परियां ।
वंदउ त्रिण वरियां जी, धर्म ध्यानइ धरियां ॥ ९ ॥

रायणि तलि पगला जी, आदि तणा अगला ।
संघ वांदै सगला जी, धरम तणा ढिगला ॥ १० ॥

शिवबारी दिस ही जी, वलि खरतरवसही ।
अदबुद ऊलसही जी, सबला बिंब सही ॥ ११ ॥

सूर कुंड सवाइ जी, देख्या सुखदाइ ।
चेलणा[1] तलाइ जी, उलकाभूल आई ॥ १२ ॥

---

१ चंदणा

सिद्धवड़हि सदाई जी, दीपै सुर दाई।
प्रगटी पुण्याई जी, जिण यात्रा पाई ॥ १३ ॥
सहिनाण संभार्या जी, श्री धर्मसी धार्या।
जिण आइ जुहार्या जी, तिण आतम तार्या ॥ १४ ॥

शत्रुंजय गीत

सरव पूरव सुकृत तीये किया सफल,
लाभ सहु लाभ में अधिक लीया।
सफल सहु तीरथां सिरे सैत्रुंज री,
यात्रा कीधी तियां धन्न जीया ॥ १ ॥
सुजस परकासता, मिले संघ सासता,
शास्त्रे सासता विरुद सुणिजे।
ऋषभ जिणराज पुंडरीक गिरि राजीयो,
भेटिया सार अवतार भणिजे ॥ २ ॥
कांकरैं कांकरैं कोडि कोडी किता,
साधु शुभ ध्यान इण थान सीधा।
साच सिद्धक्षेत्र शुद्ध चेत सुं सेवतां,
कीध दरसण नयन सफल कीधा ॥ ३ ॥

तासु दुरगति न ह्वै नरक त्रियंच री,
सुगति सुर नर लहै सुगति सारी।
विमल आतम तिको विमलगिरि निरखसी,
धनो धन श्री धर्मसील धारी ॥ ४ ॥

सिद्धाचल महिमा वर्णन

रतन में जैसे हीर नीरनि में गंगा नीर,
फूलनि की जाति में अमूल फूल केतकी।
सब ही उद्योत में उद्योत ज्युं प्रद्योतन को,
ज्योति में सुज्योति ज्युं मुदै है ज्योति नेतकी ॥५॥
सब ही सुशीख में सुधर्म सीख हेत की है,
तेजनि तूरिने टेक राखी जेसे रेतकी।
योजन पैंताल लक्ष सिद्धनिके खेत है पै,
सेत्रुंजे विशेष रेख राखी सिद्धखेत की ॥५॥

विमलगिरि स्तवन

राग—मलहार

विमलगिरि क्युं न भये हम मोर।
सिद्धवड रायण रूंख की शाखा, झूलत करत झकोर ।वि०।१।
आवत संघ रचावत अरचा, गावत धुनि घन घोर।
हम भी छत्र कला करि हरखत, कटते कर्म कठोर ।वि०।२।
मूरति देख सदा उल्हसै मन, जैसे चंद चकोर।
श्री रिषहेसर सुं श्रीधर्मसी, करत अरज कर जोर। वि० । ३ ।

धुलेवा ऋषभदेव छन्द

दोहा

सत्य गुरू कहि सुगुर रा, प्रणमु मन शुद्ध पाय।
हुता मूढ ते पिण हुआ, पण्डित जासु पसाय ॥ १ ॥
सेवा लहिजै सुगुर री, पुण्य उदै परतख।
ज्योति अधिक दीधी जिणैं, चावी तीजी चख ॥ २ ॥
जिकौ न पूरौ जांणतौ, ठठौ मींडौ ठोठ।
वाचै अविरल वाणी सुं, पुस्तक भरिया पोठ ॥ ३ ॥
दीपक जिण हाथै दियै, गुरे बतायौ ज्ञान।
धरम करम मांहे धुरैं, धरिजइ तिणरौ ध्यान ॥ ४ ॥
प्रथम नमी गुर जिण प्रथम, गांउ तसु गुण ग्राम।
कविजन कंठ श्रृंगार कुं, दीपै मोतीदाम ॥ ५ ॥

मोतीदाम छन्द

दिपें गुण निम्मल मुत्तियदाम,
सेवुँ मन शुद्ध तिको हिज स्वाम।
सुरासुर सर्व करै जसु सेव,
दियै सुख वंछित ऋषभदेव ॥ ६ ॥
केइ जगि देवल देवां कोडि,
हुवै नहीं कोइ इयें री होडि।

नमैं नर नारी सको नितमेव,
दियैं सुख वंछित ऋषभदेव ॥ ७ ॥
पूरैं प्रभु आस सदा परतख,
वदां सुरकुंभ किना सुरवृक्ष ।
वहु जिण दान दिपाया वेव,
दियै सुख वंछित ऋषभदेव ॥ ८ ॥
छती छती देखि पवन छतीस,
जपै सहु ध्यावै जेम जतीस ।
भजैं इक चित्त लह्यो जिण भेव,
दियैं सुख वंछित ऋषभदेव ॥ ६ ॥
खलक्कां मालम देश खडग्ग,
जपै ए तीरथ तेम अडिग ।
धुनो धन धन्नहि गाम धुलेव,
दियैं सुख वंछित ऋषभदेव ॥ १० ॥
उदैपुर हुती कोस अढार, ए ओ वाट विषम अपार ;
सल.........गात्र सजैव, दियै सुख वंछित ऋषभदेव ॥ ११ ॥
पुलै पगवट्ट उजाड पहाड़, दहुं दिशि केइ कराड़ दराड़,
झराड़ झांगी रा झाड झुकेव, दियै सुख वंछित ऋषभदेव ॥१२॥
पुढांणा खालां नालां खाड, चिहुं दिसि ताकै चोर चराड़ ।
निकेवल जात्र्यां नाम न लेव, दियै सुख वंछित ऋषभदेव ॥१३॥
किता केइ मारग मांहि कलेस, आवै केइ यात्री लोक अशेष ।
सरै छै काम तियां सतमेव, दीयै सुख वंछित ऋषभदेव ॥१४॥

दुर हु देवल शोभा देख, वदै वाह वाह प्रकाश विशेष ।
रह्यो रवि भूमि विमान रचेव, दीयैं सुख वंछित ऋषभदेव १५
तिलक्का तोरण थोरण तंत, भला चित्त चोरण कोरण मंत ।
वहुं हुं बखाण किताक अवेव, दीयैं सुख वंछित ऋषभदेव ।१६।
जिणेसर विंव झिगामिग ज्योति, अहोरति आठुं जाम उदोत ।
विजोडी देहरी बावन वेव, दीयैं सुख वंछित ऋषभदेव ॥१७॥
घसीजै केसर चंदन घोल, रचीजै पूज सदा रंग रोल ।
अवल्ले फूले धूप उखेव, दीयैं सुख वंछित ऋषभदेव ॥१८॥
जाणौं तिण वेला जोवों जाय, भला केइ जात्री आइ भराय ।
हजारै गानै लाभे हेव, दीयैं सुख वंछित ऋषभदेव ॥ १९
रहै नहीं नामै कोई रोग, वली सहु जायै सोग वियोग ।
सदा हुवै भोग संयोग सबेव, दीयैं सुख वंछित ऋषभदेव ।२०।
सही सहु तीरथ मैं सिरदार, इणैं इहरत्त परत्त उधार ।
टली अन्तराय भली सहु टेव, दीयैं सुख वंछित ऋषभदेव ।२१।

कलश

अलग टली अंतराय, प्रगट सफली पुन्याइ ।
गणधर गुरू गच्छराज, सूरि जिणचन्द सवाइ ॥
गच्छ खरत्तर गहगाट संवत सतरै से सट्ठिम, (१७६०)
वसंत ऋते वैसाख, अवल उजवाली अट्ठम ॥
जातरा कीध सखरी जुगति, वडा साध साथैं वडिम ।
सुख 'विजयहरष' जिण सानिधै, आखै श्रीधर्मसीह इम ॥ २२ ॥

:—❀—:

श्री शांति जिन स्तवन

सेवो भाई सेवो भाई शांति जिन सेव रे।
दूजो नहीं कोइ ऐसो देव रे ॥ १ ॥
क्रोध विरोध भर्या सुर केवि रे।
निकलंक निरदोष यहु नित मेव रे ॥ २ ॥
हाथ रतन आयो छै हेव रे।
काच तजो पाच गहौ परखेव रे ॥ ३ ॥
केशर चंदन पूज करेव रे।
लाहो नरभव इह विध लेव रे ॥ ४॥
कहै ध्रमसी जोडि कर बेव रे।
तुझ सेवा मुझ याहीज टेव रे ॥ ५ ॥

चन्द्रपुरी शांति जिन स्तवन

जग नायक जिनवर पुहवी मांहे प्रत्यक्ष।
सोलम संतीसर सुखदायक कल्पवृक्ष ॥
जसु यात्र करेवा लोक मिले तिहां लक्ष।
दरसण देखत ही आणंद पावै अक्ष ॥१॥
दों दों दों दप मप द्राग्डिदिक दमके मृदंग।
झण रण रण झें झैं झाझरि झमकित झङ्ग ॥

ठम ठम पाय ठमकति घमकति घूघरि संग ।
ताकिटि ताकिट थेंइ थेइ नृत्य करत मन रंग ॥२॥
केसरि करि पूजत छीजत अशुभ जे कर्म ।
भावन भावंता भांजै भव नौ भर्म ॥
नित नाम जपै जे निजमन करि अति नर्म ।
हरखै ते पहुंचे मुगति रमणि ने हर्म ॥३॥
छाक्यो रहे छहुं रितु मस्त महा मतवाल ।
हाथी झरणा जिम झरतौ मद असराल ॥
परवत सम सबलौ घूठ पड्यो सुन्डाल ।
ततखिण जिण नामैं अंस करै नहीं आल ॥४॥
ढुंकारव करतौ, वाघ महा विकराल ।
नहरां अति तीक्ष्ण, जिम करवत दंताल ॥
पुछा छोट करतौ फदकल्यै तीजी फाल ।
प्रभु नाम प्रसादै, सींह भगै ज्युं स्याल ॥५॥
दावानल बलतो झलहल नीकले झाल ।
बहु वृक्ष सघन वन बलै पसु पंखी बाल ॥
किण हीक कारण नर आयौ अग्नि विचाल ।
जिण नांम जलैं अगि ओल्हायैं तत्काल ॥६॥
फुं फुं फण करतौ धरतौ कोप कराल ।
रहै आंख्या राती काजल सम महाकाल ॥
एहवौ उरंडतौ देखी दो जीहाल ।
तुझ नांमै साँप ते जांणे फूल री माल ॥७॥

सबलै संग्रामै भिड़ंता भूप भूपाल।
अति राता ताता वहै गोला हथनाल ॥
खडकै तलवारां खलकै रुधिरां खाल।
तिहां पिण जिण नामै न हुवै बांको बाल ॥८॥

दरीयो जल भरीयो ऊंडो जेह अपार।
उछलतां तरंगा सुणि जलधर गरजार ॥
वाहण विचि लिवि पिवि बूडण नै हुवो त्यार।
ते पिण जिण नामै पहुचै पेले वार ॥ ९ ॥

गड गुंवड फोडी हीया होडी तेह।
खैन खाजनै खासी हरस सहित जन जेह ॥
सोलह कोढादिक उपज्या रोग अछेह।
प्रभु पद फरसत ही दिनकर दुति हुइ देह ॥१०॥

जन सांकल जडीयौ पडीयौ बन्दीखाण।
भय आठै भांजै न रहे पलक प्रमाण ॥
सिर संती जिणेसर सेवत ही सुख खांण।
इणभव लहै लीला परभव पद निरवाण ॥११॥

कलश

संवत्त सतरैं बरस वीसैं मास मिगसर जाण ए।
चन्द्रापुरी थी संघ चाल्यौ, चढी जात्र प्रमाण ए ॥
गणि विजयहर्ष पदारविंदे, भ्रमर ओपम आण ए।।
कहै 'धर्मवर्द्धन' धर्मवद्धन, संघ कुशल कल्याण ए ॥१२॥

—:❀:—

॥ नेमि राजिमती बारहमासा ॥

दिल शुद्ध प्रणमूं नेमि जिनेसर परमदयाल,
रोक्या जीव तें मूक्या तोरण थी रथ वाल ।
राजिमति सती नेह वशैं किय विविध विलाप,
तौ पिण तसु तणु नाइ सक्यो विरहानल ताप ॥१॥

श्रावण मास में विरहणि जामनी जाम न जात,
सजि आडंवर जंवर दामिणी मिले वरसात ।
मुझ वर गयो हरिणाखी नाखी दीध निरास,
विल विलैं राजुल आंखीय भरि भरि नाखी निरास ॥२॥

भादव में गयो यादव मुझ हिया दव लाय ।
पांवस जल पड़ताल पडैं पिण ते न बुझाय ।
मांडै मोर झिंगोर करैं पपियो पीउ पीउ ।
पीउ विरहैं थइ पीड़ ते जाणे मांहरौ जीव ॥३॥

आसू में सासूनौ अंगज ते गया अंग जलाय ।
चंद नी चांदणी देखत चौ गुणी पीड़ज थाय ।
निरमल सरवर भरीया नीझरणे झरैं नीर ।
नयणां नीर तिये पिण मांड्यौ जिण सुं सीर ॥४॥

माती खेती पाती नीपनी काती मास ।
कातीय विरहणि छाती में काती वहैं नहीं जास ।
दीप दीवालीय वलिय सुहालिय नैं पकवान ।
खलक रचें पिण मुझ नैं न रूचै खान नैं पान ॥५॥

मगसिर मासि गांमातरैं मगसिर हुआ लोग ।
हुं पिण छोडी मग सिरनी हिवैं लेस्यु जोग ।
धरैं सहु निज मंदिर मैं खल खेत्र ना धान ।
हुं पिण धरिस निश्चल मन में नेमि ध्यान ॥६॥
पोस में ओस पड़े निस रूदन करै वनराय ।
दोस विना पिउ रोस करैं तै सोस ज थाय ।
धूंहरि पडय अथाह ते विरहानल नो धूम ।
वैगा जावौ कोइ पिघलावौ प्रिय मन मूंम ॥७॥
माह मैं माहट मांड्यो मेह ते आहट रूंस ।
तौ पिण माहरैं नाह न पूरी माहरी हुंस ।
जो कोई आइ बधाइ द्यै आयौ पति जदुनाथ ।
नाथ धरूं इक नाक नी आपुं सगली आथि ॥८॥
फागुन फरहरै वात प्रभात नौ सीत अपार ।
नाह सुं फाग रमैं बहु राग सुहागणि नारि ।
चंग अनै मुख चंग बजावै उडावै गुलाल ।
लालन जे तजी ललना तिण कौ कवण हवाल ॥६॥
जे तरू झाड़िया मोर्या ते तरु चेतर मास ।
वास सुवास प्रकासीय मधु करै रे विलास ।
बोले रे कागा आगा जागा बेसीरे ऊंच ।
पावुं पीउ तौ तुझ भरावुं चुर मैं चूंच ॥१०॥
मौरीय दाख वैंसाखै पसरीय वेल प्रलंब ।
ऊंचिय साख विलंबिय, कोयल कुहकै अंब ।
भौगवैं रवि संक्रात वसंत में मीन नैं मेख ।
तौ पिण मुझ पीउ तजि गयौ इण में मीन न मेख ॥११॥
जल करै सीतल हीयतल जेठ मै ए ठहराय ।

जो ठिक जोतषी ते कहौ कदि मिलै जेठ कौ भाय।
यादव कुल ना सेठ नैं जेठ कहौ समझाय।
नांणी द्रेठ नै हेठते मोमैं कवण अन्याय ॥१२॥
वलीय कौलाहणि काढ़ि आसाढ़ में वलियौ मेह।
नेमजी नाह विसार्यो (न सार्यो) नव भव नेह।
मुझ नै विलखत छोड़ी वहि गया बारै मास।
पिण हु न तजु एह नैं वसिस्यां एकण वास ॥१३॥
धन धन राजल साज ले दीक्षा नौ तजि धाम।
केवल लहिनै पहिली हिज पहुंती शिव ठाम।
जोगीसर नेमीसर सिव सुख विलसैं सार।
श्री धर्मसींह कहै ध्यान धर्यां सुख है श्रीकार ॥१४॥

॥ नेमि राजिमती बारहमासा ॥

सखी री ऋतु आइ सावण की, घुररंत घटा वहु वन की।
बानी सुनि सुनि पपीहनि की,
निशि जायैं क्यु विरहनि की हो लाल ॥१॥
राजुल वालंभ जपती, इकतारी नेमि सु करती।
धन सील रतन नै धरती, तिम विरह करि तनु तपती हो लाल।
सखी री भादु मैं भर बरसाला, खलकै परनाल नै खाला।
बिजुरी चमकत विकराला,
जादु विनु मोहि जंजाला हो लाल। रा० २।
सखी री आसू सब आसा धरीया, निरमल जल सु सर भरीयां।
रात्यौं शशि किरण पसरीया,
पिउ विनु क्यों जात है घरीयां हो लाल ।३।

सखी री करसणीयां फलियौ काती, निपजी सब खेती पाती।
हिल मिलि सब करत है बाती,
पीउ विणु मोहि फाटत छाती हो लाल ।४।
सखी री अब मिगसर महिनौ आयौ, सब ही कौ नेह सवायौ।
भोगीजन के मन भायौ,
गयौ छोरि शिवादे को जायौ हो लाल ॥ रा० ५ ॥
सखी री आयौ महिनो अब पोसो, रंगै रमै सहु तजि रोसो।
दीनौ मुझ जादव दोषो,
सबलौ तिण कारणि सोसो हो लाल ॥ रा० ६ ॥
सखी री अति शीत परतु है माहें, सब सोवत मांहोमांहे।
देही मुझ विरह की दाहैं,
न मिटै विनु आयै नाहे हो लाल ।रा०७।
सखी री फागुण पकवान नैं पोली, भरि लाल गुलाल की झोली।
खेले नर नारी की टोली,
पिउ विन में न रमें होली हो लाल ।रा०८।
सखी री सब मिलि नर नारी संतो, चैतै धरि हरष हसंतौ।
खेलैं अति ही उलसंतौ,
वालंभ विनु कैसो वसंतौ हो लाल । रा०६ ।
सखी री कोइल बोले वैशाखैं, भरता करता बै साखैं।
पहिलैं कीनो आसाखैं,
दूजैं आगै अब साखैं हो लाल । रा० १०।
सखी री जल शीतल पीजै जेठो, पीउ नायौ अजहु बेठौ।
जाण्यौ कुण करिहै वेठौ,
नाणी मुझ नजरां हेठौ हो लाल ।रा०११।

सखी री आयो अब मास असाढ़ो,

कालाहणि ऊंची काढ़ो।

वालंम हित बन्धन वाढ़ो,

वैरागै मन कियौ गाढ़ो हो लाल ।रा०१२।

सखी री मिलि अरज करत है आली,

कहा वात करत है काली।

नवलौ कोइ कुमर निहाली,

तुम परणावां ततकाली हो लाल । रा० १३ ।

सखी री अब राजुल बोली एमौ,

इण भव मुझ प्रीतम नेमो।

दूजौ परणण अव नियमौ,

न तजुं नवभव कौ प्रेमौ हो लाल ॥१४॥

सखी री योगी नहीं नेम सौ कोई,

राजल सम नारि न होइ।

संसारी दुख सव खोई,

सिवपुरी सुख विलसैं दोइ हो लाल ॥रा० १५॥

सखी री मन धारे वारेमासा,

आंणौ वैराग उलासा।

गुरु विजयहरष जस वासा,

वधतै धर्मशील विलासा हो लाल ॥१६॥

—❀—

नेमि राजिमती स्तवन

राजुल कहै सजनी सुनो रे लाल
रजनी केम विहाय हे सहेली।
अरज करी आणौ इहां रे लाल,
साहिबियौ समझाय हे सहेली ॥१॥
मोहन नेमि मिलाय दे रे लाल,
नेह नवौ न खमाय हे सहेली।
दिन पिण जातां दोहिलौ रे लाल,
जमवारो किम जाय हे सहेली ॥ २ मोहन ॥
इक खिण खिण प्रीतम पखे रे लाल,
बरस समान विहाय हे सहेली।
पाणी के विरहैं पड्यां रे लाल,
मछली जेम मुरझाय हे सहेली ॥ ३ मो० ॥
चकवी निस पिउ सुं चहै रे लाल,
त्युं मुझ चित्त तलफाय हे सहेली।
कोडि बिरख तज कोइली रे लाल,
आंबा डाल उम्हाय हे सहेली ॥ ४ मो० ॥
अधिकौ विरहौ अंग में रे लाल,
ते किम दूरे थाय हे सहेली।
जमवारौ जलमें वसै रे लाल,
चकमवि अगन उल्हाय हे सहेली ॥ ५ मो० ॥
कंत विणा कामिनी तणा रे लाल,
भूषण दुषण प्राय हे सहेली।

फल फूलें ढाली थकी रे लाल,
छाव छदाम विकाय हे सहेली ॥ ६ मो० ॥
ऊंची अधिक चढ़ाय नै रे लाल,
नांखी धरि असकाय हे सहेली।
प्रीतम क्युं मुझ परिहरी रे लाल,
अवगुण एक बताय हे सहेली ॥७ मो०॥
मुगति कामिणी कामण कीया रे लाल,
तौ मुझ नैं तजी न्याय हे सहेली।
सिव नारी देखण सही रे लाल,
आप गइ उम्हाय हे सहेली ॥ ८ मो० ॥
मुगति मांहे बेहु मिल्या रे लाल,
विलसैं सुख वरदाय हे सहेली।
प्रणमें पंडित धरमसी रे लाल,
नमतां नव निधि थाय हे सहेली ॥ ९ मो० ॥

—❀—

सिंधी भाषामय पार्श्वनाथ स्तवन

ढाल—अमल कमल रहनी।

अज्जु सफल अवतार असाड़ा, दिट्ठा पारस देव।
बुट्ठा मेह, अमियदा, तुट्ठा साहिब सत मेव ॥ १ ॥
सयांने सांइ असाड़ा वे, अरि हां पियारे पास जिणंदा वे ।आं०।
अरजू हूंदा तैडैं अग्गै, अखदा हां इक गल्ल।
सुख दैंदा हैं सभनि कुं चोखीय तुसाड़ी चल्ल। स० २।

नंढरे नींगर दे ज्यु अम्मां, त्युं मैंडै तुं साम,

जौलुं अन्दर जेद हैं, नहीं भुल्लां तैंडा नाम । स० ३ ।

सच्ची एक तुसाडी सेवा, दूजी गल्ल न दिल्ल,

आस पूरौ हुण दास दी, करंदा हो काहे ढिल्ल ।स०४।

देव अवर दी सेव करंदै, दिट्ठा मैं दोजग्ग ।

हुण उण उज्जड ना भमू, मन मान्या तैंड़ा मग्ग ।स० ५।

रज्या होइ सु कित्थुं जाणैं, भुक्खादा दिल दुक्ख ।

नाहीं देंदा न्याय तुं, सिवपुरदा मैंनु सुक्ख ।स० ६।

नव निधि सिद्धि तुसाडैं नामैं, दौलति हंदा दीह,

विजयहरष सुख संपजै, धरे ध्यान सदा ध्रमसींह । स० ७ ।

—❀—

पार्श्वनाथ स्तवन

नैणां धन लेखुं देखूं, देखुं मुख अति नीकौ,

जीहा धन जांणु गावुं, गावुं जस जिनजी कौ।

धन धन मुझ सांमी, तुं त्रिभुवन सिरि टीकौ ॥ १ ॥

चित सूधैं करि हुं नित सुणिवा, चाहूं तुझ उपदेस अमी कौ ॥२॥

देवल देवल देव घणा ही दीसै, तुझ सम जस न कही कौ ॥३॥

पुन्यें करि प्रभु साहिब पायो सोई, पायौ मैं राज पृथी कौ ॥४॥

कीजै मया मुझ सेवक कीजै साचौ, कीजौ मत अवर हथीकौ।५।

रूप अनूपम तेज विराजै तेसौ, सूरिज कौ न ससी कौ ॥६॥

पास जिणेसर सहु मनवंछित पूरैं, साहिब श्री 'ध्रमसी' कौ ॥७॥

—०—

लोद्रवा पार्श्व जिन स्तवन ।

महिमा मोटी महियलैं, प्रगट चिंतामणी पासो रे ।
सफलौ नांम करै सदा, आपै वंछित आसौ रे ॥ १ ॥
अधिक सफल दिन आज नैं, भेट्यौ श्री भगवंतौ रे ।
कहीजैं जीभै केतला, एहना सुजस अनंतो रे ॥ २ ॥
मोटौ जेसलमेर ए, मेर ज्यूं महीयलि सोहे रे ।
तीरथ लौद्रपुरो तिहां, शुभ नंदनवन सोहे रे ॥ ३ ॥
दिन दिन दीपैं देहरा, जिहां श्री पास जिणंदो रे ।
साथै ले सुधरम सभा, आयौ जाणे इन्दो रे ॥ ४ ॥
सुन्दर त्रिगढ़ा सम विचैं, वृक्ष अशोक विराजे रे ।
सागी जाणे सरग नौ, कलपवृक्ष हित काजे रे ॥ ५ ॥
सहसफणा विहुं साम नौ, सौहै रूप सवायो रे ।
थिर जस तैं कीधो थिरू, वित दस क्षेत्रे वायो रे ॥ ६ ॥
सतरसे गुणत्रीस (१७२६) में, मिगसर मास मंझारो रे ।
यात्रा करी जिनवर तनी, धर्म शील चित्त धारो रे ॥ ७ ॥

—:※:—

लोद्रवा पार्श्व स्तवन ।

लुलि लुलि वंदो हो तीरथ लोद्रवो, अधिकी आसति आणि ।
सजन जन जिनवर नी पामीजैं जातरा, पुण्य तणै परमाणि ।१।
शंकादिक दूपण छोड़ो सहु, समकित धारो रे सार । स० ।
अरचौ भाव धरी अरिहंत नैं, पामौ जिम भवपार ॥ स० । २॥

नयणे पांच अनुत्तर निरखेवा हुवै मन मांहे जो हुंस । स० ।
तौ एहिज तीरथ भेटो तुम्हे रचना तिण हिज रूंस ॥ स० । ३ ।
धन जेसलगढ जिहां धर्मात्मा संघनायक थिरूसाह । स० ।
जिण प्रासाद कराया जिनतणा, आणी अधिक उमाह ॥ ४ ॥
सुन्दर सहसफणे करि सांमली, दीपै मूरति दोइ । स० ।
मेघ घटा नै देखी मोर ज्युं, हरखित मुझ मन होइ ॥स० । ५ ॥
पास सदा चिंतामणि नी परै, आपै वंछित आस ॥ स० ॥
नाम गुणे करी साचौ नीपनौ, प्रगट चिंतामणी पास ।स० । ६ ।
सतरैसै त्रीसें मिगसर सुदै, बारस बहु संघ साथ ।
वाचक विजयहरष हरषे करी, प्रणम्यां पारसनाथ । स० । ७ ॥

—०—

लोद्रवा पार्श्व स्तवन

राग—सोरठ

पूजौ पास जी प्रभु परता पूरै, चितनी चिंता चूरै ।
सहसफणा शोभंत सनूरैं, दरसण थी दुख दूरैं ॥ १ ॥
सुणतां काने कीरति सारी, परसिद्ध लोद्रपुरा री ।
जिन मूरति हिव नयण जुहारी, साचा गुण सुखकारी ॥ २ ॥
नीलकमल सम मूरति निरखी, सहसफणा बे सरिखी ।
पास चिंतामणि साचा परखी, हिव सेवो मन हरखी ॥ ३ ॥
सुन्दर तिलको तोरण सोहे, मंडप पिण मन मोहे ।
ऊंची धज आकाश आरोहै, कहौ मुझ समवड को है ॥ ४ ॥

च्यार प्रासाद चिहुं दिशि राजै, विच में एक विराजै ।
कोरणी झीणी केम कहाजे, पेख्या मन पतियाजै ॥ ५ ॥

रचना पांच अणुत्तर रयणे, गमविण ऊंची गयणे ।
विधि सांभलतां जे गुरु वयणे, निरखी तेहिज नयणे ॥ ६ ॥

अष्टापद जे सुणतां आगी, सो विधि दीठी सागी ।
त्रिगडो देखि मिथ्यामति त्यागी, जिन धर्म महिमा जागी ।७।

जिन प्रतिमा जिन हीज सरूपी, पीतें जिनज अरूपी ।
सेवे ते शुद्ध समकित रूपी, अज्ञानी ए उथूपी ॥ ८ ॥
अधिकै भावै यात्री आवै, गुण जिनवर ना गावै ।
रागे वहु विधि पूज रचावै, प्रसु सानिध सुख पावै ॥ ९ ॥

गावंते गीत मन गमती, राग धरम ने रमती ।
नर नारी नी टोली नमती, भावधरी घै भमती ॥ १० ॥

प्रशोभा जेसलमेर सदाइ, श्री खरतर सुखदाई ।
करणी जिर्णोद्धार कराइ, संघपति थिरू सवाई ॥ ११ ॥
कलशः—संवत गुण युग तुरग धरणी चैत्र वदि छठि दीस ए ।
श्रीसंघ श्री जिनचन्द सानिध, सफल यात्रा जगीस ए ॥
सु पास नामै आस पामैं, जपे जे जस जीह ए ।
गुरू विजयहरष सुसीस पाठक, कहै श्री धर्मसीह ए ॥ १२ ॥

—❀—

लोद्रवापार्श्व स्तवन

विलसे ऋद्धि समृद्धि मिली—एहनी

धन धन सहु तीरथ मांहि धुरै, परसिद्ध घणी श्री लोद्रपुरै ।
भले भावे आवे यात्र घणा, सुखदायक सेवो सहसफणा ॥ १ ॥
केवल जिम दूर थकी दीसैं, हीयडौ जिन देखण नैं हींसै ।
वाखाणै सहु विश्वा विसैं, यात्रा दीधी ए जगदीसैं ॥ २ ॥
त्रेवीसम श्री जिनराज तणी, फलदायक प्रतिमा सहसफणी ।
घन स्याम घटा जिम शोभ घणी, वाह वाह अंगी छबि अंग बणी ३
चउ जिणहर चउगइ दुख चूरैं, पंचम पंचम गति सुख पूरैं ।
अष्टापद त्रिगढें शोभ इसी, कुण इण समओपम कहुंअ किसी ॥४॥
केसरि चंदन घनसार करी, धोतीय अछोती अंग धरी ।
पूज्यां मिथ्यामति जाय परी, शुभ पामे समकित रतन सिरी ।५।
प्रणम्यां सहु पीड़ा दुरि पुलै, छल छिद्र उपद्रव को न छलैं ।
दुख दोहग दालिद दूर दलैं, मन वंछित लीला आइ मिलै ॥६॥
जेसलगढ गुरू गच्छपति जाणि, तिहां आया श्री संघ मुलताणी ।
संघ तिण सु श्री जिनचन्दसूरैं, प्रणम्या प्रभु पास नवल नूरै ।७।
सतरैं चम्मालै चैत्र सुदें, महिमा मोटी तिथि तीज मुदै ।
खरतर गुरु गच्छ सोभाग खरै, पाठक धर्मसी कहै एण परैं ।८॥

—:०:—

गौड़ी पार्श्व स्तवन

राग—मलहार

मूरति मन नी मोहनी सखि सुन्दर अति सुखदाय।
नयन चपल हुं निरखिवा, सखी भ्रमर ज्युं कमल लोभाय रे ॥
दीठां हिज आवे दाय रे, कीधी तकसीर न काय रे।
जोतां सगला दुख जाय रे, थिर मन ना वंछित थाय रे ॥ १ ॥
मुनें प्यारो लागे पास जी ॥
कुण बीजा नी हर करै सखी, प्रभु ए समरथ पामि।
हाथ रतन आयौ हिवै सखी, काच तणौ स्यो कांम रे।
नित समरूं एहनो नांम रे, सहु वाते समरथ स्वाम रे।
हिव पुगी हिया नी हांस रे, औहिज मुझ आतमरामरे ।२। मु०
स्वामि कल्पतरू सारिखौ सखी, बीजा बावल बोर।
मनवंछित दायक मिल्यो सखी, न करु अवर निहोर रे ॥
दिल बांध्यो इण विण डोर रे, मेहां नै चाहे मोर रे।
चंदा नै जेम चकोर रे, जिन सुं मन लागो जोर रे ॥३॥ मुनै०
कमल कमल चढती कला सखी, सोहे रूप सुरंग।
एहनै रूपनी ओपमा सखी, आवि न सकै अंग रे।
उलसै मिलवा नै अंग रे, सही छोडण न करू संग रे।
एहवौं मन में उच्छरंग रे, अविहड मुझ प्रीति अभंग रे ।४।मुनै०
हुंस घणी मिलवा हुंती सखी मन मांहि नितमेव रे।
ते साहिब मिलीया तरै सखी बहु हित पग गहुं वेव रे ॥

हरख्यो मुझ हिवड़ौ हेवए, साहिब नी न तजु सेव रे।
दिल सुध मुझ एहिज देवए, टलिस्यु नहीं ए लही टेवरे ।५। मुनै०
इण मन मोहन ऊपरै सखि हुंवारी वार हजार।
देस विदेशे दिल्ल में सखी सांभरिस्यै सौ वार रे॥
इक इण हिज सु इकतार रे, हीयो नो अंतर हार रे।
कदे ही नहिं लोपिस कार रे, बात सी कहियै वार वार रे ।६ मु०
गाजै नित गौड़ी धणी सखि अकल सरूप अबीह।
भवना भय गय भांजिवा सखी सादूलो ए सींह रे॥
लोपै कुण एहनी लीह रे, जपतां जस सफली जीह रे।
च्यै विजयहरष निसदीह रे, धरि हेत कहै धर्मसीह रे । ७ मुनै०।

पार्श्व जिन स्तवन

ढाल—धणरा ढोला री

त्रिभुवन माहे ताहरो हो,
सुजस कहै सहु कोइ। जिन रा राजा।
देव न कोइ दूसर हो,
होड़ जे ताहरी होइ। जिन रा राजा।
सुनिजर कीजे हो सुजान, सेवक कीजै
दीजै दिन दिन वंछित दान मन रा मान्या ॥ १ ॥ आंकणी
देवां मांहे दीपतौ हो, तु परता शुद्ध पास।
सोहे तारां श्रेणि में हो, एकज चन्द आकाश ॥ २ ॥ जि० सु०॥

पाम्यौ में तुमने प्रभु हो, सेवु अवर न साम।
सूरिज ऊगै साहिबा हो, केहो दीपक काम ॥ ३ ॥ जि० सु० ॥
सैवक नै तु सासता हो, द्यौ छैं वंछित देव
तौ सेवे छै ते भणी हो' नर नारी नितमेव ॥ ४ ॥ जि० सु० ॥
चूकौ हुं तुझ चाकरी हो, इतरा दिवस अयाण।
गुनहौ तेह रखे गिणो हो, मोटा होइ महिराण ॥ ५ ॥ जि० सु० ॥
मो उपरि पिण करि मया हो, आपौ सुक्ख अछेह।
सगले रूंखे सारिखा हो, महियल वरसै मेह ॥ ६ ॥ जि० सु०।
त्रिकरण शुद्ध इण ताहरौ हो, एकज छै आधार।
करज्यो तुम धर्मसी कहै हो, अवसर नौ उपगार ॥ ७ ॥ जि०सु०

श्री फलोधी पार्श्व स्तवन

सुगुण सुज्ञानी स्वामि नै जी, स्यु कहियइ समझाइ।
पण प्रभु सु विनती पखैं जी, नेट ए काम न थाइ ॥ १ ॥
परम प्रभु सुण फलवधिपुर स्वामि।
साहिब हीयड़ै मुझ सही जी, नित ही तुम्हारौ नाम ॥ २ ॥
आवंता सहीया अम्हे जी, भर तावड़ त्रिप भूख।
तुम्ह दरसण दीठो तरै जी, दूर गया सहु दुख ॥ ३ ॥
मन मोहन तुम्ह सु मिल्यां जी, उपजै सुख मुझ अंग।
आवै मन माहे इसी जी, सही न छोड़ु संग ॥ ४ ॥
परदेसे पिण प्रीतड़ी जी, अधिकी दिन दिन एह।
मन तुम पासे मोहियो जी, दूर रहैं छै देह ॥ ५ ।

अधिक उपाय करूं अछुं जी, भेटण श्री भगवंत ।
जोग जुडै नहीं जुगति सुं जी, खरीय रहै मन खंत ॥ ६ ॥
अमनै जाणी आपणौ जी, मेलौ दे महाराज ।
तुम मिलियां विण अमतणा जी, किम करि फलिस्यै काज ॥७॥
पाय तुम्हारा परसीयै जी, दोळति ह्वै तिण दीह ।
विजयहरष वंछित फलै जी, ध्यान धरे धर्मसीह ॥ ८ ॥

—:०:—

गौडी पार्श्व स्तवन

आज भलै दिन उगौ जी, अधिकै धरम उदै ।
प्रगट मनोरथ पूगो जी अधिकै धरम उदै ।
पास जी नो दरसण पायो जी अधिकै धरम उदै ॥ १ ॥
एहवै पांचम आरै जी अधिकै० त्रेवीसम जिन तारै जी । अ० ।
देव इसौ नहीं दूजो जी अधिकै० पास जिनेसर पूजो जी ॥ २ ॥
गुण गौडी ना गावोजी अ०, नरक निगौदैं नावो जी अ० ।
भावना मन शुद्ध भावौ जी अ०, पंचम गति सुख
पावो जी अ० ॥ ३ ॥
छाक मिथ्यामति छोड़ो जी अ०, जिनवर सुं हित जोडो जी अ० ।
जिन प्रतिमा जिन जेही जी अ०, कहौ इहां शंका
केही जी अ० ॥४॥
सुन्दर सूरति सौहै जी अ०, मूरति जन मन मोहै जी अ० ।
सुख विजयहरष सवाया जी अ०, गुण धर्मसीं मुनि
गायाजी अ० ॥५॥

—:※:—

श्रीपार्श्व स्तवन

राग—खंभायती

आज नै अम्हारै मन आसा फलीयां ।
नयणे पार्श्व जिनेश्वर निरख्या, हरख्या मन हुइ रंग रलियां ॥१॥
त्रेवीसम जिन त्रिभुवन तारण, मनमोहन साहिब मिलियां ।
मो मन जिनगुण लागे मीठा, जिमै दूधै साकर मिलिया ॥ २ ॥
विहसत मूरति नयण विराजै, कोमल कमल तणी कलियां ।
दरसण दीठे पाइ दौलति, दुख दोहग दूरै दलीयां ॥ ३ ॥
समकित दायक लाधो साहिब,मुह मांग्या पासा ढलीयां ।
धरमसींह कहै धरमी जन नै, सुख थायै जस सांभलीयां ॥ ४ ॥

—:o:—

गौडी पार्श्व स्तवन

ढाल—सुंबरदेरा गीत री ।

आणी आणी अधिक उमाह भवियण भावौ हो
भावन श्री भगवंतनी रे ।
लीजैं नर भव लाह, कीरति कहीजै हो
एक मनां अरिहंत नी रे ॥ १ ॥
मन थी दुविधा मेट अड़िग आणीजै हो,
अधिकी मन में आसता रे ।
नामै एहने नेट पातक पुलायै हो,
थायइ शिव सुख शासता रे ॥२॥

राचौ समकित रंग साचौ नें सदाइ हो

सेवो जिन त्रेवीसमौ रे।

माचौ मत मद संग, काचौ नै कहीजै हो

काया घट ए कारमो रे॥ ३॥

किणहिक पुण्य प्रकार प्रगट पाम्यौ हो,

नरभव पंचेन्द्री पणो रे।

आरिज कुल अवतार तिम वली लाधो हो,

शासन तीर्थंकर तणो रे॥ ४॥

इण भव जिणवर एक अवर न सेवु हो

आसत मन मांहे इसी रे।

विजय हरष सुविवेक, धरि बहुभावै हो

गावैं गुण इस धरमसी रे॥ ५॥

—:❀:—

श्री गौडी पार्श्व गीत

गीत सपखरौ जाति

जगि जागें पास गौडी लोक दोडी दोडी आवै जात।

कोडी लाख देखो देव जोडी नावै कोइ।

सारिखा घणा ही नाम तिणें काम सरे न कौ।

जैन मोटी आरिखा सौं पारिखाले कोइ॥ १॥

विकट्टे प्रगट्टे थट्टे निपट्टे उबट्टे वट्टे संकट्टे

निकट्टे दुखां चूरणैं समाथ।

आपे आप हाथो हाथ ईहनां अथग्ग आथ,
नामथी करैं निहाल अनाथां रो नाथ ॥ २ ॥
एहौ एक देव पास, पूरवें उलास आस,
तेज कौ प्रकास वास जास त्रिभुवन्न ।
पास सांम पास सांम नामचै प्रणाम पामें,
माम कांम ठाम ठाम माणौं सुक्ख मन्न ॥ ३ ॥
ओपियौ इखाग वंश आससेण अंग जात,
वांमा विख्यिात मात जात आवैं वृन्द ।
एकीह अबीह सीह लोपें कुण लीह
एहौ जाप धरैं धर्मसीह गौडीचौ जिणंद ॥ ४ ॥

—:※:—

जैसलमेर पार्श्व स्तवन

ढाल—दादेरे दरबार चांपो मोह्य रह्यो

उगौ धन दिन आज सफलौ जन्म सही री
सफल फल्या सहु काज, जिनवर यात्रा लही री ॥ १ ॥
जगगुरू पास जिणंद, भेट्यौ भाव धरी री ।
इण संसार समंद, तारण तरण तरी री ॥ २ ॥
जिनवरजी ने जाप, परहा पाप पुलै री ।
उगै सूरिज आप, किम अंधार कलै री ॥ ३ ॥
भयभंजण भगवंत, जेसलमेर जयौ री ।
उपगारी अरिहंत, दरिसण दुक्ख गयौ री ॥ ४ ॥

द्रव्यत भावत दोइ, पूजा विविध परै री।
हित करि करतां होइ, समकित शुद्ध तरै री ॥ ५ ॥
हेत धरी मन मांहि, मूरत जेह नमैं री।
लाधो नर भव लाह, भूला अवर भमै री ॥ ६ ॥
सानिध प्रभु सुविलास, लीला अधिक लहै री।
विजयहरष जसवास, कवि 'धर्मसीह' कहै री ॥ ७ ॥

—:&:—

श्री मगसी पार्श्वनाथ स्तवन

ढाल—आदरजीव क्षमा गुण०

भवियण भाव धरी नै भेटो, मगसीपुर महाराज जी।
जेहनो मन सुद्ध नाम जपंतां, सहीय मिले सिवसाज जी ।भ० ।१।
त्रिभुवन मांहे ए जिन तारण, वारण दुख वन वन्हिजी
आपण कर जे जिनवर अरचै, धरणी ते नर धन्न जी । भ० । २ ।
पाये अवर सुरां ने पाड्या, मदन महामणिमत्थजी।
तिण नें पिण जिण खिण में जीत्या, सहु में ए समरत्थ जी ।भ०।३।
सोवन सिंहासण ऊपरि सोहे, श्याम वरण तनु सारजी।
गुहिर हम गिरू परि गाजंतौ, जाणे करि जलधार जी । भ० ।४।
अवर देव सेवा तजि अलगी, पूजौ नित प्रति पास जी।
भव दल सगला दूरै भांजी, विलसौ मुक्ति विलास जी ।भ०।५।
आखै दिन सुर गुर गुण गावै, आवैं नहीं तोइ अंत जी।
कर भरि नीर समुद्र थी काढ्यां, जलनिधि ओछ न जंत जी ।भ०६।
नवनिधि थायै प्रभु नै नामै, विजयहरष विलसंत जी।
धर्मसीह नित आज्ञा धारइ, अमल मनै एकंत जी । भ० । ७ ।

श्री पार्श्वनाथ स्तवन

ढाल—नणदल रो

सहियर हे सहियर आवौ मिलो हे उतावली,
सुन्दर करि सिणगार। स०।

जिनवर देव जुहारिवा, आज सफल अवतार। स० ॥ १ ॥
मनड़ो जिनवर मोहीयो ए।

पहिली देइ प्रदिक्षणा, त्रिकरण शुद्ध त्रिणवार।
गुण जिनवर ना गाइयै, आंणी हर्ष अपार ॥ २ ॥

मूरति अति रलियामणी, निरखण चाहै नैंण।
जेह करावै जातरा, साचा ते हिज सैंण ॥ ३ ॥

सुखदायक मुख सोहतौ, कुंडल बेऊं कांन।
भाल विसाल मुगट भलौ, दिन दिन वधते वान ॥ ४ ॥

जिम जिम मूरति जोइये, मन तिम तिम मोहाय।
प्रभु दरसण दीठां पछी, दूजौ नावै दाय ॥ ५ ॥

प्रीति करी इक पास सुं, रहियौ मो मन राच।
पाच रतन नै परिहरी, कहौ कुण झालै काच ॥ ६ ॥

धन धन ते नर धरणीयै, जेहनी सफली जीह।
जस कहै पास जिणंद नौ, सुह भावै धर्मसींह ॥ ७ ॥

—:*:—

श्री संखेश्वर पार्श्व स्तवन

ढाल—विलसै रिद्धि समृद्धि मिली

महिमा मोटी त्रिभुवन मांहे, आवैं यात्रा जग उमाहै ।
कल्पतरू फलियो हितकामी, सुखदायक संखेश्वर स्वामी ।१।

धुरि वंदइ पूजइ ध्यान धरै, कर जोड़ी सेवा जेह करै ।
गुण गावै तेह सुगति गामी, सुखदायक संखेश्वर स्वामी ।२।

विषमा दुख वैरी जाय विलैं, महिला जिम कमला आइ मिलैं ।
जप जाप जपो अन्तरयामी, सुखदायक संखेश्वर स्वामी ।३।

जदुसेन जरा मूर्छित जाणी, सज कीध पखाल तणौं पाणी ।
ठावा जस एहवा ठाम ठांमी, सुखदायक संखेश्वर स्वामी ।।४।।

काम कुम्भ चिंतामणि कल्पलता, छाजैं ए उपमा काज छता ।
पिण इण सम काइन आसांमी, सुखदायक संखेश्वर स्वामी ।।५।।

सतरैसे सतट्ठि पोस सुदी, सातम श्री पाटण संघ मुदी ।
परतिख प्रभु नी यात्रा पांमी, सुखदायक संखेश्वर स्वामी ।।६।।

धन जिनसुखसूरि धर्म शील रस्तइ, सुविवेक कियो वेलजीवस्तइ ।
जिनराज जुहार्या जस नामी, सुखदायक संखेश्वर स्वामी ।।७ ।।

—:o:—

श्री पार्श्व स्तवन

सुणि अरदासा सुगण निवासा अमची पूरउ आसा राजि ।।
देखि उदासा अपणा दासा, दीजैं कछुक दिलासा राजि ।। १ ।।
चाढी चटकी भव मइ भटकी, नाच्यौ हुं विधि नटकी राजि ।
हिव मन हटकी आपसौं अटकी, लागौ तुम्ह पाय लटकी ।।२।।
तइ अम्ह टाली मुगति संभाली, प्रीति अम्है हिज पाली राजि ।
एक हथाली बागी ताली, बात अचंभा वाली राज ।। ३ ।।
तु उपगारी पास तुहारी, सेवा सहु में सारी राज ।
तत्त विचारी शुध मन धारी, श्री धर्मसी सुखकारी राज ।। ४ ।।

श्री पार्श्व स्तवन

राग—सारंग वृंदावनी

नित नमियै पारसनाथ जी ।
मनमोहन ए रतन चिंतामणि, हिव आयो छै हाथ जी ।। १ ।।
सेवो स्वामि सदा मन सूधें, आपै वंछित आथ जी ।
पुण्य उदै करि ए प्रभु पायौ, सिवपुर मारग साथ जी ।। २ ।।
महियल मांहि अधिक जसु महिमा, सेवै संघ सनाथ जी ।
ध्यावौ एक मना कहै धर्मसी, एह अनाथां नाथ जी ।। ३ ।।

पार्श्वनाथ वधावा गीत

पहिलै वधावै जिणवर देव जुहास्या,
सफलौ हो सफलौ जन्म हुऔ सही ।
बीजे बधावे समकित रतन सुलाधो,
दिल में हो संकादिक दूषण नहीं जी ।। १ ।।

अगणी बधावइ श्रावक पदवी पाइ,
देसें हो देसविरति धर्म आदरूं जी।
चौथइ वधावै हो [1]चारित लाधो,
तिणथी हो तिणथी भव सागर तरूं जी ॥ २ ॥
मंगल पहिलौ अरिहंत मानुं,
बिजौ हो बीजो हो सिद्ध मंगल वली जी।
तीजइ मंगल साधनी सेवा,
चउथे हो धर्म कह्यौ जे केवली जी ॥ ३ ॥
जिन शासन वरतौ जयवन्तौ,
भावित हो भावित बधावा मंगल भाखिया जी।
च्यार लोगुत्तम एहिज चावा,
सूत्रे हो सूत्रे हो सरणा एहिज साखिया जी ॥ ४ ॥
पारसनाथ[2] तणै परसादै माहरै,
हो माहरै हो जैन धर्म मुदै जी।
मन शुद्ध श्री धर्मसी कहैं माहरइ,
आज्यो हो आज्यो हो ए भव भव उदै जी ॥ ५ ॥
इति श्री पार्श्वनाथ लघु स्तवन। उपदेशे गेयंच ॥

श्री पार्श्वनाथ स्तवन

नैणा धन लेखुं देखुं देखुं मुख अति नीको।
जीहा धन जाणुं गावुं गावुं जस जिनजी को ॥
धन धन मुझ स्वामी तुं त्रिभुवन सिर टीको ॥ १ ॥ नैणा०

१ होजो चरित्रचोखो २ जिणंद

चित्त शुद्धे करि हुं नित सुणिवा चाहुं,
तुझ उपदेश अमी को ॥ २ ॥ नै०
देवल देवल देव घणां ही दीसे,
तुम सम जस न कही को ॥ ३ ॥ नै०
पुण्यै करि प्रभु साहिब पायो,
सोइ पायो में राज पृथ्वी को ॥ ४ ॥ नै०
कीजै मया मुझ सेवक कीजै साचो,
कीजो मत अवर हथी को ॥ ५ ॥ नै०
रूप अनूपम तेज विराजै तैसो,
सूरिज को न ससी को ॥ ६ ॥ नै०
पास जिनेसर सहु मन वंछित पूरै,
साहिब श्री धर्मसी कौ ॥ ७ ॥ न०

श्री पार्श्वनाथ स्तवन

महिमा मोटी महियलै हो, परगट जिनवर पास।
सुरनर नित सेवा करै हो, आणींय अधिक उलास ॥ १ ॥
जगनायक जिनवर गुण जपौ हो, जसु जपतां दुख जाय।
थिरे घरि नवनिधि थाय ॥ २ ॥ ज०
मन मोहन मूरति भली हो, सब ही काज सुहाय।
चरण कमल सुख चाहतौ हो, मुझ मन भमर मोहाय ॥३॥ ज०
सिर उपर मुकट सुहामणों हो, कुण्डल दोनूं कान।
झिगमि (ग) तेजे झलकता हो, सूरिज तेज समान ॥ ४ ॥ ज०

चोखा चोवा चंदना हो, घसि केसर घनसार।
अद्भुत मृगमद अरगजे हो, अरचतां सुख अपार ॥ ५ ॥ ज०
नित ही नाटक नव नवा हो, दों दों दमकै मृदंग।
झमकित झांझरि झालरी हो, मोहत मन सुख चंग ॥ ६ ॥ ज०
तत नक ताथेइ ताथेइ तटक दे तोडत तांन।
फदक दे अति भली देत है फेरी, गावत विचि विचि ग्यान ७ ज०
पूजा यु करता प्रभुजी की, सहीय मिलै सुख साज।
दस दिस माहे वहु जस दीपै, परभवि सिवपुर राज ॥ ८ ॥ ज०
पूरण वंछित पास जी हो, पुहवी मांहे प्रधान।
वाचक विजयहरष सुख वाधै, धरमसी धरत ही ध्यान ॥६॥ज०

श्रीआबू तीर्थ स्तवन

आबू आज्यो रे आबू आज्यो २ आबू आज्यो वहिला थाज्यो।
मानव नौ भव सफल करौ तो, यात्रा काजे जाज्यो।
वामानंदन वंदन वहिला, अचलगढै पिण आज्यो ॥ १ ॥
हां रे म्हौंरा सयणां साचा वयण सुणेज्यो, अधिको तीरथ आबू,
सहु पातक मल साबू, भल भल २ देवल जोज्यो।
देवल जोज्यो हरखित होज्यो, धुरि पातक मल धोज्यो।
सहु सुखदायक तीरथ नायक, ज्योवा लायक ज्योज्यो ॥ २ ॥
हां रे सयणा नयणा सफल करेज्यो,
दूरथी देवल दीसै, हीयड़ौ तिम तिम हींसै।
लुलि लुलि लुलि लुलि सीस नमाज्यो,

सीस नमाज्यो गुण गवराज्यो वलि श्रीफल वधराज्यो ।
धन धन वेला धन ए घडीयां, धन अवतार धराज्यो ॥ ३ ॥

हां रे सयणा छवि गिरवर नी छाजे ।
कांइ लूंबां आंबें लहकै, केतक कंपक महकै ।
मह मह मह मह परिमल लेज्यो,
परमल लेज्यो दुख दलेज्यो, देहरै भमती देज्यौ ।
तोरण धोरण चितनी चोरण कोरण अनुमोदेज्यो ॥ ४ ॥

हां रे सयणा विमलवसी वांदेजो ।
केसर भरीय कचोली, माहे मृगमद चोली ।
घन घन घन घनसार घुलाज्यो घुलाज्यो,
भाव भिलाज्यो आसातना टलाज्यो ।
नव नव रंगी अंगी चंगी अंगी अंगि रचाज्यो ॥ ५ ॥

हां रे सयणा खेला पात्र नचाज्यो
सरिखै वेस समेला, भमती रमता भेला ।
थिग मिग थिगथिग थेइ थैइ, थिग मिग
थेइ २ तत नक ताथेई ॥
शिव मग सन्मुख थाज्यौ, धप मप दों दों,
भर हर भौं भों मादल भेर वजाज्यो ॥ ६ ॥

हां रे सयणा अचलगढे अरचाज्यो ।
चारे बिंब उत्तंगा, सोवन रूप सुचंगा ।
झलहल झिगमिग ज्योति सराज्यो,
ज्योति सराज्यो, भाव भराज्यो ।
यात्रा सफल कराज्यो, विजयहर्ष सुख साता वांछो,
शुभ 'धर्मसीख' धराज्यो ॥ ७ ॥

श्री महावीर जिन स्तवन

वीर जिणेसर वंदियै, इण सम नहीं कोइ और, म्हांरा लाल।
परता पूरण परगडौ, साचौ प्रभु साचौर म्हां० ॥ १ ॥

आज इणै पंचम अरै, सासण एहनो सार म्हां० ।
जिन धरम वरते जगत में, ए एहनौ उपगार म्हां०॥ २ ॥

गौतम सुधरम गणधरू, शिष्य एहना श्रीकार म्हां० ।
सूत्र सिद्धान्त जे उपदिस्या, नित सुणतां निस्तार म्हां०॥ ३ ॥

अतुलित बली ए अवतर्यो, जिण सुर कीधा जेर म्हां० ।
संका मेटी शक्रनी, मही कंपायौ मेर म्हां०॥ ४ ॥

अठ वरसी बालक इणें, मह्रुकम एकंण मुट्ठि म्हां० ।
रामति आमल की रम्या, देव हराव्यो दुट्ठि म्हां०॥ ५ ॥

लेसालै ले आवतां, अधिकाइ करी एण म्हां० ।
ऊतर आप्या इन्द्र ने, जौड़ौ व्याकरण जेण ॥ ६ ॥ म्हां०

वरस त्रीसज गृह वसी, ले लिखमी नो लाह म्हां० ।
आपो आपै आदर्यो, चारित चित्तनी चाह म्हां०॥ ७ ॥

तप जिण सहु निरजल तप्या, बार वरस धुरि मु'न म्हां० ।
तिण में पारण दिन तिकै, ऊंठसै मै इक ऊंन म्हां०॥ ८ ॥

सूलपाणि चंडकोशियौ, गौसाला गुणहीन म्हां० ।
तिण तीनां ने इण कीयां, उपसम समकित लीण म्हां०॥ ९ ॥

झूठौ ही जे झगडीयौ, जम्माइ जम्माल म्हां० ।
तार्यो पनर भवे तिकौ, प्रभु सहुना प्रतिपाल म्हां०॥ १० ॥
पामी केवल थापीया, गणधर जेण इग्यार म्हां० ।
सहस चउद शिष्य साधु ते, साध्वी छतीस हजार म्हां०॥ ११ ॥
पुंहता जिणवर सिवपुरे, ल्यै आठे गुण लाह म्हां० ।
जिन प्रतिमा जिनवर जिसी, अरचौ अधिक उछाह म्हां०॥१२॥
भावै जिन गुण भावना, गावइ वलि गुणगांन म्हां० ।
धन ते कहै श्री धर्मसी, पामै सुख परधान म्हां०॥ १३ ॥

श्री राड़द्रह महावीर स्तवन

राड़धूइ महावीर विराजै, भय सगला दूरें भाजे रे । रा० ।
सहु विधि सुख संपति साजैं, नित सेवक काज निवाजैरे ।१। रा०
सासन एहनो इण आरै, वरतै सुधरम विचारै रे । रा० ।
सुन्दर मूरति अति सारी, नित नमण करे नर नारी रे । २ । रा०
देवल वलि निर्मल दीपै, जसु तेज तरणी से जीपें रे । रा०
सुरतरु ए फल्यो समीपै, पातक दुख पास न छीपै रे । ३ । रा०
धन धन जे धर्मसी ध्यावै, प्रभु सानिध सहु सुख पावैरे ।
शुभ भाव धरी जे सेवै, दिन दिन मन वंछित देवे रे । ४ । रा०
सितरै वर्षे सुखदाइ, पुण्ये प्रभु यात्रा पाइ रे ।
श्री जिनसुखसूरि सदाइ, श्री संघ धर्मशील सवाई रे ।५ । रा०

श्री महावीर जन्म गीत

सफल थाल वागा थिया धवल मंगल सयल
तुरत त्रिभुवन हुआ हरष त्यारां ।
धनद कोठार भंडार भरिया धने,
जनमियो देव व्रधमान ज्यारां । १ ।
वार तिण मेरगिरि सिहर न्ववरावियौ,
भला सुर असुरपति हुआ मेला ।
सुद्रव वरषा हुई लोक हरष्या सहु,
वाह जिनवीर री जनम वेला । २ ।
मिहर जगि ऊगतें पूगतें मनोरथ,
जुगति जाचक लहैं दान जाचा ।
मंडिया महोछव सिधारथ मौहले,
सुपन त्रिसला सुतण किया साचा । ३ ।
करण उपगार संसार तारण कलू
आप अवतार जगदीस आयौ ।
धनो धन जैन धर्म सीम धारण धणी,
जगतगुर भले महावीर जायौ । ४ ।

सतरह भेदी पूजा स्तवन

भाव भले भगवंत री, पूजा सतर प्रकार ।
परसिद्ध कीधी द्रोपदी, अंग छठै अधिकार । १ ।
करि पींछी मुखकोश करि, विमल कलश भरि नीर ।
पूजा न्हावण करौ प्रथम, सहु सुख करण सरीर ।। २ ।।

केसर चंदन कुमकुमै, अंगी रचो अनूप।
करि नव अंगे नव तिलक, पूजा बीय प्ररूप ॥ ३ ॥

वसन युगल उज्जल विमल, आरोपें जिन अंग।
लाभ ज्ञान दरसण लहै, पूजा तृतीय प्रसंग ॥ ४ ॥
करपूरैं कसतूरियै, विविध सुगन्ध वणाय।
अरिहंत अंगै अरचतां, चौगइ दुख चूराय ॥ ५ ॥
मन विकसै तिम विकसता, पुहप अनेक प्रकार।
प्रभु पूजाए पंचमी, पंचमगति दातार ॥ ६ ॥
छट्ठी पूजा ए छती, महा सुरभि पुष्पमाल।
गुण गुंथी थापौ गले, जेम टलैं दुख जाल ॥ ७ ॥
केतक कंपक केवड़ा, सौभे तेम सुगात।
चाढो जिम चढता हुवै, सातमीयै सुख सात ॥ ८ ॥
अंगै सेल्हारस अगर, पूरौ मुखै कपूर।

अरिहंत पूजा आठमी, करम आठ कर दूर ॥ ९ ॥
मोहन धज धरि मस्तकै, सूहव गीत समूज।
दीजैं तिन प्रदिक्षणा, परसिद्ध नवमी पूज ॥ १० ॥

प्रभु सिर मुगट धरौ प्रगट, आभरण सुघट अनेक।
बांहै सोहै बहुरखा, विधि दशमी सुविवेक ॥ ११ ॥

फूलहरौ अति फाबतौ, फूंदे लहकै फूल।
महकै परिमल फल महा, इग्यारमी पूज अमूल ॥ १२ ॥

पुहप सुरभि पांचे वरण, वरषा करण विशेष।
अधो बंध मुख ऊरधे, द्वादशमी विधि देख ॥ १३ ॥

चित चोखे चोखे करी, अठ मंगल आलेह ।
अरिहंत प्रतिमा आगलै, तेरम पूजा तेह ॥ १४ ॥
गंधवती मृगमद अगर, सेल्हारस घनसारु ।
धरि प्रभु आगलि धूपणो, चवदम अरचा चारु ॥ १५ ॥
कंठ भलइ आलाप करि, गावौ प्रभु गुण गीत ।
भावौ अधिकी भावना, पनरम पूजा प्रीत ॥ १६ ॥
कर जोडि नाटक करै, सजि सुन्दरि सिणगार ।
भव नाटक ते नवि भमै, सोलम पूजा सार ॥ १७ ॥
तत घन शुषि रे आन धें, वाजित्र चौविध वाय ।
भगत भली भगवंतरी, सतरम ए सुखदाय ॥ १८ ॥
जुदी जुदी विध जाणिवा, संख्या पिण समझाय ।
दोहे इक इक दाखवी, इम धर्मसी उवझाय ॥ १९ ॥

बीकानेर चैत्य परिपाटी स्तवन

चैत्य प्रवाडे चौवीसटै, करतां दरिसण सहु दुख कटै ।
घणा महाजन मिलिया घेर, वंदो जिनवर बीकानेर ॥ १ ॥
शक्रस्तव पांचे सुविचार, जुगते जिनवर देव जुहार ।
भावै वावै भुंगल भेर, वंदो जिनवर बीकानेर ॥ २ ॥
नित नित बीजै देहरै नमो, वासपूज्य जिनवर बारमो ।
अलग टलै अज्ञान अंधेर, वंदो जिनवर बीकानेर ॥ ३ ॥
तीजो देवल तिणहीज तीर, वंदो जिन चौवीसम वीर ।
जिण सहु सुरवर कीधा जेर, वंदो जिनवर बीकानेर ॥ ४ ॥

भांडैसाह करायौ भलौ, तीरथ ए सहु मैं सिर तिलौ।
मोटी ओपम राजे मेर, वंदो जिनवर बीकानेर॥ ५॥
सुमतिनाथ जिण पंचम सार, चौमुख २ जिन च्यार च्यार।
ऊपरि ऊपरि सुजस उचेर, वंदो जिनवर बीकानेर॥ ६॥
नमि आगे तिहां थी नमिनाथ, इकवीसम आपै सिव आथि।
हालौ जीव जयणाए हेर, वन्दो जिनवर बीकानेर॥ ७॥
वलतां देवगृहे सुविधान, मन सुध वंदु श्री वर्द्धमान।
फिरतां शुद्ध प्रदिक्षणा फेर, वंदो जिनवर बीकानेर॥ ८॥
आदिसर प्रासाद अनूप, राजैं मूरति सुन्दर रूप।
चिहुं दिसि बिंब घणा चौपखेर, वंदो जिनवर बीकानेर॥ ९॥
अजितनाथ बीजौ अरिहंत, भय भंजन भेट्यौ भगवंत।
खाट्यौ समकित पाप खंखेर, वंदो जिनवर बीकानेर॥ १०॥
परसिद्ध ए आठे प्रासाद, प्रणम्या जिनवर तजी प्रमाद।
श्री धर्मसी कहैं सांझ सवेर, वंदो जिनवर बीकानेर॥ ११॥

तीर्थंकर स्तुति-सवैया

नमो नितमेव सजौ शुभ सेव, जयो जिनदेव सदा सरसै।
दुति देह दसैं, अति ही उलसै, दुख दूर नसै जिनकै दरसै॥
असुरेस सुरेश अशेष नरेश, सबै तिण वंदन कुं तरसे।
धर्मसीह कहै सुख सोऊ लहै, जोऊ आदि जिणंद नमै हरसै।१।

सवैया तेवीसा

तूं उपगार करै जु अपार अनाथ अधार सबै सुखकंदा ।
जिते जगदेव करै तुझ सेव जिनेसर नाभि नरेसर नन्दा ॥
देख मुख नूर मिटैं दुख दूर नसै अंधकार ज्युं देखि दिणंदा ।
श्री धर्मसीह कहै निसदीह उदौ करि संघ कौ आदि जिणंदा ।२।

दान दियो जिण आपणी देह कौ, लीनो परावत जीव लुकाइ ।
आवत ही अचिरा उदरैं सब देस में शांति जिणें वरताइ ॥
पाल्यौ छ खंड को राज जिणें जिनराज भयौ पदवी दु पाइ ।
सेवहु भाव भलै धर्ममी कहै शांति जिणंद सबै सुखदाइ ॥ ३ ॥

प्रगट्टा विकटा उमटाति घटा सघटा बिछुटात छटा घन की ।
इक ताल मैं ताल रु खाल प्रणाल वहै इक ताल उतालनि की ॥
चिहुं ओर चकोर सजोर सु मोर करै निसि सोर पहोरनि की ।
विनती करै राजमती पिउ सुं अब बात कहा धर्म शीलन की ॥४॥

ताल कंसाल मृदंग वजावत, गावत किन्नर कोकिल कूजा ।
ताथेइ ताथेइ थेइ भलै हित, नाचत है नर नार समूजा ॥
कुंडल कान झिगामग ज्योति, सु दीपत चंद दिनंदही दूजा ।
यौं धर्मसीह कहै धन दीह, वनी मेरे पास जिणंद की पूजा ॥

जानत बाल गुपाल सबै जसु, देस विदेस प्रसिद्ध पडूरै,
नाम ते कामित पामत हैं नित, देखत जात सबै दुख पूरैं ।
मोहन रूप अनूप विराजित, सोभत सुन्दर देह सनूरैं,
ध्यान धरौं हित सुं धर्मसी कहै, पारसनाथ सदा सुख पूरै ॥

जाकौ परता पूर देखे दुख जाइ दूर,
हाजरा हजूर जगि जागैं प्रभु पास जू।
मूरति विराजै नित चतुर के मोहे चित्त,
पेखैं वधै नैननि की अधिक पियास जू॥
कीरति सुनी है कान, दीनौ कहा लुं कै दान,
धरिके तुम्हारौ ध्यान आव लख पास जू।
कहत है धर्मसीह गहत ही ताकौ नाम,
लहत अनंत सुख तूटै दुख पास जू॥

चौवीस जिन गणधरादि संख्या छप्पय

वंदो जिन चौवीस चवदसें बावन गणधर।
साधु अठ्ठावीस लाख सहस अडतीस सुखंकर॥
साध्वी लाख चम्माल सहस छयालिस चउसय।
श्रावक पचपन लाख सहस अडताल समुच्चय॥
श्राविका कोडि पंच लाख सहु,
अधिक अठावीस सहस अख।
परिवार इतो संघ ने प्रगट,
श्रीधर्मसी कहै करहु सुख॥

सनत्कुमार सझाय

ढाल :-त्यागी वैरागी मेघा जिन सगझाया,

अथवा उडरे आंबाकोइल मोरी एहनी

साचा सुग्यानी ध्यानी सनतकुमारा,
कारिमी काया माया कुण अहंकारा । सा०
इण महामुनिना ए अधिकारा, नित सांभलतां ह्वै निसतारा ।१
एण भरतक्षेत्र चउथा आरा, हथणाउर सुरपुर अणुहारा ।सा० ।
आससेण सहदेवी कुखि अवतारा, भोगवैं चक्रवर्ति
पदवी भारा । सा० । २
विधिविधिऋद्धि तणा विस्तारा, पालैं राज छखंड पडारा ।सा०।
एकदाइन्द्र प्रशंसै अपारा, ए अतिसुन्दर रूप उदारा । सा० । ३।
तिहां विजै विजयंत देवअतारा,
इन्द्र वचन आंणैअदेखारा । सा०।
विप्र नौ वेश रचीं तिणवारा, देव दोआवै देखणदीदारा ।सा०।४।
पइसण देवैंनहि प्रतिहारा, आपन्हवण करै अंग उघारा ।सा० ।
अम्हे दरसणआया अलगारा, विचिरोकण ना नही
व्यवहारा । सा० । ५
मुजरो कीधौ गेहमझारा, कुण इणआगै देवकुमारा । ता० ।६
दीपइरूपजांणे दिनकारां, सक्रवचन ते साच संभारा ।सा० ।६
इम सुणि नृप आणै अहंकारा, सभा विराजैभला सजि
शृंगारा ।सा०।

वलिआवैं देखैं दरबारा, पिण शिरधुण्यौ केण प्रकारा ।सा।०।७
विप्र पूछयते कहय विचारा, एतुम्ह विणस्यौ रूप अवारा ।सा०।
धिग ए तनु अभिमान धिकारा, नरनीकाय तिका नाछारा । ८।
अद्रश हुआ सुरते अचंभारा, सहु देखंतां लोक सभारा । सा० ।
विणट्ठी कायारौग विकारा, चक्रबरति रा पिण नहि चारा । ९।
असुचि अपावन अथिर संसारा, गरब करै ते मूढ़ गमारा ।सा०।
भरिया तजि कोठार भंडारा, आप चक्रीहुआ अणगारा ।सा।१०
दिल वहु हेत सुंनदा दारा, पूठइ विंलपै ले परिवारा । सा० ।
लगि छम्मास फिरीतसुलारा, ललच्यौ नहि तोईचित्त लगारा ११
अरस विरस मुनिल्यैं आहारा, उपज्या साते रोग अपारा ।सा०।
कडू ज्वर सासकास करारा, स्वरभंग अखियांउदर विथारा ।१२।
सातसैं वरस सह्या असातारा, इंद्र वखाण्यौ वले द्रढ
आचारा ।सा०।
सुरकहै वेसकरे सथुआरा, साधु समाधिकरूतुम्हसारा ।सा०।१३
मुनि कहै अतरंग करम आम्हारा, तिहांकोईजोर न चलैं
तुम्हारा ।सा०।
परचैं थूक लगाइ पोतारा, अंगुलीकीध सोवन आकारा ।सा।१४
खरियौ मुनिवर लब्धि भंडारा, धन धन एहचलैं खगधारा ।सा०।
सुर परसंसि गयौ श्रीकारा, आऊ त्रिण लखवरष आधारा ।१५
समेतशिखरैं मास संथारा, सरगतीजै गया सनतकुमारा ।सा०।
विजयहरष गुरु सुगुर विचारा, वंदे श्रीधरमसीह वारोवारा।१६

मेतार्थ मुनि स्वाध्याय

राजग्रही में गोचरी, विहरतौ शुद्ध आहार ।
सोनार नै घर संचर्यो, सुमति गुप्तिइ रे साचवतौ सार ।१।।

सुज्ञानी साधु धन मेतारिज धीर ।
सजि समता रे तजि ममता सरीर ।सु०।धन०।२।

सोना तणा जव तिण घड़ी, तिण घड़ी, कीध तैयार ।
सोनार तिण साधुनइ बहिरावा, गयो गेह मझार ।सु०।३।

घूठा थकी कुंच पंखियइ तिहां, चुग्या सहु जव तेण ।
सोनार आइ संभालतां, कह्यौ माहरा रे जव लीधा केण ।सु०।४।

नर कोइ बीजौ इहां नहीं, सहु लिया जव इण साध ।
तिण रीस भरियै तेहनौ, सीस वीटयौ रे लेइ नीले वाध ।सु०।५।

जांणियौ मन में तिहां यती, जौ कहुं गिलिया क्रुंच ।
तौ एह हणिस्यै तेह नै, साधु बोल्यो रे नहीं इणसंच ।सु०।६।

अति घणी वेदन ऊछली, सूकतैं बाधूइ सीस ।
पीड थी दृग छिटकी पड्या, दया पाली रे तोइ बिस्वा वीस ।७।

भली अनित्य अशरणभावना, धरि चित्त चढ़ते ध्यान ।
कर्म चूरि अंतगड़ केवलि, थइ पहुंतौ रे मुनि शिवथान ।सु०।८।

अणगार एहवा उपशमी, प्रणमियैं तेहना पाय ।
सुख विजयहरष हुवै सदा, इम भाखइ रे धर्मसी उवझाय ।सु०।६

—:❀:—

दश श्रावक सज्झाय

सूधै मन प्रणमौ दश श्रावक मोटी ऋद्धि बारैं व्रत धार ।
वीर जिणंदइ एह वखाण्या, सातमे अंग तणैं अधिकार । सू०।१।
वाणीय गाम नगर तिहां आणंद, बारह कौडि सोनईया सार ।
दस गौ सहस तणो इक गोकुल, एहवा गौकुल जेहनै च्यार ।सू०।२।
कोडि अढ़ार सोवन छ गोकुल, चंपापुरि कामदेव जगीस ।
तीजौ चुंलणीप्रिया वनारसी, आठ गोकुल धन कोडि चौवीस ।३।
सुरादेव वाणारसी नयरइ, चुलशतक आलभीया सार ।
कंपिल्ले नयरैं कुंडकोलिक, छ व्रज कोडि अढ़ार अढ़ार ।सू०।४
पोलासुपुरि सद्दालपुत्र सत्तम, तीन कोडि धन गोकुल एक ।
आठमौ महाशतक राजग्रही, कोडि चौवीस व्रजआठ विवेक ।५।
नवमो नंदणीप्रिया सावत्थी, दशमौ लेतीया पिया तिण ठाम ।
बार बार कोडि धन बिहुनै, च्यार च्यार गोकुल अभिराम ।६।
व्रत पाली अणशण करि पहुंता, पहिलै देवलोकै परधान ।
च्यार च्यार पल्योपम आयुष, धर्मसीह धरै धर्म ध्यान ।सू०।७।

—:❀:—

श्री गुरुदेव स्तवनादि संग्रह

श्री गौतम स्वामी स्तवन

प्रहसम आलस तजि परौ, चौखो चित्त करो रे, राचो एकणी रंग।
गौतम गुण भणौ रे ॥ आंकणी ॥
सेवो मन शुद्धे करी, भावे भरी रे, आणंद होवे अंग ॥गौ०१॥
नामे नित नवनिध मिलैं संकट टलै रे, दालिद नासे दूर।
ध्यान धर्या धन है घणा,
न रहैं मणा रे, पामे सुख भरपूर ॥ गौ०२ ॥
कामधेनु कल्पतरु, चिंतामणि वरु रे, नाम में तीन रतन्न।
लब्ध अठावीस जेहनें,
गुण गेह नैं रे, ध्यावे ते धन धन्न ॥ गौ०३ ॥
जिण दिनकर किरणां ग्रही, मन गहगही रे, चढ्यौ अष्टापद सोइ।
जिणवर बिंब जुहारिया ,
दुख वारियारे, च्यार आठ दस दोइ ॥ गौ०४॥
प्रतिबोध्या तापस वली, मन नी रली रे, पनरेंसें नें तीन।
एकणि पात्रे पारणो,
भव-तारणउ रे, लब्धि अंगूठ अखीण ॥ गौ०५ ॥

जे एहवा मुनिवर जपै, तसु दुख खपै रे, तूटै सगला कर्म।
लीला अधिक लहै सदा,
सुख संपदा रे, भाजे भव नौ भर्म ॥ गौ० ६ ॥
आठ सिद्धि हुइ आंगणै, घरि धन घणैं रे, विजयहरष जशवास।
धरमसीह मुनिवर इम कहै,
ते सुख लहै रे, एह भणै जे उल्हास ॥ गौ० ७ ॥

श्री जंबूस्वामी स्तवन

छोडो नां जी २ कंचन नै कामिनी छौडौ नां जी।
सुणि जंबु स्वामी छोडो ना जी। आणि हां।
सुधरम स्वामी तणि सुणि वाणी, इमदिक्षा मन आणी।
तरुणी परणी तुरत तजौ ते, तोड़ो मति अति ताणी ॥छो० १ ॥

दायज में सोनइया दीधी, नवला कोड़ि निनाणुं।
परिहरि नै पाछै पछतास्यौ, तुम सुं स्युं अति ताणुं ॥छो० २।

प्रीतम कहै सुण देवानुप्रिये सुख थोड़ा दुख बहुला।
मधु बिन्दु दृष्टांते मानी, संग तजुं छुं सगला ॥ छो० ३ ॥

सुन्दर आठे श्वसुरा सासु, मातु पिता हित माथै।
प्रभवो पंचसयां प्रतिबोध्यो, संयम लै सहु साथै ॥ छो० ॥ ४ ॥

सुधरम शीश हुवा ए सहु, सुधरम शील आचारी।
सुत्र प्ररूप्या शिव पद पहुंच्या, आज जिके उपकारी ॥छो० ५॥

वडली जिनदत्तसूरि (यात्रा) स्तवन

यात्रा ए वडली जास्यां, गुरुदेव तणा गुण गास्यां हो ।
जिहां जिनवर मूरति राजइ, वलि जिनदत्तसूरि विराजैं हो ।१।

पाटण अणहलपुर पासइ, एह कीजै यात्रा उल्हासइ हो ।
सुणि तीरथ महिमा सारी, आवइ भावइ नर नारी हो ॥२॥

पूज्यां सहु इच्छा पूरइ, दुख दालिद नासै दूरै हो ।
जिण चौसठ योगिनी जीती, वरतइ ए बार वदीती हो ॥३॥

वीर बावन पिण वसि कीधा, जगगुरु एहवा जस लीधा हो ।
साकिणी डाकिणी उपशामइ, न पडै विजली जसु नामै हो ॥४॥

घर पुर वलि वाटइ घाटै, दुस्मण भय दूरै दाटै हो ।
खरतर गुरु इम जस खाटइ, वरतै जे सुधरम वाटै हो ॥५॥

पारिख गुलाल पुन्याइ, जेहनइ सुत यात्र कराइ हो ।
श्रीपूज जिनसुखसूरि साथइ, लाभ लीधौ लालचंद नाथइ हो ।६।

सतरइ सतसठ्ठ वरीसइ, मिगसर वदि दुतीया दीसइ हो ।
सहु संघ मनोरथ साध्या, इम कहै धर्मसीह उपाध्या हो ॥७॥

—❀—

जिनदत्तसूरि सवैया

बावन वीर किये अपने वश, चौसट्ठि योगिनी पाय लगाइ।
डाइण साइणि व्यंतर, खेचर, भूत परेत पिसाच पुलाइ॥
बीज तटक्क भटक्क कट्टक, अट्टक रहै पै खट्टक न कांइ।
कहै धर्मसींह लंघे कुण लीह, दीयैजिनदत्त की एक दुहाइ॥१॥

१ श्री जिनकुशलसूरि (देरावर यात्रा) स्तवन

दादौ देरावर दीपै, जसु सेवक सुजसैं जीपै हो।
सदगुरु सुखदाई।
श्रीजिनकुशलसूरिन्द, कलिजुग मांहे सुरतरु कंदो हो॥१॥
महिमा इण जग मांहे, आवै बहु यात्र उछाहे हो।
परतिख परता पूरैं, चित्तनी सहु चिंता चूरे हो॥२॥
विषमी वेला वाटै, करतां समरण दुख काटै हो।
छाजहडां कुल छाजैं, गुरु महिमा अधिकी गाजैं हो॥३॥
परसिद्ध जिणचंद पाटै, खरतरगुरु शोभा खाटै हो।
सांनिध करण सदाइ, वड नामी गुरु वरदाई हो॥४॥
थुंभ घणा ठाम ठामै, पाय पूजै ते सुख पामै हो।
थिर देरावर थानै, मुनिवर सहु आसति माने हो॥५॥
मन मोटै मुलताणी, आदर यात्रा मन आणी हो।
राखी राखेचे रेख, संघ कीधो तिण सुविशेष हो॥६॥

जेसलगढ गच्छराज, जिणचंदसूरि गुणे जिहाज हो ।
वंदण संघ तिहां आवै, वित्त साते क्षेत्रे वावे हो ॥७॥
संघ आदरै समज, आया यात्रा श्रीपूज हो ।
मोटो संघ मुलताणी, हित मरोटी हाजीखाणी हो ॥८॥
जलालपुरे जस लीधो, सीतपुर उच वंछित सीधो हो ।
ए संघ यात्रा आया, श्रीपूज श्रीसंघ सवाया हो ॥९॥
सतरैसे पैंतालीसैं, माह सुदि तीजै सुजगीसै हो ।
यात्रा करी जयकारी, श्री धर्मसी कहै सुखकारी हो ॥१०॥

(२)

कुशल करण जिन कुशल जी, दादोजी परसिद्ध देव रे लाल ।
परगट परता पूरवै, शुद्धे मन करतां सेव रे लाल ॥१॥
पृथ्वी मांहे परगड़ौ, सिवीयाणो गढ सुखकार रे लाल ।
जेलागर मंत्री जेहां, नामे जयतश्री नारि रे लाल ॥२॥
तेरे सैंत्रीसैं समै, जायौ शुभ दिन जयकार रे लाल ।
सेंतालैं संयम लीयौ, सहु अथिर गिण्यौ संसार रे लाल ॥३॥
सदगुरु जिनचंदसूरिजी, सघले गुणे देखि सुघाट रे लाल ।
शुभ महोरत सत्योत्तरे, पाटण में दीधो पाट रे लाल ॥४॥
गिरुवो खरतर गच्छ धणी, जिण शासन में जसवास रे लाल ।
देरावर पुर दीपतौ, निव्यासीयें स्वर्ग निवास रे लाल ॥५॥

संकट माहे समरतां, दादौजी करें दुख दूर रे लाल।
बेडी राखी बूडती, परसिद्ध ए विरूद पडूर रे लाल ॥६॥
सेवतां सुरतरु समौ, दिन दिन दौलति दातार रे लाल।
विजयहर्ष वंछित दीयै, वंदै धर्मसी वारंवार रे लाल ॥७॥

(३)

कुशल गुरु नांमे नवनिधि पामै,
ध्यावै जेह सूधै मन सदगुरु, दिन दिन शुभ परिणामै ॥१॥
भर दुक्कर अटवी वलि घाटै, वैरी जूथ घणामें।
कुशल खेम कुशल परसादै, ते पहुंचे निज ठामै ॥२॥
परता पूरण संकट चूरण, चावौ चौरासी गच्छां मैं।
धर्मसीह कहै ध्यायां धावैं, करिवा सानिध कामै ॥३॥

(४)

दौलति दाता द्यौ सुख साता, सहुजन मन्न सुहाता राज।
जे दिन राता तुझ गुण गाता, ते रहै राता माता राज ॥१॥
दादा दादा जग जस वादा, मोह्या सहु नर मादा राज।
टलइ अल्हादा सहु विषवादा, कुशल कुशल परसादा राज ॥२॥
प्रवहण तार्या कष्ट निवार्या, अटवी माहि उबार्या राज।
विरुद संभार्या धर्मसी धार्या, सेवक काज सुधार्या राज ॥३॥

(५)

प्रेम मन धारि नित पहुर परभात रै,

विविध जसवास गुण रास वादौ।

अमल अखीयात विख्यात एणै इला,

दीपतौ देव जग मांहि दादौ ॥१॥

घाट रिपु थाट जलवाट ओघट घणै,

हणै सहु आपदा हुइ हजूरै।

सूरि सिरदार द्यै सकल सुख सेवकां,

पूर नित कुशल जिनकुशल पूरै ॥२

अधिक घण झाड उझाड अवगाहतां,

लसकरां तसकरां पड्यां लारै।

धींग गच्छराज रो ध्यान मन ध्यावतां,

विकट संकट सहु निकट वारै ॥३॥

बडकती भाजती बूडती बेडीयां,

पार उतार जिण विरुद पायौ।

तूंस सेवक तणा दूख भांजै तुरत,

धरमसी कुशल गुरु नाम ध्यायौ ॥४॥

—:०:—

सवैया

(६)

राजैं थुंभ ठौर ठौर ऐसो देव नाहीं और,
दादो दादो नाम तें जगत यश गायो है।
आपणें ही भाव आय पूजै लख लोक पाय,
प्यासनि कूं राण मांझि पानी आन पायो है॥
वाट घाट शत्रु थाट हाट पुर पाटण में,
देह गेह नेह सौं कुशल वरतायौ है।
धर्मसींह ध्यान धरैं सेवकां कुशल करै,
साचो श्री कुशल गुरु नाम यों कहायो है॥१॥

(७) कुशल सूरि छप्पय

सरब शोभ गुण सकल, साधुपति आपै साता।
सिरवंतां सिरि सिखर, सील शुभ सीख विख्याता॥
सुद्ध चित्त सुखकार, सूरि जिनकुशलसूर द्रुति।
सेवहि सेवक कोड़ि, सैव मत वात शैल पति॥
सोभंति अधिक सोभा जगति, सौम्यरूप सौजन्यवर।
संघ नै सुख संपति दीयण, सदा सेव धर्मसी सधर॥

(८)

श्री जिन कुशल सूरीश्वरु गावो गच्छराया।
शुद्ध चित्त नित समरतां सुख होय सवाया। श्री १॥

सेवै कुण सुर अवर कुं, परिहरि प्रभु पाया ।
आलिंगे कुण आक कुं, छंडि सुरतरु छाया ॥२॥
मन शुद्धे जपतां मिले, मन वंछित माया ।
तेणि धर्मवर्द्धन धर्यो, गुण जिण ही गाया ॥३॥

(६)

कुशल करो जिन कुशल जी दुख दूर निवारौ ।
द्यौ मन वंछित दिन दिनै, विनती अवधारौ ॥कु० १॥
तो समरथ साहिब छतें, दास दीन तुम्हारौ ।
शोभा न वधै स्यामीयां, एह बात विचारौ ॥२॥
भेट्या में हिव तुम्ह भणी, थयौ सफल जमारौ ।
धर्मवर्द्धन कहै मांहरा, मन वंछित सारो ॥३॥

श्रीजिनचन्दसूरि गीत

जाति—सपखरो

आज खरै उदै मुदै सारां गच्छां माहि
साहि पातिसाहि में सराह वाह वाह ।
जाग्यौ जैन चंद सागी, सोभागी रागी जैन धर्म,
वैरागी पुण्याइ जागी अधिकै उछाह ॥१॥
रूडा रूडा उपदेश दे दे वड़ा वड़ा भूप
कीधा, ध्रम्म रूप, खड़ा तडा सेवै पाय ।

वाणि रा किलोल लोल वखाणै इलौल आँणि,
सूत्र रा अरत्थ सो गरत्थ द्यै बताय ॥२॥

सूरि मंत्र साधना सवाइ पाइ अधिकाइ
आसति अगम्म आइ साची हाथ सिद्धि ।

साचो जत्त तत्तसार औहटी विषमवार,
वार तीन च्यार पाई पारिखा प्रसिद्ध ॥३॥

उजाडै पहाडे झाडे आयां चोर धाडै आडै,
राख्यौ साथ ओट जांणे कीध लोह कोट ।

जास वयण सिद्धि योग सेवकां रा रोग सोग,
वायै ज्युं वातूल तेम जायैं चढी चोट ॥४॥

साधी पंचनद्द जेण लाधी सिद्ध जैनचंद्र,
जैनसिंघ जैनराज रतन अबीह ।

ओपै एण पाट धम्मवाट साधां गज्ज घाट,
पूज मोटे पुन्न धन्न धन्न धर्मसीह ॥५॥

नं०—२ जाति कडखो

पुण्य परकास परभात प्रगट्यौ प्रगट,
भेटतां भरम भर तिमिर भाजै ।

देखि खरतर सुगुरु एम दाखै दुनी,
रवि तणै तेज तुझ भाल राजै ॥१॥

अधिक ऊच्छाह सोइ दिवस उगो इला,
दुरित अंधार सहु दूरि डोलैं ।

सुकवि गच्छराज नैं निरखि उपम सजै,
तरणि जिम ताहरौ वखत तोलै ॥२॥
धर्म शोभा सकल तेज वरते धरा,
हारि नाठौ तमस हेक हिलकै।
सूरि जिणचंद संपेखि सगला कहै,
किरणधर जेम तुझ भाग किलकै ॥३॥
प्रगट परताप जिनरतन रो पाटवी,
सकल सुख दैंण कवि कहै धर्मसीह।
झालियल तेज किरणांल जिम झालतां,
दलिद मेटैं करैं दौलति दीह ॥४॥

नं०—३

दे दैंकार करण धर्म दाखैं,
अधिकौ आणिंद दैं अधिकार।
नाम न ल्यै जिणचंद न ना रो,
नाठौ तिण रूसे नाकार ॥१॥
सुंबे सात प्रियां रे साह्यो,
गिणि पूरबलौ वंस गिनौ।
पूज तठैं पिण धरतां पगला,
न सकै रहि तिण ठाम न नौ ॥२॥
राजैं नगर जिणें गच्छराजा,
दे दैंकार घणा तिण देस।

न नौं कोइ मुखैं न लगावैं,
परहौं नासि गयौ परदेस ॥३॥
धरि हिव अरज रतन पाटोधर,
साच कहै धर्मसीह सही।
मांग्यौ देसि आफरती मुंनैं,
ना कारौ तुझ पासि नहीं ॥४॥

नं० (४)

चंद जिम सूरि जिणचंद्र चढती कला,
सोम आकार सुखकार सोहै।
अधिक आणंद उद्योतकारी इला,
महीयले मांनवां मन्न मोहै ॥१॥
आय नर राय जसु पाय लागै अडिग,
देखतां दलिद्र दुख जाय दूरै।
प्रगट जसु पुहवी परताप जागै प्रबल,
पवर गच्छराज सुखसाज पूरै ॥२॥
धरत धर्मवाट मुनि थाट सोभा धरा,
रतन रै पाट गहगाट राजैं।
जुगपरधान जंगम्म तीरथ जगै,
दौलति दिल्ल चढतैं वाजैं ॥३॥
सकल गुण धार सिरदार सोभा सधर,
सबल सौभाग संसार सारै।
धरमवर्द्धन धरैं नाम धन धन रा,
अभिनवौ कल्पतरु एण आरैं ॥४॥

(५) रसाउला

चावौ गच्छ चउरासियै, भट्टारक वडभाग ।
गणधर श्री जिणचंद गुरु, एओ सोभ अथाग ॥१॥

ए अत्थग्गरा, पूजरै पग्गरा,
यात्र वीजग्गरा, आवै उमंगरा ।
साधरै संगरा, अंग उपांगरा,
सूत्र सुचंगरा, भेद अभङ्ग रा ।
गंग तरंग रा, राग नै रंगरा,
पापनै पुण्य रा, दाखवै दिन्न रा ।
संसै आसन्न रा, मेटियै मन रा,
गम्म आगम्म रा, ज्ञान रै गम्म रा ।
आखवै तत्त आगम्म रा,
धोरी श्री जिन ध्रम्म रा ।
पूजतां पाय गुरु प्रम्म रा,
जायै पाप जनम्म रा ॥१॥

(६) सवैया

वाकुं दूजै पछि दूज वंदत है कोऊ एक,
याकौ नित ही नरिंद वंदत अशेष हैं ।
वाकी तो निशा की वेर, अथिर सी जोति होत,
याकै ज्ञान कौ उदोत भानु सौं सुपेख हैं ।

वाकै सब सोल कला, सो भी दिन रैन छीन,
याकै तो छतीस दून, दून रूप रेख हे।
धर्मसी सुबुद्धि धार गुणसौं विचार यार,
चंदसु तो जिणचंद केते ही विशेष हैं ॥१॥

जैंसे राजहंसनिसौं राजै मानसर राज,
जैसै विंध भूधर विराजैं गजराज सौं।
जैसैं सुर राजि सुं जु सोभ सुरराज साजैं,
जैसैं सिंधुराज राजैं सिन्धुनि के साज सौं॥
जैसे तार हरनि के वृन्द सौं विराजैं चंद,
जैसे गिरराज राजै नंद वन राज सौं
जैंसे धर्मशील सौं विराजै गच्छराज तैंसे,
राजैं जिनचंदसूरि संघ के समाज सौं ॥२॥

तैसो ही अनूप रूप भावैं आइ वंदै भूप,
चातुरी वचन कला पूरी पंडिताइ है।
तैसो ही अडिग ध्यांन आगम अगम ज्ञान,
साचो सूरि मंत्र को विधान सुखदाइ है॥
तैंसी है अमल बुद्धि, साची है. वचन सिद्धि,
तैसों गुण जान तैसी सोभा हू सवाइ है।
और ठौर गुण एक तो में सब ही विवेक,
ऐसी जिनचन्दसूरि तेरी अधिकाइ है ॥३॥

जिणचंद यतीश्वर वंदन को,
नर नारि नरेसर आवत है।

वर मादल ताल कंसाल बजावत,
के गुरुके गुण गावत है ॥
बहु मोतीय तन्दुल थाल भरे,
नित सूहव नारि बधावत है।
धर्मसीउ कहैं गच्छराज कुं वंदत,
पुण्य उदैं सुख पावत है ॥४॥

(७) सवैया

छाजति छबि चंदा मुख सुख कंदा
अमल अमंदा अरविंदा।
भाजति भय मुंदा शोभ सुरिंदा,
फेटत फंदा दुख दंदा ॥
दुति जांणि दिणंदा, सेवहि वृंदा,
हाजर वंदा राजिन्दा।
कहै धर्म कविंदा अति आणंदा,
जगति जतिंदा जिणचंदा ॥१॥

शोभत सुखदानी श्री गुरुवाणी,
सकल सुहानी सुनि प्रांणी।
कलि कमल कृपाणी, सिव सहिनाणी,
गुणिजन जाणी हित आंणी ॥
बुधजनहि वखाणी ग्रन्थ लिखाणी,
रस कर सानी दुख हानी।
धर्मसींह सुजानी पुण्यप्रधानी,
कुशल कल्याणी महिमानी ॥२॥

(८) गहुंली

धन धन दिन आज नो लेखै, वलि हरख्या संघ विशेषैं।
अंग उलट धरिय अशेषैं ॥ १ ॥

पाटोधर पाटीयै पधारौ, अम्हची विनती अवधारौ ॥आं०॥

चौपड़ा गणधर कुलचन्द, सहसकरण सुपीयारदे नंद।
खरतर गच्छ अधिक आणंद ॥ २ ॥ पाटो० ॥

सद्गुरु जिनरतनसूरिंद, पाट थप्यौ अभिनव इंद।
चढती कला श्री जिणचंद ॥ ३ ॥ पाटो० ॥

हियडौ नयणां अति हर्षे, दुख जाय परा सहु दरसै।
तुम्ह देखण नै सहु तरसै ॥ ४ ॥ पाटो० ॥

सुणतां उपदेश तुम्हारौ, अति हरख्यौ चित्त अम्हारौ।
तुम्ह दरसण मोहनगारौ ॥ ५ ॥ पाटो० ॥

पूज वंदन नी मन रलीयां, सहु कोइ श्रावक मिलीयां।
दरसण दीठा दुख टलीया ॥ ६ ॥ पाटो० ॥

पूज मूरति मोहन वेल, वलि वांणि सुधारस रेल ॥
पूज चालै गजगति गेल ॥ ७ ॥ पाटो० ॥

मिल मिल सब सूहव आवें, गीत मंगल गहुंली गावै।
वलि तंदुल मोती वधावै ॥ ८ ॥ पाटो० ॥

पूज प्रतपो अधिक पुन्याइ, नित विजयहरष सुखदाइ।
धर्मसी कहै शोभ सवाई ॥ ९ ॥ पाटो० ॥

(६) गुरु गीत

राजैं खरतरगच्छ राजवी, नित नित हो नवलै नूर । रा० ।
जिणचंदसूरीसर जग जयौ, उलसंतै हो पुण्य नै अंकूर ॥१॥
विद्याधर वड वखतावरू, महियलमैं हो महिमा महिमाय ।
राउ राणा मोटा राजीया, पुहवीपति हो लागै जसु पाय ॥रा०२
सहु कुं सुखदायक मुख सोहैं, देखतां हो दुख जायै दूर ॥ रा० ॥
जसु सूरति अति सोहामणी, सोहै सोहै हो श्रीजिनचंदसूर ॥रा०३

चावा जगि गणधर चोपड़ा,
वरदाइ हो जसु वंश विख्यात ॥रा०॥
सुत सोहे सहसासाह नौ,
मतिवंती हो सुपियारदे मात ॥रा० ४॥
श्रीजिनरतनसूरीसरू,
जोग जांणी हो जसु दीधौ पाट ।
जसु जस जागैं इण जगत में,
गावइ गावइ हो गीतां रा गहगाट ॥५॥
गुरू छाजै छतीसे गुणै,
भट्टारक हो जगि मोटै भाग ।
शुद्ध क्रिया नित साचवै,
सगलां में हो जेहनो सोभाग ॥ ६ ॥
श्रीयुगप्रधान यतीश्वरू,
देखतां हो हुवै सफलौ दीह ।
नित विजयहरष वंछित दीयै,
धरि भावै हो गावै धरमसीह ॥७॥

(१०) जिनचंदसूरि गीत

साधु आचार सुविचार सखरी सुमति,
छतीसे गुणे करि जागीयौ वडी छति।
साधियौ सूर मंत्र ग्रही देवां सकति,
साधुपति साधुपति साधुपति साधुपति ॥१॥
धींग धोरी वहै रतन रै पाट धुर,
पाउ धारै तिकै गिणां धन देसपुर।
सुहद्दि जिणरी हुवै जांणि परसन्न सुर,
चंद गुरु चंद गुरु चंद गुरु चद गुरु ॥ २ ॥
तत्त सिद्धान्त रा तेम व्याकरण तरक,
गात्र जिण रो सदा ज्ञान सुधैं गरक।
उदैं गच्छ खरतरैं आज ऊगौ अरक,
भट्टारक भट्टारक भट्टारक भट्टारक ॥ ३ ॥
सूरि जिणचंद श्रीपूज शोभा सधर,
बडा जिनदत्त जिणकुशल जसु दियै धर।
श्री धर्मसी कहै सुजस सगले सखर,
जतीसर जतीसर जतीसर ॥ ४ ॥

नं० ११

थिया केइ दिवस मन कोड़ करतां थकां,
पुण्य करि आज अभिलाष पूगौ।
पूज जिणचंद रा चरण युग पेखतां,
आज सूरज सही भलौ ऊगौ ॥१॥

धन्न धरती जठे पूज पगला धरै,
सहू इम सांभरै देस सारै।
इपि गच्छराज धन आज हुआ अम्हे,
धन्न वलि तरणि जग किरण धारै ॥२॥

वांणि वाखाण री जाण अमृत वदैं,
प्रेम मन धारि परवीण पीवें।
गोत्र गणधार गुणधार भेट्यो गुहिर,
दीपियौ भलौ रवि जगत दीवैं ॥३॥

रतन पटधार वडवार वरतो रिधू,
विंधू धरि मेर ध्रु जाव वरतें।
धरो चिर आउ गच्छराउ धर्मशील धर,
पुहवी किरणाल जां प्रगट परतें ॥४॥

जिन चंद सूरि दोहा

वारू सरब विवेक, इतरौ जाणौ आपथी।
अम्ह नै दीजे एक, रितु परिमाणै रतन उत ॥ १ ॥

(१) जिनसुखसूरिपद महोत्सव

ढाल—चरण करण धर मुनिवर

उदय थयो धन धन आज नो, प्रगट्यौ पुण्य अंकूरो जी।
वंद्या आचारिज चढती कला, नामै जिनसुखसूरोजी ॥१॥
सूरत सहरै जिणचंदसूरि जी, आप्यौ आपणो पाटो जी।
महोत्सव गाजै बाजै मांडिया, गीतां रां गहगाटौ जी ॥२॥

पारिख साह भला पुण्यातमा, सांमीदास सूरदासो जी।
पदठवणो कीधौ मन प्रेमसु, वित्त खरच्या सुविलासो जी ।३।
रूडी विधि कीधा रातीजुगा, साहमीवच्छल सारो जी।
पटकूले कीधी पहिरावणी, सहु संघने श्रीकारो जी ।।४।।
संवत् सतरै बांसठ समै, उच्छव बहु आसाढो जी।
सुदि इग्यारस पद महोत्सव सज्यौ, चंदकला जस चाढो जी ।५
साहिलेचा बहुरा जगि सलहीयै, पींचा नख परसंसो जी ।
मात पिता रूपचंद सरूपदे, तेहने कुल अवतंसोजी ।। ६ ।।
प्रतपो एह घणा जुग गच्छपति, श्रीजिनसुखसूरिंदो जी ।
श्रीधर्मसी कहै श्रीसंघने सदा, अधिक करौ आणंदो जी ।। ७ ।।

(२) कवित्त

सकल गुण जाण वाखाण मुख सरसती,
कलाधर अवर नर मींढ केहौ।
खरें आचार सुविचार जस खरतरे,
जैनसुखसूरि जिनचंद जेहौ ।। १ ।।

सुगुरू निज सूरिमंत्र हाथसु सुंपीयौ,
दीपीयौ दशो दिश सुजस दावौ।
कमल चढ़ती कला देखि सहु को कहै,
चंद पाट दूसरौ चंद चावौ ।। २ ।।

अगम आगम तरक शास्त्र जाणइ अर्थ,
छात्रधर छहुं छक गुणे छाजइ।

तरंण रिखराज जेहाज जिम तारवा,

रतनहर राजहर रीति राजइ ॥ ३ ॥

बडी छति मति उगति जुगति रहणी वडी,

महिपति वड वडा वयण मोहे।

भलें धर्मशील सौभाग्य ल्यें भल भला,

सूरिवर सिहर सुखसूरि सोहे ॥ ४ ॥

(३) जिनसुखसूरि छप्पय

सकल साख्र सिद्धांत भेद विधि विधि रा भाखै।
अवल धरम उपदेश, दुरस दृष्टांते दाखै ॥
वडि पहुंचि व्याकरण तास समवड कुण तोले।
जोडै तरक जुगति बहुत शुद्ध संस्कृत बोले ॥
खरतरे सदा दीसैं खरी, प्रसिद्धि भली पुन्य पूर री।
इकवीस चौक गच्छ में अधिक, सोभा जिनसुखसूरि री ।१।

(४) जिनसुखसूरि अमृतध्वनि

खरतरगच्छ जाणे खलक, सयल गुणे सुसमृद्ध।
शोभा जिनसुखसूरि री, सहु विधि धरा प्रसिद्ध।
चाल—धरा प्रसिद्ध द्धज जस बद्ध,
ध्यान लवद्ध द्धिषणा सुद्ध धीमा बुद्धि,
धुनि धन रुद्ध द्धूण विरुद्ध,
द्धेषन धंध द्धीरज सिद्ध द्धोरी सुद्ध,
द्धौत विरुद्ध द्धंसि कुबुद्धि,
द्धुवत परिद्ध द्धारण निद्ध द्धन गुरू बुद्ध,

द्ध र पद दिद्ध द्धरि हथ सिद्ध,
द्धी गुण गृद्ध द्धरि ततछद्ध द्धाम सुलद्ध,
द्धरणी मद्ध द्धाक प्रसिद्ध,
धूम सी किद्ध ध्वनि अमृत सुविशेष ॥ १ ॥ खरतर०

—:०:—

(५) जिनसुखसूरि चंद्रावला

सहु धरमां सिर सेहरौ रे, श्री जिन धरम सुजाण,
खरतर गच्छ सोभा खरी रे, भट्टारकीया कुलभाण।
कुलभाण रे जाँण वारू किरिया धर्म वखांण,
पूज विराजइ पुण्य प्रमाण, जिनसुखसूरि अखंडित आंण ॥१॥
श्री गच्छनायकजी रे, प्रतपौ वहु जुग पाट,
खाटउ जस खरौजी, वरतौ सुधरम वाट। दाटौ दुख परौजी र
साहलेचा वहुरा सही रे, पुहवी गोत्र प्रसिद्ध ।
रतनादे रूपचंद नउ रे, सुत ए गुणे समृद्धरे।
सुत ए गुणे समृद्ध सार, आणी मन वइराग अपार
संयम जिण लीधौ सुखकार, अधिकै भाव भलइ आचार ॥ ३॥
श्रीजिणचंदसूरिंद जी रे, सैं हथ दीधौ पाट।
महोछव सूरेत मंडिया रे, गीतां रा गहगाट।
गीतां रा गहगाट रे खास, दीपइ पारिख सामीदास।
पदठवणो कीधौ परकास, विलस्या वित्त लीधौ जसवास ।४।
महिमा मोटी महियलै रे, हुआ हरष उच्छाह।
वचन कला बखाण नी रे, वाखाणैं सहु वाह वाह।

वाखाणैं सहु वाह वाह रे लेख, आगम भणिया शास्त्र अशेष,
श्री जिन धर्मशील सुविशेष, राजै श्रीपूज चढती रेख, जी
गच्छना० ॥ ५ ॥

(६) सवैया

गुरू जिणचंद सूरि आप हाथ पाट दीनो,
कीनो है महोछव पुर सूरत सनूर जू।
विलस्यौ वित्त वाह वाह चौरासी गच्छे सराह,
देखैं तें विशेषैं सुख होत दुख दूर जू।
उदैं को अंकुर किधुं पुण्य ही को पूर किधुं,
सूरिमंत्र साधना की सकति हजूर जू।
इंद्रभूति अवतारी साचो धर्मशील धारी,
सबही कुं सुखकारी जैनसुखसूर जू ॥ १ ॥

(७) द्रुपद राग—रामकली (रामगिरी)

जिनसुखसूरि सुज्ञानी, सेवो भवि जिनसुखसूरि सुज्ञानी।
सब गुण लायक श्री गच्छनायक, सुखदायक सुविधानी ॥ १ ॥
चवद विद्या सहु विधि चतुराई, प्रकृति भली पहिचानी।
श्री जिनचंद सुगुरू पद संप्यौ, वरषत अमृत वानी ॥२॥ सेवो०॥
वखत वडै गुरू तखत विराजत, महिमा सब जगि मानी।
शुद्ध क्रिया धर्मशील सु मारग, सब ही बात सयानी ॥३॥ से०॥

(८) द्रुपद—धन्याश्री

गावौ गावौ री गच्छनायक के गुण गावौ।
श्री खरतर गच्छ अधिकी सोभा, चौरासी गच्छ चावोरी। ग०१

धन धन श्री जिनचंद पटोधर, दीपै चढ़तो दावौ।
सकल कला जिनसुखसूरीसर, पग वंद्या सुख पावौ ।गच्छ०।२।
वाणी सूत्र सिद्धान्त वखांणे, विधि सु वंदि वधावौ।
ए गुरू श्री 'धर्मशील' आचारी, सहु में सुजस सुहावौ गच्छ०।।३।।

(९) भास गीत गहुंली

ढाल—मोरो मन मोह्यौ पूज वांदण सौं
भलो दिण उगौ आज आणंद सौं, गुरू वांद्या लाधो ज्ञान ।।
सुणिस्यां उपदेस सुहामणा, धरिस्यां साचउ धर्म ध्यान ।भलो०१
नित करस्यां समकित निरमलौ, निरमल जिम गंगा नीर ।भलो०
तजस्यां संगति निगुणां तणी, सुगणां सुं करिस्यां सीर ।भलो०२।
मिल आवौ सहियां मलपती, सुन्दर करि शुभ सिणगार ।भलो०
गुण गावौ श्री गुरूदेव ना, औ सफल करौ अवतार । भलो०
भगवंत गणधरै भाखिया, सहु सूत्र सुणावइ सार । भलो०
जिन थी शुभ मारग जाणियै, एहवौ जे करै उपगार । भलो०।४
जयणा करियै जीवां तणी, जतने भरिये पग जोई । भलो०
वड़कां रौ वलि कीजै विनय, मन कपट न करिस्यौ कोई ।।५।।
खाटै जस अधिकउ खरतरा, जिण शासन शोभ सुजाण ।भलो०
करणी सखरी पुन्य री करै, भला श्रावक कुल रा भाण ।भ०।।६।।
वरतै दिन दिन हि वधामणा, सहु सुजस करै संसार । भलो०
धर्म हेत उपाध्या धरमसी, श्री संघ सदा सुखकार । भ० ।।७।।

—:※:—

गुरु गहुंली

(२०) ढाल—वेत्रणी आगै थी कहै । ए०

सिणगार सार वणाइ सुन्दर, चुंनडी ओढ़ी सुचंग।
घर हाथ थाल विसाल ले, आवी अति उछरंग।
सहु मिली सहियां गुण गावौ गहुंली गीत ॥ १ ॥
सुगुरू बधावौ सु रीति, पुन्यै धरि बहु प्रीति ॥ सहु० ॥२॥
कस्तुरि केशर कुंकमां, करि रोल भरीय कचोल।
मन रंग मांडै मांडणा, अधिकै भाव इलोल ॥ सहु. ॥३॥
चौकुण चिहु दिशि च्यार चौकी, चौकोर फूलड़ी चंग।
कलीए हंसता कमल ज्यूं, सौहे अति ही सुरंग ॥ सहु० ॥४॥
साथीयो सुन्दर विचैं सोहैं, मोहे सगला मन्न।
संसार इम सफलौ करै, धन अम्मकादे धन्न ॥ सहु० ॥५॥
चोखा अंखडित लेइ चोखा, माहि मोती मेलि।
सुहव बधावै सुगुरू नै, बधती मोहनवेलि ॥ सहु० ॥६॥
नमती करंती निमछना, लुलि लुलि लागै पाय।
सुख विजयहरष लहै सदा, धरमसी कहै धरि भाव ॥सहु० ॥७॥

—:ꕥ:—

(२१) सुगुरु व्याख्यानगीत

ढाल—धर्म जागरीया नी०

सरस बखाण सुगुरू तणो, मन भवियण ना मोहै रे।
सुणिवानैं तरसैं सहु, सकल गुणै करि सोहै रे ॥ सरस०॥ ए।
राग सिधंत तणैं रसै, भेद भलीपर भाखै रे।
मिसरी दूध मिल्यां थकां, चतुर भली पर चाखै रे ॥सरस०॥२॥

प्रकृति जुदी पुण्य पाप नी, बेंतालीस बयासी रे।
सुगुरू कहै समभाय नैं, भगवंते जे भासी रे ॥ सरस० ॥३॥
दस दृष्टान्ते दोहिलौ, श्रावक नौ कुल सारू रे।
संगति वलि सदगुरू तणी, पामी पुण्य प्रकारू रे ॥ सरस०॥४॥
धरम नरम मन जे धरै, भरम करम ना भाजैं रे।
चरम जिणंद कहैं ते चढ़ै, परम मुगति गढ़ पाजै रे ॥सरस०॥५॥
वांणि विविध विचार सुं, प्राणी नै परकासै रे।
जांणी नैं करिस्यै जिकै, वरस्यै मुगति विलासै रे ॥ सरस०॥६॥
इण भवि सुख अधिका लहै, विजयहरष जसवासो रे।
धरम करौ धर्मसी कहै, इण उपदेश उलासो रे ॥ सरस० ॥७॥

(१२) छप्पय—क का बारहखडी पर

करण अधिक कल्याण, काज साधन शुभ कामित।
किलक भाल किरणाल, कीध जिण निर्मल कीरत ॥
कुल दीपक वलि कुशल, क्रूर नहिं मन दृग कूरम।
केवल धर्म केलवण, कैहणिया कैतल भ्रम ॥
कोश गुण रतन को इण समौ, कौटिक गण कौमुदीयवर।
कंज सम मुख कंठ कोकिला, कः्हु जिनसुख जन सुखकः्र।

—०—

श्री जिनभक्तिसूरि गीतम्

ढाल—आषाढै भैरू आवै ए देसी।

'जिनभक्ति' जतीसर वंदौ, चढती कला दीपति चंदौ रे । जि०।
खरतर गच्छ नायक राजै, छत्रीस गुणे करि छाजै रे ।१। जि०।
श्री 'जिनसुख सूरि' सनाथै, दीधौ पद अपणें हाथे रे । जि० ।
श्री 'रिणीपुर' संघ सवायौ, महोछव कीधौ मन भायौ रे ।२ ।
'सेठिया' वंसै सुखदाई, श्री जिन धर्म सोभ सवाई रे । जि० ।
'हरिचंद' पिता धर्मधीरौ, 'हरिसुखदे' उदरै हीरौ रे ।३। जि० ।
लघुवय जिण चारित लीधौ, सद्गुरु नै सुप्रसन्न कीधौ रे ।जि०
विद्या जसु हुइ वरदाइ, पुण्ये गुरु पदवी पाई रे ।४। जि० ।
प्रगटयौ जश देस प्रदेसै, वरते आज्ञा सुविसेसै रे । जि० ।
वांटै सहु देस बधाइ, खरतर गच्छपति सुखदाई । ५ । जि०।
संवत 'सतरै उगुण्यासी, जेष्ठ वदि त्रीज' पुण्य प्रकासी रे ।जि०
सहु सुजस रिणी संघ साध्या, इम कहै 'धर्मसी' उपाध्या रे ।६।

॥ श्रावक करणी ॥

ढाल—हिवराणी पदमावती

श्री जिन शाशन सेहरौ, वंदु जिनवीर ।
देशविरति धर्म उपदिस्यौ, धरे श्रावक धीर ॥१॥
श्रावक नी करणी सुणौ, सद्गुरु कहै सार ।
जे आदरतां जीवड़ौ, पामै भव पार ॥ २ श्रा. ॥

पाछली रात प्रभात रौ, तजि ऊंघ अज्ञांन ।
बे घड़ी एकांत बैसि नै, ध्यावे धर्म ध्यान ॥३॥ श्रा. ॥
उतम कुल हुं उपनौ, पूरबलैं पुन्न ।
जतन करी जिन धर्म नै, राखैं जेम रतन्न ॥४॥ श्रा. ॥
धुरि समकित साचौ धरै, नित गुणै नवकार ।
आदर पर उपकार सुं, वरतें विवहार ॥५॥ श्रा. ॥
करि न सकै तोही करै, मनोरथ मन मांहि ।
व्रत बारै धारै वली, चारित नी चाहि ॥६॥ श्रा
देव जुहारी दिन उदय, गुरु वंदि सुज्ञांन ।
सांभलि उपदेश सूत्रनौ, गिणे धन दिन ज्ञान ॥७॥ श्रा.॥
वांदि कहे देज्यो वलि, भात पाणी लाभ ।
भोजन कीजै भाव सौं, पात्रां पड़िलाभ ॥ श्रा. ॥८॥
पच्चखाण पूगे पारतां, कहे तीन नौकार ।
घर सारू थोड़ौ घणौ, करे पुण्य प्रकार ॥ श्रा. ॥९॥
पाणी छाणे प्रेम सुं, दिन में दोई वार ।
जीवाणी पण जतन सुं, राखैं सुविचार ॥ श्रा. ॥१०॥
पीसण खांडण लीपणै, रांधण रंधाण ।
छै कूटो छःकायनौ, जयणा करे जाण ॥ श्रा. ॥११॥
चक्की चूल्है चंद्रूया, तिम घृत नै तेल ।
ऊघाड़ा राख्यां ईयां, वधै पापनी बेल ॥ श्रा. ॥१२॥
बावीस अभक्ष जे बोलिया, तजें परहा तेह ।
चवदे नेम चितारतां, इण लाभ अछेह ॥ श्रा. ॥१३॥

साहमीवच्छल साचवे, साधुनी करे सेव।
आखड़ी व्रत पचखाण री, टाले नहीं टेव ॥ श्रा. ॥१४॥
कूड़ा कथन रखे करौ, सुंस कूड़ी साख।
थांपण मोसौ मत करे, रिद्धि पारकी राख ॥ श्रा. ॥१५॥
साबू साजी सहित ना, विष ना व्यापार।
पाप विणज टाले परां, जिम होइ जैंवार ॥ श्रा. ॥१६॥
व्यापार शुद्ध करे वली, तिम होइ प्रतीति।
पाप किया ते पड़िक्कमे, अतिचार अनीति ॥ श्रा. ॥१७॥
पांच तिथे टाले परो, अधिकौ आरम्भ।
परहरे निन्दा पारकी, दिल न धरे दम्भ ॥ श्रा. ॥१८॥
पोता री परणी प्रिया, राखे तिण सु रंग।
शील धरे न करे सही, पर स्त्री प्रसंग ॥ श्रा. ॥१९॥
जूवा प्रमुख कह्याजिके, साते कुव्यसन्न।
सेवै न कोई सर्वथा, धरमी ते धन्न ॥ श्रा. ॥ २० ॥
पोसा परबे पाखिए, करे मन नैं कोड़ि।
गुण गाए गुरुदेव ना, हरखे होडा होडि ॥ श्रा. ॥२१॥
सूड़ने दाणवइ गास जो, खड़ौ खेत्र अखंड।
उपदेश न दिये एहवा, दोष अनरथ दंड ॥ श्रा. ॥२२॥
रात्रिभोजन नादरें, इण दोष अपार।
सेजै रात्रि सूवतां, वलि करे चौविहार ॥ श्रा. ॥२३॥
जो सूंतां कोइ जीवनै, जोखो हुय जाय।
तौ पचखाण सहु तणौ, करे मन वच काय ॥ श्रा. ॥२४॥
सहु श्रावक नित साचव, एतो कुल आचार।
धन ते कहै श्री धर्मशी, सुख लहै श्रीकार ॥ श्रा. ।२५।

—:※:०:※:—

शास्त्रीय विचार स्तवन संग्रह

४५ आगम संख्या गर्भित वीर जिन स्तवनम्

देवां ना पिण जेह छै देव, सहु देविंद करै जसु सेव।
ते नमु श्रीदेवाधिज देव, वचन सुणौ तेहना नितमेव ॥१॥

द्यै सहु नैं सुख ए जगदीस, वाणी तेहनी विश्वावीस।
अरूप्या आगम पैंतालीस, संख्या नाम कहुं सुजगीस ॥२॥

श्री आचारांग पहिलौ अंग, सहस अढ़ी ए सूत्र सुचंग।
सुयगडांग बीजौ श्रीकार (सुविचार), संख्या इकवीससे सुविचार ३

तीजौ ठाणा अंग सुपतिट्ठ, सूत्रेसइत्रीससै सतसट्ठि।
चौथो समवायांग सुजाण, सोलेसै सतसठ श्लोक प्रमाण ॥४॥

पंचम भगवती सूत्र सुधन्न, पनर सहस सतसैबावन्न।
ज्ञाता धर्म कथा अंग छट्ठ, हिंवणां पंच हजारे दिट्ठ ॥५॥

सत्तम उपवासग दसासार, बोल्यां अठसै ऊपरि बार।
अट्ठम अंतगड सूत्र कहेउ, श्लोक संख्या आठसै ने नेऊ ॥६॥

नवमौ अंग अणुत्तर उववाय, इकसौ बाणु मानकहाय।
प्रश्नव्याकरण दसमौ परकास, एक सहस दोयसै पंचास ॥७॥

सूत्र विपाके इग्यारम अंग श्लोक बारसै सोलै संग।
अंग इग्यार सूत्र मिले थाय, पैंत्रीस सहस दोइ सै प्राय ॥८॥

ढाल :—सफल संसार नी ॥

बार उपांगमें प्रथम उववाइया, पनरसइ सूत्र परिमाण पिणपाइया।
रायपसेणिया बीय उपांग मैं, दोइहज्जार अठहोत्तर मन गमैं।९।
त्रीय उपांग जीवाभिगम जांणियै, च्यार हजार सौ
सात परिमाणियै ।
चउथ श्रीपनवणा उवंगरकासियै, सात हजार सयसात
सत्यासियै ॥१०॥
पांचमौ जंबूपन्नति सुविसालए, चउसहस एकसौ वलिय छैंतालए।
चंदपन्नतिया छट्ठ वावीस सैं, सत्तम सूरपन्नति संख्या इसै।११।
अट्ठम नाम निरयावली कप्पिया, नवम उवंग इमकप्पवडंसिया।
पुप्फिया दशम इग्यार पुफचूलीया, एम वन्नीदशा बारम
अनुकूलिया ॥१२॥
अट्ठम आदिथी उवंग पांचे मिली, शतक इग्यार संख्या इसी
सांभली ।
बार उपांगनो मेल भेलौ वसै, सहस पच्चीस नैं वलि
सया सातसैं ॥ १३ ॥
मूल सूत्र सौ सवा तेण मिलतौ कह्यौ, विशेषआवश्यक सहस
पांचे लह्यौ ।
दूसरौ मूलसूत्र सातसै दाखियै, दशवियकालिक भव्यजन
भाखियै ॥ १४ ॥
पाखियसूत्र नै मूलसूत्र तीसरौ, तीनसैसाठि संख्या
मतां वीसरौ ।

उत्तराध्ययन दोइ सहस सुविचार ए, मूल सूत्रसहु सवाआठ
हजारए ॥ १५ ॥
सूत्र नंदी सरस जांणियै सातसैं, अनुयोगद्वार उगणीससौ
मन वसैं ।
एतलै ए थया सूत्र गुणत्रीसए, जे वचै नित्य व्याख्यान
सुजगीसए ॥ १६ ॥

ढाल—तंदुल राशि विमलगिरि थापी

छ छेदे महानिसीथ निशीथ, पांच सहस गिणिजै इवीथ ।
वृहत्कलप बीजौ वाखांण, च्यारसै चिहुतर संख्या जाण ॥१७॥
व्यवहार सूत्र छ सै सुविचार, दशाश्रुत स्कंध शत अट्ठार ।
पंचकल्प ते पंचम छेद, सवा इग्यारसै संख्या वेद ॥१८॥
छठौ जीतकल्प इण नाम, इकसौ पांच छ कह्या आम ।
दसे पइन्ना हिव इम दाखै, सूत्ररुची ते हीये राखै ॥१९॥
चउसट्ठि गाह तणो चौसरणौ, धरमी जन नै मनमें धरणौ ।
बीजौ आउर पच्चक्खाण, चउरासी गाथा परिमाण ॥२०॥
तीजौ महा पचखाण कहीस, गाथा इकसौ नइ चौत्रीस ।
चोथौ भत्त परिण्णा चाह, इकसौं नै इकहोत्तर गाह ॥२१॥
पंचम पयन्नो तंदुलबेयाली, च्यारसै गाह भली तिहां भाली ।
छट्ठो चन्दाविज्जा गाह, इकसौनै छिहुतरि अवगाह ॥२२॥
गणविज्जा ए सत्तम गणियैं, भाव भलै सौ गाथा भणियैं ।
मरणसमाहि अट्ठम पयन्न, गाहा जिहां छस्सै छप्पन्न ॥२३॥

देवेंद त्थुय नवमौ होइ, दाखौ तिहां गाथा सय दोइ ।।
दशम संथारपयन्न सवासौ, दसे सतावीससै परकासौ ।।२४।
अंग इग्यार नै उपांग बार, मूल सूत्र चउ नंदि अणुयोगद्वार ।
छ छेद दश पयन्ना मेलीस, ए सूत्र आगम पैंतालीस ।।२५।।
सूत्र पैंतालीस आगम संख्या, सहस अठ्यौत्तर सातसैं कांक्षा ।
आज ऊनाधिक प्रायै एह, तंत तौ केवलि जांणै तेह ।।२६।।
सूत्र निजुत्ति चुर्णि नै टीका, एहना बहु विस्तार अजीका ।
छलख गुणचालीस सहस्सा, पांचसै छत्तीस जांण रहस्सा ।२७।

कलसः—इमइणै भरतै आज वरतै, भव्य जीव जिके सही ।
आसता आणी तत्व जाणी, वीर वाणी सरदही ।।
त्रिहुतरै जेसलमेर नगरै, विजयहर्ष विशेष ए ।
धरमसी पाठक तवन कीधौ. दुरस पुस्तक देख ए ।।२८।।

२४ जिन गणधर साधु साध्वी संख्या गर्भित स्तवन

आदीसर पहलो अरिहंत, गणधर चौरासी गुणवंत ।
प्रणमुं सहस चौरासी साध, साध्वी त्रिणलाख गुणे अगाध ।१।
अजितनाथ बीजो मन आणु, प्रणमीजै गणधर पंचाणु ।
साहू इकलख वंदौ भवियां, त्रिण लख वीस सहस साधवीयां ।२
हिव संभव जिन तीजो होय, गणधर एकसो नै वलि दोय ।
दुइ लख साहु साहुणी सार, तीन लाख छतीस हजार ।३।
अभिनंदन चोथो जिनराय, गणधर एकसौ सोल कहाय ।
तीन लाख मुनि संख्या भाख, आर्या तीस सहस छः लाख ।४।

ढाल—चौपईनी

पांचम सुविधि जिनेसर सेव, सौ गणधर ध्यावो नित मेव ।
तीस सहस तीन लाख मुनीस, साध्वी पंचलख सहसे तीस ।५।

पद्मप्रभु प्रणमुं परभात, गणधर जेहने एक सो सात ।
त्रिण लक्ष तीस सहस अणगार, साहुणी चउलख वीस हजार ।६।

श्री सुपास जिणवर सातमो, नित गणधर पंचागुं नमो ।
लाख तीन मुनि सूत्रे साख, साध्वी तीन सहस चौ लाख ।७।

अठ्ठम जिन चंदप्रभु नाम, गणधर त्र्याणु गुण गण धाम ।
लाख अढ़ी मुनि वंदो भवी, चौलख सहस असी साधवी ।८।

ढाल २ हेम घड्यो रतने जड्यो खुंपो, एहनी ।

नवमो सुवधि अठ्यासी गणधर मुनि लख दोइ ।
साधवी त्रिण लाख वीस हजारे अधिकी होइ ।
सीतल दसम इठ्यासी गणधर मुनि लख एक ।
साहुणी पिण इक लख हीज अधिकी छए विवेक । ९ ।

सहस चौरासी मुनि इग्यारम श्रेयांस सार ।
छिहुतर गणधर साहुणी इग लख तीन हजार ।
वासुपुज्य जिन बारम जसु छासठि गणधार ।
इक लख साहुणि बहुतर सहस कह्या अणगार । १० ।

साहु अडसठ सहस, सतावन गणधर जाण,
तेरम विमल अज्जा लख उपर आठसें आण ।

चवदम सामि अनंत पचास कह्या गणराय,
छासठ साधनें बासठ साधवी सहसे मिलाय । ११ ।

पनरम धरम तयालीस गणि चौसठ हजार,
साहु साहुणी बासठ सहस अनें सय चार ।
बासठ सहस जतीस छतीस गणाधिप संति ।
सोलम अज्जा इगसठि सहस छसै वलि तंत । १२ ।

ढाल ३ पुरंदर नी ।

साठ सहस मुनि पेतीस गणधर सतरम कुंथु ।
साध्वी साठ हजार ने छसै बोली ग्रन्थ ।
तेत्रीस गणधर अट्ठारम अरि पूरे आस ।
साध्वी साठ हजारे साहु सहस पंचास । १३ ।

मल्लिनाथ उगणीसम साहु सहस चालीस ।
साहुणी सहस पंचावन, गणधर अट्ठावीस ।
वीसम मुनिसुव्रत जसु साधु तीस हजार ।
सहस पचासे साध्वी गणधर जास अढ़ार । १४ ।

इकवीसम नमिनाथ नमुं सतरे गणईस ।
वीस सहस मुनि साध्वी सहसे इगतालीस ।
नेमिनाथ बावीसम साहु सहस अठार ।
साध्वी सहस चालीसे गणधर जास इग्यार । १५ ।

सोल सहस साहु तेवीसम पास जिणेस ।
दश गणधर साहुणी अठतीस हजार गिणेस ।

चौवीसम वर्द्धमान नमु गणधार इग्यार ।
चवदे सहस जतीस, साहुणी छतीस हजार । १६ ।
चौवीस जिनना चौदहसे बावन गणधर एम ।
साहु अठावीस लाख सहस अडतालीस तेम ।
साधवी लाख चमालीस सहस छयालीस सार ।
च्यार से उपरि छए धडै ए संख्याधार । १७ ।
किणहीक सूत्रें ओछा अधिका कह्या अणगार ।
तेपिण चौवीसां ना पूरा नहिं अधिकार ।
श्री आवश्यक सूत्रें पूरा सहु सुविचार ।
तिणथी संख्या जाणी वंदु वारंवार । १८ ।

कलसः

इम सतरे से तेपने वरसें दीप परव सुदीसए ।
श्री नगर बीकानेर अधिका विजयहर्ष जंगीसए ।
धर्मध्यान मन धरि कहे पाठक धरमसी नितमेवए ।
चौवीस जिन धन राज जेहने ध्याइयें धर्म देवए । १६ ।

चौवीस जिन अंतर काल, देहायु स्तवन

पंचपरमेष्टि मन शुद्ध प्रणमीकरी,
धरमहित आगम अर्थ हीयडे धरी ।
कहिस चौवीस जिन जिन तणो आंतरो,
आउ थित देह परिमाण मत पांतरो ।१।

प्रथमही सुखम सुखमा आरो जाणए,
च्यार कोडा कोडि सागर परिमाणए ।

कोस त्रिण्ह देह त्रिणपल्ल आयु धारए,
तीय दिनै तूअर परमाण आहारए ।२।

त्रिण कोडा कोडि सागर सुखम बीय अरो,
देह दो कोस दोई पल्ल आयु धरो।
बोर परिमाण आहार बीजे दिनै,
युगलीया मानवी एह कहिया जिणै ।३।

दोइ कोडाकोडि सुखम दुःखमा कह्यो,
कोस इक काय इक पल्ल आयु लह्यो।
आंमलामान आहार लै दिन प्रतै,
काल कर जुगलीया पोहचै सुरगतै ।४।

ढालः वीर जिणेसरनी ।

तिण तीजे अरै तीन वरस साढा अठ मास,
शेष रह्या श्री आदिदेव पहुंता सिववास ।
चौरासी पुव्वलाख वर्ष पाल्यो जिण आयु,
पांचसै धनुष प्रमाण काय राजे जगराय । ५।

आदि थकी पंचास कोड लख सागर हेव,
हुयो अजित जिणेसरु ए बीजो जिण देव ।
साढ़ी च्यारसैं धनुष देह दीपै गुणगेह,
बहुतर पूर्व लाख वर्ष आउखो एह । ६ ।

अजित थकी त्रीस कोड लाख सागर गया जाम,
तीजो तीर्थंकर हुवो ए संभव शुभ नाम ।

च्यार सै धनुष सरीर मान धार्यो जिणधीर,
साठ पूर्व लख वर्ष आयु पाल्यो बड़ वीर। ७।

संभव थी दस कोड लाख सागर परमाणे,
चोथो अभिनंदन जिणंद महिमा जग जाणे।

ऊंच पणे जसु देह धनुष तीनसे पंचास,
आयु पचास पूर्व लख वर्ष पाल्यो सुखवास। ८।

हिव नव कोडिय लाख जलधि पूरा जब बीता,
पंचम जिणवर सुमतिनाथ हुवा सुमति वदीता।

तीनसै धनुष सरीर तास शुभ वर्ण सुवास,
चालीस पूरव लाख वर्ष आऊखो जास। ९।

सागर नेऊ कोडि सहस हिव वीता जाम,
पद्मप्रभु छठो जिणेसरु ए हुओ गुण धाम।

अढ़ाईसे धनुष मान काया अभिराम,
तीस पूर्व लख आयु पालि पहुता सिवठाम। १०।

ढालः—बेकर जोडी ताम, एहनी

हिव नव सहस कोडे सागर हुआ सही,
श्री सुपास जिणेसर सातमो ए।

दुइ सैं धनुषां देह वीस पूरव लख,
आयुथिति नितही नमो ए। ११।

हुआ सागर हेव नवसों कोडीय, दौढ़से धनुष देही धरु ए।
दस पूर्व लख आयु आठम जिनवर, श्रीचन्द्रप्रभु सुखकरु ए।१२।

सुविधिनाथ सुखकार नवमो जिनवर नेऊ कोडि सागरे ए।
आउ पूर्व लख दोइ, सो धनुषां तनु पाल्यो जिण पूरी परैं ए १३

नीरधि हिव नव कोडि सुवधि जिणेसथी,
शीतल दशमो जिन सही ए।
एक पूर्व लख आव धनुष नेऊ धर काया ऊंच पणै कहीए। १४।

सौ निध छासठ लाख छाबीस सहस वरस
ऊणै इक कोडि सागरु ए।
तिण अवसर श्रेयांस अंग धनुष असी
वरस चौरासीलख धरुए। १५।

जिनवर बारम जाण, चोपन सागरैं वासुपूज्य जिण वंदीये ए।
सत्तरि धनुष सरीर, अति सुख आउखो,
बहुत्तर लाख वर्ष लियें ए। १६।

ढाल:—इण पुर कंबल कोइ न लेसी, एहनी

तिण जिन थी हिव सायर तीस, विमलनाथ तेरम जिन ईस।
साठ धनुष काया सु प्रमाण, वर्ष साठ लख आयु वखाण। १७।

हिव नव सायर केरैं अन्त, चवदम जिनवर थयो अनंत।
पूरी काया धनुष पचास, तीन वर्षा लख आयुष तास। १८।

एह थकी चिहु सागर आगै, पनरम धर्म जिणेसर जागें।
पैंतालीस धनुष्य जसु देह, आउष दस लख वर्ष धरेह। १९।

पल्ल त्रिभाग विना त्रिक सागर, सोलम शांतिजिणंद सुखाकर।
चालीस धनुष प्रमाणे काय, एक लाख वरसां नौ आय। २०।

एण थकी पल्योपम आधै, समरूं सतरम कुंथुं समाधै।
पामी देह धनुष पैंतीस, आयु पचाणु सहस वरीस। २१।
वर्ष एक कोडि सहस विहीन, चोथो भाग पल्योपम कीन।
त्रीस धनु अरि जिन अट्ठारम, आयु वर्ष चौरासी हजारम। २२।
वर्ष हुआ इक कोडि हजार, उगणीसम मल्लि जिन अवतार,
तनु पचवीस धनुष नो तास, पचपन सहस वर्ष भववास। २३।
बोल्या हिव वछर पूरा चोपन लाख,
सामी मुनिसुव्रत हुआ सूत्रे साख।
वन्दो वीसम जिन वीस धनुष तनु मान,
तीस सहसे वर्षे पाल्यो आयु प्रधान। २४।
हिव षट् लख वर्षे हुआ श्री नमिनाथ,
तनु पनरैं धनुष मित सेवो सिवपुर साथ।
दस सहस वर्ष जिण पाल्यो आयु पडूर,
इकवीसम जिनवर अरचो सुख अंकूर। २५।
पंच लाखे पूरे बीते वर्षे वंद,
बावीसम बहु गुण नेमीसर जिण इन्द।
यादव कुल जगचक्ष दीपें दस धणु देह,
आयु थिति पाली एक सहस वरषेह। २६।
हिव सहस त्रयासी सात शतक पंचास,
वर्षे त्रेवीसम परगट जिणवर पास।
नव हाथ प्रमाणे अंग सुरंग सुरेह,
पूरो जिण पाल्यो आयु सो वरसेह। २७।

इण थकी अढीसे वर्ष श्री महावीर,

बहुतर वर्षायुष साते हाथ सरीर।

इम सहु बेतालीस सहस वर्ष उणेह,

इक कोडि कोडि सागर आदि थी एह। २८।

कलसः—इम अरें तीजे आदि जिणवर, अवर चोथे एमए।

चौवीस जिणवर चितचोखे प्रणमीये बहु प्रेमए।

पुररिणी सतरैंसे पचीसै प्रगट पर्व पजूसणै,

वाचक्क विजयहर्ष सानिध धर्मसी मुनि इम भणे।२६।

६८ भेद अल्पबहुत्व विचार गर्भित स्तवन

वीर जिणेसर वंदिये, उपगारी अरिहंत।

आगम ए जिण उपदिस्या, एओ ज्ञान अनंत ॥१॥

भला अठाणुं भेदसों, बोल्या अलप बहुत्त।

जिणमें भमियो जीवड़ो, ते सहु वात तहत्ति ॥२॥

ढाल : सफल संसारनी।

सहु थकी अलप नर गर्भज जाणिये (१)

एहनी नारि संख्यात गुण आणिये (२)

अगनि असंख्यात गुण पज्जत बादरा, (३)

एहथी गुण असंख्यात अनुत्तर सुरा (४) ॥३॥

उपरिम (५) मध्य (६) अधत्रिक त्रिक (७) देवता,

अच्युत (८) आरण (९) प्राणत (१०) आनता (११)

एह संख्यात गुण जाणिज्यो अनुक्रमा।

सातमीनरक (१२) असंख्यात गुणइमतमा(१३)।४।

हिव सहस्रार (१४) शुक्र (१५) पंचम नेरया (१६)
लांतक (१७) चतुर्थीनर्क (१८) ब्रह्मदेवया (१९)
तीय, पृथ्वीय (२०) माहेन्द्र (२१) असंखगुणा,
सनतकुमार (२२) बीयनिरय अनुक्रम घणा (२३),
ठाम चौवीसमी मनुष्य संमूर्च्छिमा, (२४)
देवईशान असंख गुण निभ्रमा (२५) । ६ ।

देवी ईशानरी (२६) सुधर्मसुरजिके (२७)
तेहनी, त्रीय संख्यात गुणीयैं तिके (२८) । ६ ।
भवणवइदेव असंख्यात (२९) देवी संख्या बहु (३०)
प्रथमनारकि असंखेय गुणीया सबहु (३१)
बोल बतीसमें खेचर पंचेन्द्रिया,
तिरिय असंख्यात गुणा(३२) संख्य एहनीत्रिया(३३)।७।

ढाल : तिण अवसर कोइ मागध आयो पुरंदर पास ।

थलचर तिरिय पुरष(३४) त्री(३५) जलचरिमिथुन (३६-३७) लहेस,
व्यतर देवनें (३८) देवीय (३९) ज्योतिषी युगम(४० ।४१)कहेस ।
खचरतिरी(४२)थलचर(४३)जलचरय(४४)नपुंसक जेह ।
अनुक्रमैं एह इग्यार संख्यात गुणा करि लेह ॥ ८ ॥

वलि परजापति चोरिन्दी संख्यात गुणेह (४५)
पज्जत संज्ञि पंचेन्द्रि विशेषे अधिका तेह (४६)
पज्जवइन्द्रि (४७) पज्जतेइन्द्रि विशेष (४८) विशेष
अडतासीस ए बोल कह्या अनुक्रम गिण देख ।९।

पंचेन्द्रि अपज्जत असंखगुणा ए जाण (४६)
चोरिन्द्रि तेइन्द्रि (५१) बेइन्द्रि (५२) अपज विशेष वखाण ।
प्रत्येक वनस्पतिय(५३)निगोद(५४)पृथ्वी(५५) अप(५६)वाय(५७)
बादर परजापत पांच असंख गुणाय ॥१०॥

हिवअपज्जत्ता बादर अग्नि अठावनेबोल (५८)
एहवा हीज वनस्पति असंखगुणी इणतोल (५६)
वलिय निगोद(६०)पुढ़वी(६१)अप(६२)वाय(६३) एच्यारे जाण ।
बादर अपजत्ता असंख्यात गुणा परिमाण ।११।

इहांथी सुक्ष्मअपज्जत अगनि असंख गुणेह (६४)
भू (६५) जल(६६)पवन (६७) इसाज विशेष धरेह ।
अड़सट्ठिमो इहां सूक्ष्म पज्जत तेउ गिणेस (६८)
पुढ़वी (६६) अप्प ने (७०) वायु (७१) पज्जता सुक्ष्म विशेष ।१२।

ढाल—बेकर जोडी ताम राहनी ।

बहुतरमें हिव बोल सूक्ष्म अपज्जत, जीव निगोदे जाणिवाए, (७२)
असंख्यात गुण एहएहथी पज्जत संख्याते गुण आणवाए (७३)।१३।
अनंतगुणा अधिकार इहांथी आगले भव्य अनंत गुणा सहीए(७४)
ए चिहुतरमो समकित नहीं लहै, मोक्ष कदे लहिस्ये नहीए ।१४।
समकित पतितने(७५)सिद्ध(७६)अनंतागुणा,एलेखवल्यौ अनुक्रमेए।
बादर रूप पज्जत वनस्पतितणा(७७) जीव अनंत गुणा भमैए।१५।

सामान्यरुपे सर्वबादर पज्जत, जीव विशेषाधिक कह्यौए, (७८)
वणबादर अपज्जत असंखगुणा इहां, ठाम गुण्यासीमें लह्योए।१६।
अपज्जत बादर जीव (८०) वलि बादरसहु,
(८१) अधिका अधिक विशेषथीए।
सुहम अपज्ज वणस्स असंख्यगुणा इम, सुण बयासी सांसौ नथीए१७
अपज्जत सुहम विशेष(८३)सूक्ष्मपज्जती वनस्पतिअसंखीगुणैए(८४)
इण चौरासी बोल इहांथी आगले सर्व विशेषाधिक पणैए। १८।
सुक्ष्म पज्जत्ता जाण (८५) सूखम सहु गिणौ (८६) भव्य सत्यासी
में भणौए (८७)। जाणौ जीवनिगोद (८८) वलियवनस्पती (८६)
एकेन्द्रि अधिकागिणौ ए (६०)। १६।

जाणौ तृयंचजाति (६१) इक्काणु इहां मिथ्यादृष्टिबांणमोए (६२)
अविरत जीव अवशेष (६३)-सकसाइ सहु, (६४) चावौ भेद
चौराणुमो ए। २०।

मानोहिव छद्मस्थ (६५) सर्व सयोगीय (६६) भववासी भणियै
सहुए(६७)। जीवजिता सहु जाणं एह अठाणुमो, बोल विवेककरो
बहुए (६८) ।२१।

कलस :—

इम वीर वाणी सुणो प्राणी सूत्र पन्नवणा थकी ।
ए भेद आण्या जिणे जाण्या तियै सिद्ध वधू तकी।
सुख विजयहर्ष विशेष श्रीसंघ धर्म शील भला धरे ।
जेसाणगढ़ में तवन जोड़्यो संवत सतरे बहुत्तरै। २२।

इति अल्पबहुत्व-विचार गर्भित श्रीमहावीर स्तवनम्

चौवीस दण्डक स्तवन

ढाल—आदर जीव क्षमा गुण आदर

पूर मनोरथ पास जिनेसर, एह करूं अरदास जी।
तारण तरण विरुद तुझ सांभलि, आयो हुं धरि आस जी।१।पू०

इण संसार समुद्र अथागें, भमियो भवजल मांहि जी।
गिलगिचिया जिम आयो गिड़तौ, साहिब हाथे साहिजी।२।पू०

तुं ज्ञानी तो पिण तुझ आगै, वीतग कहिये बात जी।
चौवीसे दंडके हुं फिरीयो, वरणु तेह विख्यात जी॥ ३ ॥ पू०

साते नरक तणो इक दंडक, असुरादिक दस जाण जी।
पांच थावर नें त्रिणि विकलेंद्रि, उगणीस गिणती आण जी। ४।

पंचेंद्रि तिरजंच नै मानव, एह थया इकवीस जी।
विंतर जोतिषी नै वैमानिक, इम दंडक चौवीस जी॥५॥पू०

पंचिंद्री तिरजंच अने नर, परजापता जे होइ जी।
ए चउविह देवां मांहे ऊपजै, इम देवै गति दोइ जी॥ ६ ॥ पू०

असंख्यात आउखें नर तिरि, निसचै देवज थाय जी।
निज आऊखा सम कि ओछे, पिण अधिकै नवि जाय जी॥७॥

भवणपती कै विंतर तांई, संमूरछिम तिरजंच जी।
सरग आठमें तांइ पहुंचे, गरभज सुकृत संच जी ॥ ८ ॥ पू०

आऊ संख्याते जें गरभज, नर तिरजंच विवेक जी।
बादर पृथिवी ने वलि पाणी, वनसपती परतेक जी॥ ९ ॥ ०पू

परजापते इण पांचे ठामे, आवी उपजै देव जी।
इण पांचा माहें पिण आगे, अधिकाई कहुं हेव जी ॥ १० ॥ पू०
तीजा सरग थकी मांडी सुर, एकेंद्रि नवि थाय जी।
अठम थी ऊपरला सगला, मानव मांहि ज जाय जी ॥ ११ ॥

ढाल—आज निहेजो दीसें नाहलो

नरक तणी गति आगति इणपरें, जीव भमें संसार।
दोइ गति नें दोइ आगति जाणिये, वलिय विशेष विचार ॥१२॥
संख्यातैं आऊ परजापता, पंचेंद्री तिरजंच।
तिमहिज मनुष्य बे हिज ए, नरकमें जाये पाप प्रपंच ॥ १३ ॥
प्रथम नरक लगि जाइ असन्नीयौ, गोह नकुल तिम वीय
गृध्र प्रमुख पंखी त्रीजी लगै, सींह प्रमुख चौथीय ॥ १४ ॥
पांचमी नरके सीमा सांपनी, छट्ठी लगि स्त्री जाय।
सातमीयें माणस के माछला, उपजे गरभज आय ॥ १५ ॥
नरक थकी आवें बिहुं दंडके, तिरजंच कै नर थाय।
ते पिण गरभज तें परजापता, संख्याती जसु आय ॥ १६ ॥
नारकियां नै नरक थी नीसरयां, जेफल प्रापति होय।
उत्कृष्टे भांगे करते कहुं, पिण निश्चै नहीं कोय ॥ १७ ॥
प्रथम नरक थी उवटि चक्रवृति हुवै, बीजी हरि बलदेव।
त्रीजी लगि तीरथंकर पद लहै, चौथी केवल एव ॥ १८ ॥
पंचम नरक नो सरवविरति लहै, छट्ठी देसविरत्ति।
सत्तम नरक थी समकित हिज लहै, न हुवै अधिक निमित्त १६

ढाल—करम परीक्षा करण कुमर चल्योरे।

मानव गति बिण मुगति हुवै नहीं रे, एहनौ इम अधिकार।
आऊ संख्यातें नर सहु दंडके रे, आवी लहै अवतार ॥ २० ॥

तेऊ वाऊ दंडक बे तजी रे, बीजा जे बावीस ।
तिहां थी आया थावै मानवी रे, सुख दुख पुण्य सरीस ।२१।
नर तिरजंच असंखी आउखें रे, सातमी नरक ना तेम ।
तिहां थी मरि नें मनुष हुवे नहीं रे, अरिहंत भाख्यौ एम ।२२।
वासुदेव बलदेव तथा वली रे, चक्रवरति अरिहंत ।
सरग नरक ना आया ए हुवै रे, नर तिरि थी न हुवंत ।।२३।।
चौविह देव थकी चवि ऊपजें रे, चक्रवरति बलदेव ।
वासुदेव तीर्थंकर ते हुवै रे, वैमानिक थी बेव ।।२४।।

ढाल—हेम घड्यो रतने जड्यो खुंपो,

हिव तिरजंच तणी गति आगति कहय अशेष ।
जीव भम्यो इण परि भव मांहे करम विशेष ।।
आउ संख्याती जे नर नै तिरजंच विचार ।
ते सगला तिरजंचां मांहै लहै अवतार ।।२५।।
जिण तिरजंचां माहें आवे नारक देव ।
तेह कह्यौ पहिली तिण कारण न कहुं हेव ।।
पंचेंद्रि तिरजंच संख्यातें आऊखै जेह ।
तेह मरी चिहुंगति मांहे जावै इहां न संदेह ।।२६।।
थावर पांच त्रिणें विकलिंदी आठे कहावे ।
तिहां थी आऊ संख्याती नर तिरजंच में आवैं ।।
विकल मरी लहै सरवविरति पिण मोख न पावें ।
तेउ वाउ थी आयौ तेह नै समकित नावै ।।२७।।
नारक वरजी ने सगलाई जीव संसारै ।
पृथिवी आऊ वनसपति मांहे लहै अवतारै ।।

ए तीनें उवटी इहांथी आवै दस ठामें ।
थावर विकल तिरी नर मांहे उतपति पामै ॥२७॥
पृथिवीकाय आदे देई दश दंडक एह ।
तेऊ वाऊ मांहे आवी ऊपजै तेह ॥
मनुष विना नव मांहे तेऊ वाऊ वे जावै ।
विकलिंदी ते दश मांहि जावै पूठा ही आवै ॥२८॥
एम अनादि तणौ मिथ्याती जीव एकंत ।
वनसपति मांहे तिहां रहियो काल अनंत ॥
पुढवी पाणी अगनि अनै चौथो वलि वाय ।
कालचक्र असंख्याता तांई जीव रहाय ॥२९॥
बेइंदी तेरिंदीने चोरेन्दी मझारें ।
संख्याता वरसां लगि रहियौ करम प्रकारै ॥
सात आठ भव लगतां नर तिरजंच में रहियौ ।
हिव मानव भव लहिनै साधनो वेष में गहियौ ॥३०॥
रागद्वेष छूटै नहीं किम ह्वै छूटक बार ।
पिण छै मन सुध माहरै तुं हिज एक आधार ॥
तारणतरण मैं त्रिकरण शुद्धं अरिहंत लाधौ ।
हिव संसार घणों भमिवौतौ पुदगल आधौ ॥३१॥
तूं मन वंछित पूरण आपद चूरण सामी ।
ताहरी सेव लही तौ मै हिव नव निधि पामी ॥
अवर न कोई इच्छुं इण भवि तूंहिज देव ।
सूधें मन इक ताहरीं होज्यो भव भव सेव ॥३२॥

॥ कलश ॥

इम सकल सुखकर नगर जेसलमेर महिमा दिण दिणै ।
संवत्त सत्तरै उगणतीसै दिवस दीवाली तणै ॥
गुण विमलचंद समान वाचक विजयहरष सुशीस ए ।
श्री पासना गुण एम गावै धरमसी सुजगीस ए ॥३३॥

श्री समवशरण विचार स्तवनम्

॥ दोहा ॥

श्री जिन शासन सेहरौ, जग गुरू पास जिणिंद ।
प्रणमै जेहना पद कमल, आवी चौसठि इंद ॥ १ ॥
तीर्थंकर आवै तिहां, त्रिगढौ करय तयार ।
समकित करणी साचवै, एह कहुं अधिकार ॥ २ ॥
करै प्रशंसा समकिती, मिथ्यात्वी ह्वै मूक ।
सूर्य देखि हरखै सहू, घणै अंधारै घूक ॥ ३ ॥

ढाल (१) वीर वखाणी राणी चेलणा जी

आप अरिहंत भले आविया जी, गावै अपछरह गंधर्व ।
समवशरण रचे सुरवरा जी, संखेपे ते कहुं सर्व । आ० ॥ ४ ॥
भवनपती इन्द्र वीसे मिल्या जी, सोल दू विंतर सार ।
जोइस दु दस विमाणी जुड्या जी, चउसट्ठि इन्द्र सुविचार ।५।
पवन सुर पुंजी परमारजी जी, भूमि योजन सम भाउ ।
मेघकुमार रचि मेघनै जी, करय सुगंध छड़काउ । आ० ॥ ६ ॥
अगर कपूर शुभ धूपणा जी, करय श्री अगनिकुमार ।
बाणविंतर हिव वेग सुं जी, रचय मणि पीठिका सार ॥ ७ ॥
पुहप पंच वरण ऊरध मुखे जी, वरषए जाणु परिमाण ।
भवणवइ देव त्रिगढो भलो जी, करय ते सुणहु सुजाण ॥ ८ ॥
रचय गढ प्रथम रूपा तणौ जी, सोवन कांगुरे सार ।
रवि शशि रयण कोसीसके जी, कनक कौ बीय प्राकार ॥ ९ ॥

रतन गढ रतन रै कांगुरैं जी, रचय वेमाण सुर राज ।
भलो त्रीजो गढ भीतरे जी, तिहां विराजै जिनराज ॥आ१० ॥
भींति ऊंची धणु पांचसैं जी, सवा तेत्रीस विसतार ।
धनुष सैं तेर गढ अंतरौ जी, प्रोलि पंचास धनु च्यार ॥ ११ ॥
दश पंच पंच त्रिहुं गढ तणी जी, पावड़ी वीस हजार ।
थाक श्रम नहिंय चढतां थकां जी, एक कर उच्च विस्तार ॥१२॥
पंच धणु सहस पृथ्वी थकी जी, उच्च रहै त्रिगढ आकास ।
तेह तलि सहु यथास्थित वसे जी, नगर आराम आवास ॥१३॥
तोरण त्रिक चिहुं दिसि तिहां जी, नीलमणि मोर निरमाण ।
दुसय धणु मध्य मणिपीठिका जी, उच्च जिण देह परिमाण ।१४।
च्यार आसण तिहां चिहुं दिसि जी, मोतीए भाक भमाल ।
सम विचैं कूण ईसाणमें जी, देवछंदो सुविशाल ॥आ० ॥१५॥
देव दुंदुभि नाद उपदिसें जी, जिण गुण गावसी जेह ।
अम्ह जिम आइ सहु ऊपरै जी, गाजसी तेह गुण गेह ॥ १६ ॥

ढाल (२) सफल संसार नी

पुव्व दिसि आसणै आइ बैसैं पहू, सुरकृत चौमुख रूप देखै सहू ।
दीपै अशोक तरु बार गुण देह थी,
देखि हरखै सहु मोर जिमं मेह थी ॥ १७ ॥
मोतियां जाल त्रिण छत्र सुविसाल ए,
रूप चिहुं दिसै चामर ढाल ए ।
योजन गामिणी वाणि जिणवर तणी,
भगवंत उपदिशै बार परषद भणी ॥ १८ ॥

प्रदिक्षणा रूप थी अगनि कूणें करी,
गणधर साधवी तिम विमाणी सुरी।
ज्योतिषी भुवणिनी विंतरी त्री पणै,
नैऋत कूण जिण वाणि ऊभी सुणै ॥ १६ ॥
त्रिहुं तणा पति वायु कूण में जाण ए,
सुर विमाणीय नर नारि ईसाण ए।
वार परिषद मद मच्छर छोड़ ए,
भूख तृष वीसरैं सुणैं कर जोड़ ए ॥ २० ॥
पूठि भामंडल तेज परकास ए,
जोयण सहस धज ऊंच आकास ए।
झलहलै तेज धर्मचक्र गगने सही,
महक सहु बारणै धूप धाणा मही ॥ २१ ॥
वाहण वहिल सहि धरिय पहिलै गढै,
होइ पगचार नर नारि ऊंचा चढै।
जिण तणी वाणि सुणि जीव तिरजंच ए,
वैर तजि बीय गढ रहै सुख संच ए ॥ २२ ॥
पुण्यवंत पुरुष ते परिषद बारमै,
सुणै जिण वाणि धन गिणय अवतार मैं।
चौवहि देव जिणदेव सेवा रसे,
मणिमयी मांहिली प्रोलि मांहे बसै ॥ २३ ॥
चिहुं दिसि वाटुली वावि चौ जाणियै,
विदिसि चौकूणी दोइ दोइ वाखाणीयै।

आवि जिहां वावि जल अमृत जेम ए,
स्नान पानै वपू निरमल हेम ए ॥ २४ ॥
जय विजया अपराजि जयंतिया,
मध्य कंचणगढै प्रोलि वसंतिया ।
तुंबुर पुरुष षट्टंग अर्चिमाल ए,
रजत गढ प्रोलि ना एह रखपाल ए ॥ २५ ॥
पहिल त्रिगढौ न हुअ जिण पुर ग्राम ए,
देव महर्धिक रचैं तिण ठाम ए ।
करण वार वार कारण नहिं कोइ ए,
आठ प्रातिहारज ते सही होइ ए ॥ २६ ॥
जिन समवशरण नी ऋद्धि दीठी जीए,
तेह धन धन्न अवतार पायो तिए ।
पास अरदास सुणि वंछित पूरज्यो,
हिव मुझ ताहरौ शुद्ध दरसण हुज्यो ॥ २७ ॥

॥ कलश ॥

इम समवशरणै रिद्धि वरणै सहू जिणवर सारिखी ।
सरदहै ते लहै शुद्ध समकित परम जिनध्रम पारिखी ॥
प्रकरण सिद्धंत गुरु परंपर सुणी सहु अधिकार ए ।
संस्तव्यौ पास जिणंद पाठक धरमवरधन धार ए ॥ २८ ॥

—:❀:—

चौदह गुणस्थानक स्तवन

ढाल—थंभणपुर श्री, एहनी

सुमति जिणंद सुमति दातार, वंदु मन सुध वारो वार,
आणी भाव अपार ।
चवदै गुणथानक सुविचार, कहिसु सूत्र अरथ मन धार,
पावै जिण भव पार ॥१॥

प्रथम मिथ्यात कह्यौ गुणठाणौ, बीजौ सासादन मन आणौ,
तीजो मिश्र बखाणो ।
चौथो अविरति नाम कहाणौ, देशविरति पंचम परमाणौ,
छट्ठौ प्रमत पिछाणौ ॥२॥

अप्रमत्त सत्तम सलहीजै, अठम अपूरब करणकहीजै,
अनिवृत्ति नाम नवम्म ।
सूषम लौभ दशम सुविचार, उपशांतमोह नाम इग्यार,
खीणमोह बारम्म ॥ ३ ॥

तेरम सयोगी गुणधाम, चवदम थयौ अयौगी नाम,
वरणु प्रथम विचार ।
कुगुरु कुदेव कुधर्म वखाणै, ते लक्षण मिथ्या गुण ठाणैं,
तेहना पंच प्रकार ॥ ४ ॥

ढाल—२ सफल संसारनी

जेह एकांत नय पक्ष थापी रहै,
प्रथम एकांत मिथ्यामती ते कहै ।
ग्रंथ ऊथापि थापै कुमति आपणी,
कहै विपरीत मिथ्यामती ते भणी ॥ ५ ॥
शैव जिनदेव गुरु सहु नमै सारिखा,
तृतीय ते विनय मिथ्यामती पारिखा ।
सूत्र नवि सरदहै रहै विकलप घणै,
संशयी नाम मिथ्यात चौथो भणै ॥ ६ ॥
समझि नहिं काइ निज धंध रातो रहैं,
एह अज्ञान मिथ्यात पंचम कहै ।
एह अनादि अनंत अभव्य नै,
कहय अनादि थिति अंत सु भव्य नै ॥७॥
जेम नर खीर घृत खंड जिमनै वमैं,
सरस रस पाइ वलि स्वाद कंहवौ गमे ।
चउथ पंचम छठै ठाण चढि नै पड़ै,
किणही कषाय वसि आइ पहिलै अड़ै ॥८॥
रहै विचै एक समयादि षट आवली,
सहिय सासादनें थिति इसी सांभली ।
हिव इहां मिश्र गुणठाण त्रीजो कहै,
जेह उत्कृष्ट अंतरमहूरत लहै ॥ ६ ॥

ढाल—३ बेकर जोड़ी ताम एहनी

पहिला च्यार कषाय शम करि समकिती,
　　कैंतों सादि मिथ्यामती ए।
ए बे हिज लहै मिश्र सत्य असत्य जिहां
　　सरदहणा बेहुं छती ए ॥ १० ॥
मिश्र गुणालय मांहि मरण लहै नहीं
　　आउ बंध न पड़ै नवै ए।
कैंतो लहि मिथ्यात के समकित लही,
　　मति सरिखी गति परिभवै ए ॥ ११ ॥
च्यार अप्रत्याख्यान उदय करी लहै,
　　व्रत विण सुध समकित पणौ ए।
ते अविरत गुणठाण तेत्रीस सागर,
　　साधिक थिति एहनी भणौ ए ॥ १२ ॥
दया उपशम संवेग निरवेद आसता, समकित गुण पांचे धरै ए।
सहु जिन वचन प्रमाण जिनशासन तणी,
　　अधिक अधिक उन्नति करै ए ॥ १३ ॥
केइक समकित पाय पुदगल अरध तां, उत्कृष्टा भव में रहै ए।
केइक भेदी गंठि अंतरमहूरतै, चढतै गुण शिवपद लहै ए ॥१४॥
च्यार कषाय प्रथम्म त्रिणवली मोहनी, मिथ्या मिश्र सम्यक्तनी ए।
साते परकृति जास परही उपशमै,
　　ते उपशम समकित धनी ए ॥ १५ ॥

जिण साते क्षय कीध ते नर क्षायिकी,
तिणहिज भव शिव अनुसरै ए।
आगलि बांध्यो आय तौ ते तिहां थकी,
तीजै चौथे भव तरें ए॥ १६॥

ढाल—४ इण पुर कंबल कोई न लेसी

पंचम देश विरति गुणथान, प्रगटै चौकड़ी प्रत्याख्यान।
जेण तजै बावीस अभक्ष्य, पाम्यौ श्रावकपणौ प्रत्यक्ष॥१७॥
गुण इकवीस तिके पिणधारै, साचा बारै व्रत संभारै।
पूजादिक षट कारिज साधै, इग्यारै प्रतिमा आराधै॥१८॥
आरत रौद्रध्यान ह्वै मंद, आयौ मध्य धरम आनंद।
आठ वरस ऊणी पुव कोड़ि, पंचम गुणठाणै थिति जोड़ि॥१६॥
हिव आगै साते गुणथान, इक इक अंतरमहूरत मान।
पांच प्रमाद वसै जिण ठाम, तेण प्रमत्त छट्ठौ गुण धाम॥२०॥
थिवरकलप जिनकलप आचार, साधै षट आवश्यक सार।
उद्यत चौथा च्यार कषाय, तेण प्रमत्त गुणठाण कहाय॥२१॥
सूधौ राखै चित्त समाधै, धर्म ध्यान एकान्त आराधै।
जिहां प्रमाद क्रिया विधि नासै, अपरमत्त सत्तम गुण भासै।२२।

ढाल—५ नदि जमुना के तीर, एहनी

पहलै अंशै अट्ठम गुणठाणा तणै, आरंभै दोइ श्रेणि संखेपै ते भणै।
उपशम श्रेणि चढै जे नर ह्वै उपशमी,
क्षपक श्रेणि क्षायक्क प्रकृति दशक्षय गमी।२३।

जिहां चढता परिणाम अपूरब गुण लहै,
अट्ठम नाम अपूर्व करण तिणै कहै ।
शुक्लध्यान नौ पहिलो पायो आदरै,
निर्मल मन परिणाम अडिग ध्याने धरै ।२४।
हिव अनिवृति करण नवमो गुण जाणियै
जिहां भावथिर रूप निवृति न आणीयै ।
क्रोध मान नै माया संजलणा हणै,
उदय नहीं जिहां वेद अवेद पणो तिणै ।२५।
तिहां रहै सूषम लोभ कांइक शिव अभिलषै,
ते सूखमसंपराय दशम पंडित दखै ।
शांतमोह इण नाम इग्यारम गुण कहै,
मोह प्रकृति जिणठाम सहु उपशम लहै ।२६।
श्रेणि चढ्यौ जौ काल करै किणही परै,
तो थाये अहमिंद्र अवरगति नादरै ।
च्यार वार समश्रेणि लहै संसार में,
एक भवैं दोइ वार अधिक न हुवै किमै ।२७।
चढि इग्यारम सीम शमी पहिलै पड़ै,
मोह उदय उत्कृष्ट अर्ध पुद्गल रडैं ।
खिपक श्रेणि इग्यारम गुणठाणौ नहीं,
दशम थकी बारम्म चढै ध्याने रही ।२८।

ढाल—६ इक दिन कोई मागध आयो पुरंदर पास

खीणमोह नामैं गुणठाणौ बारम जाण,
मोह खपायै नैड़ो आयौ केवलनाण।
प्रगटपणै जिहां चारित अमल यथा आख्यात,
हिव आगै तेरम गुणथान तणी कहै वात।२६।
घातीया चौकड़ीक्षय गई रहीय अघाती एम,
प्रकृति पच्यासी जेहनी जूना कप्पड़ जेम।
दरसण ज्ञान वीरिज सुख चारित पांच अनंत,
केवलनाण प्रगट थयौ विचरैं श्री भगवंत।३०।
देखैं लोक अलोकनी छानी परगट बात,
महिमावंत अढारह दूषण रहित विख्यात।
आठे वरसे ऊण कही इक पूरब कोड़ि,
उत्कृष्टी तेरम गुणथान तणी थिति जोड़ि।३१।
रकि शैलेसी करण निरुंध्या मन वच काय,
तेण अयोगीअंत समै सहु करम खपाय।
पांचे लघु अक्षर ऊचरतां जेहनौ मान,
पंचमगति पामै सुखसुं चवदम गुणथान।३२।
तीजै बारमै तेरमै माहे न मरे कोई,
पहिलौ बीजौ चौथौ परभव साथै होइ।
नारक देव नी गति में लाभै पहिला च्यार,
धुरला पंच तिरिय में मणुए सर्व विचार।३३।

॥ कलश ॥

इम नगर बाहड़मेर मंडण, सुमति जिन सुपसाउलै।
गुणठाण चवद विचार वरण्यो, भेदि आगम नै भलै॥
संवत सतरै उगुणत्रीसै, श्रावण बदि एकादशी।
वाचक्क विजयहरक्ख सानिधि, कहै इम मुनि धरमसी॥३४॥

चौरासी आशातना स्तवन

ढाल—विलसै ऋद्धि समृद्धि मिली ।

जय जय जिण पास जगत्र धणी, शोभा ताहरी संसार सुणी ।
आयो हुं पिण धरि आस घणी, करिवा सेवा तुम्ह चरण तणी १
धन जन जे न पड़ै जंजालै, उपयोग सु बेसि जिन आलै ।
आसातन चौरासी टालै, शाश्वत सुख तेहिज संभालै ॥ २ ॥
जे नांखें सलेषम जिनहर में, कलहउ करें गाली जूअ रमै ।
धनुषादि कला सीखण ढुकै, कुरलौ तंबोल भखै थूकै ॥ ३ ॥
सरै वाय वडी लघु नीति तणी, संज्ञा कंगुलिया दोष सुणी ।
नख केस समारण रुधिर क्रिया, चांदी नी नांखै चांवड़िया ।४।
दांतण नै षमन पियैं कावौ, खावइ धाणी फूली खावौ ।
सूवे वीसामणि विसरामैं, अजगज पसु नइ दामण दांमें ॥ ५ ॥
सिर नासा कान दशन आंखैं, नख गाल वपुस ना मल नांखै ।
मिलणौ लेखौ करइ मंतरणौ, विहचण अपणौ करि धन धरणौ ।६।
बैसे पग ऊपरि पग चडियां, थापै छाणा छड़े ढुंढणियां ।
सुकवइ कप्पड़ कप्पड़ वड़ियां, नासीय छिपइ नृपभय पड़ियां॥७॥
शोके रोवै विकथाज कहै, इहां संख्या बैंतालीस लहें ।
हथियार घड़ै नै पशु बांधै, तापै नाणौ परिखैं रांधइ ॥ ८ ॥
भांजी निसही जिनगृह पेंसइ, धरि छत्र नें मंडप में बइसें ।
हथियार धरै पहिरै पनही, चांवर बीजै मन ठाम नहीं ॥ ९ ॥
तनु तेल सचित फल फूल लिये, भूषण तजि आप कुरूप थियै ।
दरसणथी सिर अंजलि न धरइ, इग साडें उतरासंग करै ॥१०॥

छोगौ सिरपेच मउड़ जोड़ै, दड़िए रमै नइ बहसें होड़ैं ।
सयणां सु जुहार करै मुजरौ, करें भांड चेष्टा कहै वचन बुरौ ११

धरें धरणु झगड़ैं उल्लंठी, सिर गुंथै बांधैं पालंठी ।
पसारइ पग पहिरइ चाखड़ियां, पग झटकि दिरावै दुड़बडियां १२

कग्दम लूहै मैथुन मंडै, जूंआं वलि अइंठि तिहां छंडै ।
ऊघाड़ै गूझ कर वइदां, काढै व्यापार तणी केंदां ॥ १३ ॥

जिनहर परनाल नौ नीर धरइ, अंघोलै पीवा ठाम भरै ।
दूषण जिण भवण में ए दाख्या, देव वंदण भाष्य में जे भाख्या १४

सुज्ञानी श्रावक सगति छतां, आसातन टालें बार सतां ।
परमाद वसैं कांइ थायै, आलोयां दोष सहू जायै ॥ १५ ॥

तंबोल नै भोजन पान जुआ, मल मूत्र शयन स्त्री भोग हुआ ।
थूकण पनही ए जवन दसे, वरज्या जिन मंदिर मांहि वसै ।१६।

द्रव्यत नै भावित दोइ पूजा, एहना हिज भेद कह्या दूजा ।
सेवा प्रभु नी मन शुद्ध करै, वंछित सुख लीला तेह वरै ॥ १७॥

॥ कलश ॥

इम भव्य प्राणी भाव आणी, विवेकी शुभ वातना ।
जिन बिंब अरचइ परी वरजइ चौरासी आसातना ॥
ते गोत्र तीर्थंकर ज अरजें नमइ जेहनइ केवली ।
उवझाय श्री ध्रमसीह वंदै जैन शासन ते वली ॥ १८ ॥

अट्ठावीस लब्धि स्तवन

॥ दोहा ॥

प्रणमं प्रथम जिणेसरू, शुद्ध मनै सुखकार,
लबधि अट्ठावीस जिण कही, आगम नै अधिकार ॥१॥
प्रश्नव्याकरणै प्रगट, भगवति सूत्र मझार,
पन्नवणा आवश्यकैं, वारू लबधि विचार ॥२॥
अमल तपै करि ऊपनै, लबधां अट्ठावीस,
ए हिव परगट अरथ सुं, सांभलिज्यो सुजगीस ॥३॥

ढाल १ सफल संसार नी।

अनुक्रमे हेव अधिकार गाथा तणै,
लबधि ना नाम परिणाम सरिखा भणै।
रोग सहु जाय-जसु अंग फरस्यां सही,
प्रथम ते नाम छै लबधि आमोसही ॥४॥
जास मलमूत्र औषध समा जाणियै,
वीय विप्पोसही लबधि वखाणियें।
श्लेषमा औषध सारिखौ जेहनौ,
त्रीजी खेलोसही नाम छै तेहनौ ॥५॥
देहना मैल थी कोढ दूरे हवै,
चौथी जल्लोसही नाम तेहनो चवै।
केस नख रोम सहु अंग फरसें लही,
रहै नहीं रोग सव्वोसही ते कही ॥६॥

एक इन्द्रिय करी पांच इन्द्रियतणा,
भेद जाणै तिका नाम संभिन्नणा ।
वस्तु रूपी सहु जाणियै जिण करी,
सातमी लबधि ते अवधिज्ञाने धरी ॥७॥

ढाल २ आव्यौ तिहां नरहर, एहनी

हिव आंगुल अढीये ऊणो माणुष खित्त,
संगन्या पंचेंद्री तिहां जे वसय विचित्त,
तसु मन नौ चिंतित जाणै थूल प्रकार,
ते ऋजुमति नामै अट्ठम लबधि विचार ॥८॥
संपूरण मानुष खेत्रैं संज्ञावंत,
पंचेन्द्रिय जे छै तसु मन वातां तंत ।
सूषम परिजायें जाणै सहु परिणाम,
ए नवमी कहियै विपुलमती शुभ नाम ॥९॥
जिण लबधि परमाणै ऊडी जाय आकास,
ते जंघा विद्याचारण लबधि प्रकास ।
जसु वचन सरापै खिण में खेरु थाय,
ए लबधि इग्यारमी आसी विस कहवाय ॥१०॥
सहु सूखम बादर देखै लोक अलोक,
ते केवल लबधी बारमीयें सहु थोक ।
गणधर पद लहियै तेरम लबधि प्रमाण,
चवदम लबधें करि चवदह पूरब जाण ॥ ११ ॥

तीर्थंकर पदवी पामै पनरम लद्धि,
सोलम सुखकारी चक्रवर्त्ति पद रिद्धि ।
बलदेव तणौ पद लहीयें सतरम सार,
अड्ढारम आखां वासुदेव विसतार ॥ १२ ॥
मिश्री घृत खीरें मिल्यां जेह सवाद,
एहवी लहै वाणी उगणीसम परसाद ।
भणियौ नवि भूलै सूत्र अरथ सुविचार,
ते कुठ्ठग बुद्धी वीसम लबधि विचार ॥ १३ ॥
एकें पद भणियै आवै पद लख कोड़ि,
इकवीसम लबधी पायाणुसारणी जोड़ि ।
एकें अरथें करि उपजै अरथ अनेक,
बावीसमी कहियै बीज बुद्धि सुविवेक ॥ १४ ॥

ढाल (३) कपूर हुवै अति ऊजलो रे

सोलह देश तणी सही रे, दाहक सकति बखाण ।
तेह लबधि तेवीसमी रे, तेज्यो लेश्या जाण ॥ १५ ॥
चतुर नर सुणिज्यो ए सुविचार, आगम नै अधिकार ।च०।
चवद पूरबधर मुनिवरू रे, ऊपजतां संदेह ।
रूप नवौ रचि मोकलै रे, लबधि आहारक एह । च० ॥ १६ ॥
तेजो लेश्या अगनि में रे, उपशमिवा जलधार ।
मोटी लबधि पचीसमी रे, शीतल लेश्या सार । च० ॥ १७ ॥

जेण सकति सुं विकुरवें रे, विविध प्रकारे रूप ।
सदगुर कहै छावीसमी रे, वैक्रिय लवधि अनूप ।च०॥१८॥

एकणि पात्रे आदमी रे, जीमीवै केई लाख ।
तेह अखीण महाणसी रे, सत्तावीसम साख ॥च०॥१६॥

चूरे सेन चक्रीसनी रे, संघादिक नै काम
तेह पुलाक लवधि कही रे, अट्ठावीसम नाम ॥च०॥२०॥

तेज शीत लेश्या बिन्हे रे, तेम पुलाक विचार ।
भगवती सूत्र में भाखियौ रे, ए त्रिहुं नो अधिकार ॥च०॥२१॥

चक्रवर्ति बलदेव नी रे, वासुदेव त्रिण एह ।
आवश्यक सूत्रें अछै रे, नहीय इहां संदेह ॥च०॥२२॥

पन्नवणा आहार गी रे, कलपसूत्र गणधार ।
तीन तीन इक मिली रे, बारू आठ विचार ॥च०॥२३॥

प्रश्नव्याकरणें कही रे, बाकी लवधां वीस ।
सांभलतां सुख ऊपजें रे, दौलति ह्वै निसदीस ॥च०॥२४॥

॥ कलश ॥

संवत्त सतरै सै छवीसै मेर तेरसि दिन भलैं ।
श्री नगर सुखकर लूणकरणसर आदि जिण सुपसाउलैं
वाचनाचरिज सुगुरू सानिधि विजयहरष विलास ए
कहै धर्मवर्द्धन तवन भणतां प्रगट ज्ञान प्रकास ए ॥२५॥

—:०:—

आलोयणा स्तवन

ढाल (१) सफल संसार नी

ए धन शासन वीर जिनवर तणौ,
जास परसाद उपगार थायै घणौ ।
सूत्र सिद्धांत गुरमुख थकी सांभली,
लहिय समकित्त नें विरति लहियै वली ॥१॥
धर्म नो ध्यान धरि तप जप खप करै,
जिण थकी जीव संसार सागर तरै ।
दोष लागा गुरू मुखहि आलोईयै,
जीव निर्मल हुवै वस्त्र जिम धोईयै ॥२॥
दोष लागै तिकौ च्यार परकार ना,
धुर थकी नाम ने अरथ ते धारणा ।
किणहि कारण वसै पाप जे कीजीयै,
प्रथम ते नाम संकप्प कहीजियै ॥३॥
कीजीयै जेह कंदर्प्प प्रमुखे करी,
दोष ते बीय परमाद संज्ञा धरी ।
कूदतां गरबतां होई हिंसा जिहां,
दर्प्प इण नाम करि दोष तीजौ तिहां ॥४॥
विणसतां जीव नै गिनर न करै जिको,
चौथौ उट्टीआ दोष ऊपजै तिको ।
अनुक्रमै च्यार ए अधिक इक एकथी,
दोष धरि प्रायचित लेइ विवेकथी ॥५॥

ढाल (२) अन्य दिवस को० एहनो

पाटी कमली नवकरवाली पोथी जोइ,
ज्ञान ना उपग्रण तणीय आसातन कीधी होइ।
जघन्य थी पुरमढ एकासण आंबिल उपवास,
अनुक्रम एह आलोयण सुगुरु बताई तास ॥६॥

एजो खंडित थाये अथवा किहां ही गमाइ,
तौ वलि नव्या करायां दोष सहू मिट जाइ।
थापना अण पड़िलेह्यां पुरमढ तो तपधार,
खिरतां एकासण ते गमतां चौथ विचार ॥७॥

दर्शन ना अतिचार तिहां परमड्ढ जघन्न,
एकासण आंबिल अट्ठिम चिहुं भेदे मन्न।
आसातन गुरुदेवनी साहमी सु अप्रीति,
जघन्य एकासण थी आलोयण चढती रीति ॥ ८ ॥

अनंतकाय आरंभ विनास्यां चौथ प्रसिद्ध,
बि ति चौरिन्द्री त्रसायां एकासण थी वृद्धि।
बहु बि ति चौरिंदीय हण्यां बि ति चौ उपवास,
संकल्पादि चिहुं विधि दुगुणा दुगुण प्रकास ॥ ६ ॥

उद्देही कुलियावड़ा कीड़ीनगरा भंग,
बहु जलोयां मूंक्या दस दस उपवास प्रसंग।
वमन विरेचन कृमि पातन आंबिल इक एक,
जीवाणी ढोलंतां दो उपवास विवेक ॥ १० ॥

संकप्पादिक एक पंचिंद्री उपद्रव होइ,
दोइ त्रिण आठ दसे उपवास आलोयण जोइ।
बहु पंचिदि उपद्रव पट अठ नें दस वीस,
चिहुं परकारे चढती आलोयण सुणि सीस ॥ ११ ॥

पंचेन्द्री ने दीधे लकड़ी प्रमुख प्रहार,
एकासण आंबिल उपवास ने छट्ठ विचार।
साध समक्षै लोक समक्षै राज समक्ष,
कूड़ौ आल दीयां दुइ चौ पट चौथ प्रत्यक्ष ॥ १२ ॥

दस उपवास दंडायां तेम मरायां वीस,
इक लख असीय सहस नवकार गुणौ तजि रीस।
पख चौमास लगि इक त्रिणदस उपवास,
अधिकौ क्रोध करंतो आलोयण नहिं तास ॥ १३ ॥

सूआवड़ि ना दोष कीयां वलि थापण मोस,
बोल्यां वलि उत्सूत्र कीयां गुरु ऊपर रोस।
करीय दुवालस वार हजार गुणै नवकार,
मिच्छादुक्कड़ देई आलावौ वार वार ॥ १४ ॥

ढाल (३) बेकर जोड़ी ताम, एहनी

विण कीधां पचखाण विण दीधां वांदणां,
पड़िकमणै विधि पांतरै ए।
अणोझा नै असिझाय तिहां अवधे भण्या,
इक इक आंबिल आचरै ए ॥ १५ ॥

गंठसी नें एकत्त निव्वी आंबिल,
भंगे आलोयण इमैं ए ।
एक पांच षट आठ नवकरवालीय,
गुण नवकार अनुक्रमैं ए ॥ १६ ॥
उपवास भंग उपवास आंबिल ऊपरा,
अधिको दंड वखाणीयै ए ।
पांचमि आठमि आदि भंग कियां वलि,
फिर ग्रहे पातक हाणीयै ए ॥ १७ ॥
ऊखल मूसल आगि चूल्हौ घरटीय,
दीधै अट्ठिम तप करै ए ।
मांगी सूई दीध कातरणी छुरी,
आंबिल चढता आदरै ए ॥ १८ ॥
जीव करावै जुद्ध रात्रि भोजन,
जल तरणै खेलण जूऔ ए ।
पाप तणौ उपदेस परद्रोह चींतव्या,
उपवास इक इक जूजूऔ ए ॥ १९ ॥
पनरै करमादान नियम करी भंग,
मद्य मांस माखण भख्या ए ।
आलोयण उपवास संकप्पादिक,
चिहुं भेदे चढता लिख्या ए ॥ २० ॥
बोल्या मिरषावाद अदत्तादान त्युं,
जघन्य एकासण जाणियै ए ।
अति उत्कृष्टी एण जाणि आलोयणा,
उपवास दस दस आणियै ए ॥ २१ ॥

ढाल (४) सुगुरा सनेही मेरे लाला, एहनी

चौथे व्रत भागें अतिचार, जघन्ये छठ आलोयण धार ।
मध्ये दस उपवास विचार, उत्कृष्टें गुणि लख नवकार ।। २२ ।।
परिग्रह विरमण दोष प्रसंग, तीन गुण वृत मांहे भंग ।
च्यार शिक्षावृत रे अतिचारै, आंबिल त्रिण प्रत्येके धारे ।२३।
शील तणी नव वाड़ि कहाय, तिहां जौ लागौ दोष जणाय ।
त्रिय नै फरस हुआं अविवेकै, इक आंबिल कीजें प्रत्येके ।।२४।।
साध अनै श्रावक पोषीध, एकेन्द्री संघट्टें कीध ।
वीसर भोल सचित जल पीध, दंड एकासण अंबिल दीध ।२५।
विण धोये विण लूह्ये पात्रै, एकासण तिम पुरिमढ मात्रै ।
गई मुहपोती आंबिल सारौ, तिम ओघै अट्टिम अवधारौ ।२६।
च्यार आगार छ छीडी राखै, वृत पचखाण करै षट साखैं ।
दोषे मिच्छादुक्कड़ दाखै, आलोयण तेह नै अभिलाषै ।।२७।।
आलोयण ना अति विस्तार, पूरा कहतां नावै पार ।
तौ पिण संखेपे ततसार, निर्मल मन करतां निसतार ।। २८ ।।
धन श्री वीर जिणेसर सामी, जसु आगम बचने विधि पामी ।
जीत कलप ठाणा अंग आदि, वलिय परंपर गुरु परसादि ।२९।

॥ कलश ॥

इम जेह धरमी चित्त विरमी पाप आप आलोइ नै
एकांत पूछै गुरू बतावै सकति वय तसु जोइ नै
विधि एह करसी तेह तरसी धरमवंत तणै धुरै
ए तवन श्री ध्रमसीह कीधौ चौपनें फलवधिपुरै ।। ३० ।।

—o—

वीस विहरमान जिनस्तवनम्

वंदु मन सुध वइरत माण जिणेसर वीस,
दीप अढी में दीपै जयवंता जगदीस,
केवलज्ञान ने धारै तारै करि उपगार,
किण किण ठामै कुण कुण जिन कहिस्यु सुविचार ।१।
पैंतालीस लख योजन मानुष क्षेत्र प्रमाण,
वलयाकारै आधै पुष्कर सीमा जाण,
दोइ समुद्र सोहै दीप अढाई सार,
तिण में पनरै कर्माभूमि नो अधिकार ।२।
पहिलौ जंबूद्वीप समइ विचि थाल आकार,
लांबउ पिहलउ इक लख जोइण नें विस्तार,
मोटो तेहनै मध्य सुदरसण नामै मेर,
तिण थी दस विदिसानी गिणती च्यारे फेर ।।३।।
मेरु थकी दक्षिण दिशि एह भरत शुभ क्षेत्र,
पांचसै छवीस जोयण छकला तेहनो वेत्र,
उत्तर खंड में एहवो इरवइ खेत कहाय,
इण बिहुं करमाभूमि अरा छए फिरता जाय ।।४।।
तेत्रीस सहस छसय चौरासी जोयण जाण,
च्यार कलाए महाविदेह विषंभ वखाण,
भरत थी चौगुणों इक एक विजय तणो परिमाण
एहवी विजय बत्तीस विराजै जेहनै ठाण ।।५।।

मेरु विचै करि पूरब पच्छिम दोइ विभाग,
सोलह सोलह विजय तिहां विचरै वीतग राग,
सासतै चौथे आरे तारै श्री अरिहंत,
एहवै महाविदेह करमभूमि त्रीजी तंत ॥६॥

पूरब विदेह विजय पुखलावती आठमी ठाम,
पुंडरीकणी नगरी तिहां श्री सीमंधर स्वाम;
वप्र विजय पच्चीसमी विजयापुर नौ नाम,
पच्छिम विदेह बीजौ युगमंधर कीजै प्रणाम ॥७॥

तिम हिज नवमी वच्छ विजय वलि पूरव विदेह,
नयर सुसीमा त्रीजो बाहु नमुं धरि नेह,
नलिनावर्त्त चउवीसमी पच्छिम विदेह वखाण,
वीतशोका नयरी तिहां चौथौ सुबाहु सुजाण ॥८॥

ए च्यारेई जिणवर जंबूद्वीप मझार,
महाविदेह सुदर्शन मेरु तणै परकार;
एहवौ जंबूद्वीप महागढ जेम गिरिंद,
खाई रूपै दोइ लख जोयण लवण समंद ॥९॥

ढाल २ दीवाली दिन आवीयउ, एहनी

दीपइ बीजउ दीप ए, धन धन धातकी खंड ।
पिहुलौ चिहुं लख जोयणे, मंडल रूपै मंड ॥१०॥दी०॥

पूरब पच्छिम धातकी, खंड गिणीजै दोइ ।
विजय मेरु पूरब दिसै, पच्छिम अचलमेरु जोइ ॥११॥दी०॥

दोइ भरत दोइ ईरवें, दोइ वलि महाविदेह ।
करमभूमि षट छै इहां, उणहीज नामै एह ॥१२॥दी०॥
दीप इक इक मेरु नै आसरैं, करमभूमि तीन तीन ।
निज निज मेरु थी मांडिनै, लेखो चिहुंदिसि लीन ॥१३॥दी०॥
श्रीसुजात जिण पांचमौ, छट्ठउ स्वयंप्रभु ईस ।
ऋषभानन जिन सातमौ, समरीजैं निसि दीस ॥१४॥दी०॥
अनंतवीरिज जिण आठमौ, एच्यारे जिनराय ।
पूरब धातकीखंड में, महाविदेह रहाय ॥१५॥दी०॥
पहिला चिहुं जिण नी परइ, विजय नगर दिसि ठाण ।
तिणहीज नामें अनुक्रमै, विजय मेरु अहिनाण ॥१६॥दी०॥
नवमौ शूरप्रभ नमुं, दशमो देव विशाल ।
इम वज्रधर इग्यारमो, त्रिकरण प्रणमुं त्रिकाल ॥१७॥दी०॥
बारमौ चंद्रानन जिन, पच्छिम धातकी मांहि ।
विचरै च्यारे जिणवरा अचल मेर उच्छाह ॥१८॥दी०॥
एहवौ धातकीखंड ए, परिदखिणा परकार ।
अठ लख जोयण वीटीयौ, समुद्र कालोदधि सार ॥१९॥दी०॥

ढाल (३)

कालोदधि नै पैलै पार ए, वींट्यउ चूड़ी जेम विचार ए ।
सोलै लख जोयण विस्तार ए, दीप पुक्खरवर अति सुखकार ए ॥
सुखकार पुष्कर दीप तीजौ, तेहनैं आधै वगै ।
विचि पड्यो परवत मानुषोत्तर, मनुषक्षेत्र तिहां लगै ॥

तिण आध करि अठ लाख जोयण, अरध पुष्कर एम ए।
तिहां करमभूमि छए कहीजै, धातकीखंड जेम ए ॥२०॥

आधै पुष्कर में पूरब दिसै, मंदर नामै मेरु तिहां वसैं।
पच्छिम विज्जूमाली मेरु ए, इहां किण इतरौ नामै फेर ए॥
फेर ए इतरौ इहां नामै, अवर ठामै को नहीं।
इक एक मेरैं तीन तीने, करमभूमि तिहां कही॥
तिम भरत ईरवतइ विदेहे, नाम सिरखें हेत ए।
तिणहीज नामै विजय सगली, सासता ध्रम खेत ए ॥२१॥

धातकी खंडै तिम पुष्कर सही, इण क्षेत्रां नो मान कह्यौ नहीं।
दुगुणा दुगुणै अति विस्तार ए, शास्त्र थकी लेज्यो सुविचार ए॥
सुविचार वाकी तेह सगलौ नगर तिमहिज मन गमै।
पूरबै पच्छिम जेह जिणदिसि, तेह तिमहिज अनुक्रमें॥
श्री चंद्रबाहु भुजंग ईसर, नेमि च्यार तिथंकरा।
पूरबै पुष्कर अरध मांहे, सरब जीव सुखकरा ॥२२॥

वइरसेन वंदूं जिन सतरमो, श्रीमहाभद्र अठारम नित नमो।
देवजसा उगणीसमौ देव ए, जसोरिद्धि वीसम जिन सेव ए॥
जिन सेव च्यारे अर्ध पुष्कर, मांहि पच्छिम भाग ए।
तिहां मेर विज्जूमाल चिहुं दिसि, विचरता वीतराग ए॥
चउरासी पूरब लाख वरसां, आउ इक इक जिन तणौ।
पांचसै धनुष शरीर सोहै, सोवन वर्ण सोहामणौ ॥ २३ ॥

काल जघन्ये इम जिण वीस ए, हिव उत्कृष्टै भेद कहीस ए।
इकसौ सित्तरि तिहां जिणवर कहै, पांचे भरते जिण पांचे लहै।

जिण लहै पांचे, तेम पांचे ईरवै मिलि दश हुआ ।
इक इक विदेह बतीस विजया, तिहां पिण जिण जुजुआ ।।
एक सौ सित्तरि एम जिणवर, कोड़ि नव वलि केवली ।
नव कोड़ि सहसे अवर मुनिवर, वंदिये नित ते वली ।। २४ ।।

इहां भरते ईरवते आज ए, पंचम आरै नहिं जिनराज ए ।
धन धन पांचे महाविदेह ए, विचरै वीसे जिन गुण गेह ए ।।
गुण गेह दोष अढार वर्जित, अतिशया चौतीस ए ।
चउसट्ठि इंद नरिंद सेवित, नमूं ते निस दीस ए ।।
तिहां आज तारण तरण विचरइ, केवली दोइ कोड़ि ए ।
दुइ सहस कोड़ि सुसाधु वीजा, नमुं बेकर जोड़ि ए ।। २५ ।।

॥ कलश ॥

इम अढी दीपे पनर करमा-भूमि क्षेत्र प्रमाण ए ।
सिद्धांत प्रकरण साखि भाख्या वीस वइहरमाण ए ।।
श्रीनगर जेसलमेर संवत सतर उगणतीसै समै ।
सुख विजयहरष जिणिंद सानिधि नेह धरि ध्रमसी नमैं ।। २६ ।।

अष्ट भय निवारण श्री गौड़ी पार्श्वनाथ छंद

॥ दोहा ॥

सरस वचन दे सरसती, एह अरज अवधार ।
पारथियां पहिड़ै नहीं, उत्तम ए आचार ॥ १ ॥
हित करिजे मोसुं हिवै, देजे वैण दुरस्स ।
कवियण पिण सुणि नै कहै, सखरौ घणुं सरस्स ॥२॥
गुण गरूऔ गौड़ी धणी, पारसनाथ प्रगट्ट ।
मन सूधै मोटा तणा, गुण गातां गहगट्ट ॥ ३ ॥

छंद-नाराच

प्रसिद्ध बुद्धि सिद्धि निद्ध ऋद्धि वृद्धि पूर ए,
कलत्त पुत्त कित्ति वित्त वद्धते सनूर ए ;
विजोग सोग रोग विग्घ अग्घ सिग्घ घायकं,
प्रगट्ट देव नित्त मेव सेव पास नायकं ; ४
गुमान मोड़ि हत्थ जोड़ि देव कोड़ि वग्ग ए,
अनूप भूप चुंप धारि आइ पाइ लग्ग ए ;
पहू बहू सुकित्ति नित्त सव्व सोभ लायकं , प्र० ५
कुबोह लोह कोह द्रोह मोह माण वज्जियं,
अनंत कांत शांत दांत रूप मैण लज्जियं ;
असेस शुद्ध तत्त जुत्त सोभ ए अमायकं , प्र० ६

विसाल भाल सुव्विसाल अद्धचंद छज्जियं,
रउद्द थी रिसाइ जाणि एथि आइ रज्जियं,
सुनैण कंज गंध काज भौंहि भौंर रायकं प्र० ७

कपूर पूर कस्सतूर कुंकुमा सुरंग ए,
अरग्गजा अथग्ग में रहैं गरक्क अंग ए,
अछेह दुत्ति गेह देह सव्ववही सुहायकं, प्र० ८

मृदंग दौंदौं दौं दप्प मप्प वज्ज ए,
नफेरि भेर झलरी निसाण मेघ गज्ज ए,
तटक्क तान थेइ थेइ लक्ख सुक्ख दायकं, प्र० ९

अष्ट भय नाम दोहा

करि केहरि दव क्रुद्ध अहि, राडि समुद्द रोग।
अति बंधण भय अठ टलै, सामि नाम संयोग।१०।

छंद भुजंगी

छहुं रित्तु छाक्यौ झुकंतौ झकोला,
लपक्के विलग्गी अली मालि लोला,
वलेटैं वलाका वली सुंडि दौला,
झरै निज्जरा जेम मद्दैं कपोला, ११

पट्टू चालतौ जाणि पाहाड़ तोला,
झलक्कै डलक्कावतो लाल डोला,
इसौ दूठ पूठै पडंतां अकोला,
जपंतां करैं नाचि नी मात चोला, १२

इति हस्तिभयं

महा सद्द सीहं अबीहं उदंडं,
भरैं फाल आफालतौ पुच्छ झुंडं,
डगैं फाडि डाचौ वडं वज्ज मुंडं,
महातिक्ख नक्खं रखे रोष चंडं ॥ १३ ॥
फुरक्कावतौ मुंछि फाडंत तुंडं,
ललक्कंत लोला विकट्टं विहंडं ।
धणी पास चौ नाम ध्यानं धरंडं,
टलै श्याल ज्युं सीह होए अहंडं ॥ १४ ॥

इति सिंह भयं

जले जंगलां में जटा जूट जाला,
प्रणा झाड़ ऊजाड़ में लग्ग झाला ।
बहू मृग्ग वग्गं पसू पंखि बाला,
बलंता कमेड़ा चिड़ा जंतु माला ॥ १५ ॥
धुखे धूम लग्गे कीया नग्ग काला,
झलो झाल रुंखे टल्या नांहि टोला ।
बड़े संकटे एण आयां विचाला,
प्रभु नाम नीरैं बुझैं तत्तकाला ॥ १६ ॥

इति अग्नि भयं

कलू काल रूपी महा विक्करालं,
फणा- टोप रोपैं महाकोप जालं ।

वलक्के वलंतौ चलंतौ करालं,
जिणै फूंकि सूकैं तरू माल डालं ॥ १७ ॥
हला हाल संलोलियं विक्ख लालं,
रहैं लाल लोचन्न दो जीह वालं ।
धरंतां प्रभू नाम रिदै विचालं,
सही साप होवै जिसी फूल मालं ॥ १८ ॥

इति सर्प्प भयं

भिड़ैं भूप भूपे अधिक्के अटक्के,
खलां हाड तूटै खडग्गां खटक्के ।
परां हैवरां पाडि नांखै पटक्के,
धुरां सिंधुरां कंधरां भू धटक्के ॥ १९ ॥
पडै प्रांण संधाण बाणे बटक्के,
हुकें केइ हाथाल रोसैं हटक्के ।
झला झाल गोलेहु नाले भटक्के,
तुटैं तुंड मुंडां प्रचंडां तटक्के ॥ २० ॥
छछोहा सलोहा पडंधा छिटक्के,
झुक्कैं सूर झंझेड़ि नांखैं झटक्के ।
प्रभु नाम लेतां इसे ही अटक्के,
कदे बाल बांको न होवैं कटक्के ॥ २१ ॥

॥ इति युद्ध भयं ॥

जतन्ने घणे केइ बैसे जिहाजैं,
अथग्गे जले आइ कुव्वाइ वाजैं ।

घटा टोप मेघा गडड्डंत गाजै,
हुबक्कैं तरंगां विरंगांहु बाजैं ॥ २२ ॥

लिचा पिच्च लागी घड़ी ताल भाजैं,
अहो कोइ राखैं अठै अम्ह काजैं ।
इसै संकटैं जे जपैं जैनराजे,
सही पार पामै तिके सुक्ख साजैं ॥ २३ ॥

इति जल भयं

गडं गुंबड़ं गोलकं हीय होड़ी,
हरस्सं खसं उग्रसं गांठि फोडी ।
टलैं गोढ थी कोढ अड्ढार रोडी,
महाताप संताप आतंक कोड़ी ॥ २४ ॥

न होवै कदे कायमैं काय खोडी,
सहु आधि व्याधं सही जाइ छोडी ।
जिणंदं नमै मन्न में मान मोड़ी,
लहैं सो सदा सुक्ख संपत्ति जोड़ी ॥ २५ ॥

इति रोग भयं

अमूछा मलेछा वली मन्न खोटा,
जियां चक्खु चुंचा लुल्या गाल गोटा ।
वली पाघ बांकी लपेट्यां लंगोटा,
सहेटा गह्या सब्बला हाथ सोटा ॥ २६ ॥

दीयैं कोरड़ा देह दोला दबोटा,
वदैं बोल बांका झंझै मंत झोटा ।
पड्या बंदिखानैं महा दुक्ख मोटा,
प्रभू नाम थी वेग थायैं विछोटा ॥ २७ ॥

इति बंदि भयं

नमंतां जिणेशं सदा मन्न रागैं,
सहीअें महा दुट्ठ भें अट्ठ भागैं ।
रली लोक लक्खं लुली पाय लागैं,
दिसो दिस्स मांहे जसू जस्स जागैं ॥ २८ ॥

॥ कलश ॥

परतख जिणवर पास आस उल्लासह अप्पण
विविध जास गुण वास दासचा दालिद कप्पण
चैंण दैंण जसु चरण ईति अति भीति निवारण
लील लाछि लख गान विमलकीरत्ति वधारण
दिण इंद जेम दीपंत दुति, विमलचंद मुक्ख छवि वरण
दौलत्ति विजयहरषां दीयण, धरमसीह ध्याने धरण ॥२९॥

॥ इति अष्ट भय निवारण श्री गौड़ी पार्श्वनाथ छंद ॥

—:ꕥ:—

श्री जिनचंद्रसूरि अमृतध्वनि

रतन पाट प्रतपै रतन जाणइ सकल जुगत्त
गच्छनायक जिणचंद गुरू सोभत तप जप सत्त ।१।

चालि—

तौ तप जप सत्त तेम तपत्त तेज वखत्त त्तरणि तखत्त तृणसम चित्त
त्तजि मदि चित्त त्तुरत चरित्त त्तहि किय
हित्त त्तिनि गुपत्त त्तिदुय सुमत्त
त्तेवड़ि तत्त त्तजित मिछत्त त्तत्त सिद्धंत त्तारितजंत त्तरक जुगत्त
त्तरजित धुत्त त्ततु दीपत्त त्तुल रतिपत्ति त्तासन मत्त त्रसत दुरित्त
त्तिभुवन कित्त त्तवत कवित्त त्तसु अमृतध्वनि ध्रमसी कहैं सार
१ रतन०

इति श्री वर्त्तमान गुरू स्तवना रूप ५२ तत्तो भड़ करी नइ
महा अमृतध्वनि जाणिवी ।।

उपकार ध्रुपद
राग—वृन्दावनी सारंग

करणी पर उपगार की
सब करणी में अधिकी वरणी, तरणी यह संसार की । क० ।१।
कीनें गुण ऊपरि गुन करिवौ, वात सुतौ व्यवहार की ।
पिण विनु स्वारथ करण भलाई, अपनै जीउ उद्धार की ।क०।२।
सुकृती पात्र कुपात्र न सोचै, धरै उपमा जलधार की ।
साची कहिय सुगुरू ध्रम सीमा, सब शास्त्रनि कैं सार की ।क०।३।

सप्ताक्षरी कवित—

गिही केकि के अगिह केकि के गिह गिहि कुकहि ।
केकि को क खग घूक हहा हुहू खगहु ककहि ।
के गहि गह गहि कोह खें गगा हैं खग खगाहि ।
के कुग्गह गह गहे अंग अग्घें अगि अग्गहि ।
के हक्क अहक्क अगाह गहैं गेह खेह कंकह गुहा ।
कहि कुक्ख खूह खुह अग्गि की कहुं केही अक्कह कहा ?
अकुह विसर्जनीया नां कंठ इणे हीज साते अक्षरे कवित्त छैं
पेट नाट ऊपरा कह्यौ छै ।

गूढ रूप आशीर्वाद सवैया

धोरी के धनी के नीके हार को अहार सुत,
ताही के नगर गयौ जाके दस सीस है ।
सब लोक जाके सुत ताके नाम ताकी सुता
वाजी मुख भूषन बैठी निसि दीस है ॥
राजा लावै रैंत लार ताकी साखा की सिंगार
आगें धाई धरी देखि उपजी जगीस है ।
माह की धुजावें रैन तिन्है पूछ्यौ जोऊ वैन
ताकी नाम चातुरी सों मेरी भी आसीस है ॥१॥
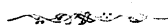
मुखतैं इक बोल कह्यौ न गिणैं कोऊ धूनि बकैं तो गुणी गहरो ।
हलकैं कहै बात न पावत न्याउ जबाव के जोर खड़ो बहरौ ॥

निसि मौन सो बैठो तकैं कैहैं ऊंघत सूतौ ही सोर करै सहरौ ।
न लहै गुण के कोऊ कहै ध्रमसी जगि आज लबारिन कौ पहुरौ ।१।

समस्या—दोहरा हमारे देस छोहरा करतु है ।
सवैया इकतीसा

एक एक तै विसेष पंडित वसैं असेष,
रात दिन ज्ञान ही की वात कुं धरतु है ।
वैदक गणक ग्रंथ जानैं ग्रह गणन पंथ,
और ठौर के प्रवीण पाइनि परतु है ।
करत कवित सार काव्य की कला अपार,
श्लोक सब लोकनि के मन कुं हरतु है ।
कहैं ध्रमसीह भैया पंडिताई कहुं कैसी,
दोहरा हमारे देस छोहरा करतु है ।। १ ।।

समस्या—नैन के झरोखे बीच झाखता सो कौन है ।

हरिसों संकेत करी राधिके विलोके मग,
अैसे आई बैठी सखी एक ही विछौन है ।
राधे बोली सुनि खेल मोसु नैन वाद जोवै,
अनिमेष दो मैं हारी साई दासी हौन है ।।
एतैं सखी पीछै हरै हरै आए हरी अति ही,
अति ही निकट ह्वै कैं तकैं गहि मौन है ।
बोली सखी राधे सुनि मोसु कहि साच वाच,
नैन के झरोखे बीचि झाखता सो कौन है ।।१।।

सवैया सर्वतोमुख—गोमूत्रिका बंध

अति	संत	गुणी	नर	चित्त	भणी	सुख	दैण	सदा	जिण	चंद	जती	
मति	वंत	मुणी	सर	कित्त	घणी	मुख	वैन	मुदा	घन	दंद	हती	
प्रति	पंत	धनी	पर	हित्त	जनी	सुख	चैन	बिदा	जन	वृंद	पती	
छति	वंत	मुनी	दर	भित्त	हनी	दुख	रैन	छिदा	दिन	इंद	दुती	।१।

नारी कुञ्जर जाति सवैया*

शोभत धर्णी जु अति देह की वर्णी है दुति,
सूरिज समान जसु तेज मा वदाय जू
भूपति नमैं है नित नाम कौ प्रताप पहु,
देखत तही ही दुख नाहि है कदाय जू।
पूरण बडेई गुण सेव के करैं थैं सुख,
वंदत तही ही बहुलोक समुदाय जू।
देत है बहूत सुख देव सुगुरुहि नित,
दोऊ कौ नमैं है ध्रमसीह यौ सदाय जू।

अन्तर्लापिका

आदर कारण कौन भूप कहा रोपि रहैं क्रम
न रहै निश्चल कौन कौन त्रिय नयने ऊपम
करै विप्र कहा वृत्ति स्वामि वच को न उथापै
कौन नाम समुदाय कौन तिय पुरुषइं व्यापै
वसती विहीन कहियै कहा सबहि कहा राखत जतन
धरिजै अखंड ध्रमसी कहै 'धरम एक जग में रतन' १

—:०:—

* यह पूरा पढने से "इकतीसा सवैया" है, बड़े अक्षरों को छोड़ देने से "सवैया तेवीसा" हो जायगा।

शीलरास

ढाल—हुं बलिहारी जादवा, ए देशी

शील रतन जतने धरो, खंडी ने मत[1] आणो खोड कि।
भूषण निरदूषण भलौ, होइ[2] नहीं कोइ इयै री जोड़[3] कि।१।शी.
शील रचे मन शुद्ध सूं, परहा तेह पखाले पाप कि।
कुल नैं पिण निरमल करै, ओलखीयौ तिण आपो आप कि।२।
सुकृत तिणै वलि संचीयौ, सहु जग में पांमै सोभाग कि।
दुरगति दुख दूरै दलै, अइओ एहना विरूद अथाग कि।३। शी०
मुशकल करमे मोहनी, वार व्रतां मां दुष्कर बंभ कि।
करणे जीह मन त्रिकरणे, दमणा ए दोहिला[4] निरदंभ कि।४।शी.
पर त्रिय संगत पाड़ई, सत्तम व्यसन कहीजै सोइ कि।
ऊंडी मति आलोचज्यो, हाणि घरे पर[5] हांसौ होइ कि।५। शी.
मेरू जिता[6] दुःख मानियै, सुख तौ मधु ना बिंदु समान कि।
सुरगुरू विद्या (धर) सारिखा, मांनिस तौ वैंसीस विमांन कि ६
मत विषयारस माचज्यौ, वाचेज्यौ एहवा गुरू वैंण कि।
दूह्वी नैं हित दाखवै, साचा तेह कहीजै सैंण कि।।७।। शी.
विषय तणा फल विष समा, ए बेऊं नही सम अधिकार कि।
विष इक वेला दुख दीयै, विषय अनंती वार विचार कि।।८।।
पुन्यै नरभव पांमियौ, भरम्या विषय म राचौ भोल कि।
काग ऊडावण कारणै, नांखौ मत थे रतन निटोल कि।६। शी.

---

१ मन, २ हुवै, ३ होडि, ४ होए, ५ वलि, ६ जिहा।

कनक तणौ देहरौ दसी, कंचण नी वलि आपै कोड कि।
कष्ट-तनी किरिया, ह्वै नहीं सील तणी ते होड कि ॥१०॥ शी.
पालै शील भली परै, टालै दूषण परहा तेम कि।
वखाणे सहू को वली, हेक रतन नै जडीयौ हेम कि ॥११॥ शी.
निरमल नयणैं निरखीयैं, वयण वदै नहीं मयण विकार कि।
सुर सेवा करै सयण ज्युं, शील रयण थी अधिकौ सार कि १२
सोहै मनुष सुशीलीयौ, कुसीलीयां री शोभन काइ कि।
कोइ रीस मतां करै, सीख भली साची कहिवाइ[1] कि।१३। शी.
ललना सुं लुबधो थकौ, लोपि गमावै लज्जा लीक कि।
जायै धन पिण जूजूऔ, नीर रहै नहि फूटी नीक कि।१४। शी.
पुरष भला स्त्री पापिणी, पापी पुरष नैं स्त्री पुन्यवंत कि।
मत[2] एकांत म धारिज्यो, परणामे सहु फेर पडंत कि।१५। शी.
कष्टै धन भेलौ करै, झगड़ा झांटा करि करि झूठ कि।
खरचै नहीं धरम खेत में, मानवंती नैं दे भर मूंठ कि।१६। शी.
की कस करैडे कूकरी,[3] मुख नौ झरते मांस मसूढ कि।
समन हुवै ते स्वाद मैं, मांहिली हांनि न जाणै मूढ कि।१७। शी.
अवगुण कोइ न अटकलै, मेल करावे तिण सूं मेल कि।
गुरूजन स्यूं धारै गुसौ, अवसर नांखै ते अवहेल कि।१८। शी.
महिला रइ संगति मिल्याँ, सूखम जीव मरइ नव लाख कि।
भगवंतइं इम भाखीयौ सूत्र सिद्धांते लाभै साख कि।१९। शी.

---

१ सुखदाइ, २ मन, ३ हाड कस सूरडै कूकर।

भरीयै रू तसु भुंगली, तातै सूए रे दृष्टांत कि।
हिंसा जीवां री हुवै, एहवा विषय कह्या अरिहंत कि ।२०। शी.
त्यागी विषय तणा तिके, ज्ञांनी तेह गिणीजै गांन कि।
अथिर गिणीजै आउखौ, वरतै जेहवो संध्या वांन कि ।२१। शी.
जेहवी चंचल वीजली, पीपल नौ वलि पाकौ पांन कि।
ठार रो तेह न ठाहरै, वैश्या नौ जिम नेह विधान कि ।।२२।।
कीजै मद ते कारिमा, जल अंजलि नौ देखत जाय कि।
करवत वहती काठ मैं, दीसैं इण विध आयु रदाय कि ।२३। शी.
सुखदाई संसार मैं, साचो नहीं कोइ धर्म समान कि।
एहना भेद अनेक छै, पिण सहु मांहे शील प्रधांन कि ।२४। शी.
ज्वलन हुवै जल जेहवौ, सरप हुवै फूलमाल समान कि।
सीह हुवै मृग सारिखौ, सीलैं सहु बातां आसान कि ।२५। शी.
झूठो गय ते हय जिसौ, हालाहल ते अमृत होइ कि।
जोरावर अरि मित्र ज्यूं, कष्ट करै नहीं सीलै कोय कि ।२६। शी.
परिसिद्ध नाम प्रभात नौ, ल्यै सहु कोइ मन सुध लोक कि।
पभणुं केय परम्परा, वलि शास्त्रां थी केइ विलोक कि ।२७। शी.
आदिसर नी अंगजा, ब्राह्मी शीलवती वाह वाह कि।
सुन्दर रूप संपेखि नें, चक्री भरत धरी चित चाह कि ।२८। शी.
साठि सहस वरसां लगै, तप आंबिल करी तोड़ी काय कि।
शील पाल्यौ तिण सुन्दरी, कीरति आज लगैं कहिवाय कि ।२६
शुकल किसन पख दंपती, शील अडिग नी एकण सेज कि।
सहस चौरासी साधु थी, आदिसर पररांस्या एज कि ।३०। शी.

बहु जस चंदनबालिका, लघु हिज वय जिण चारित्र लीध कि।
साधवी सहस छतीस में, कीरती वीर जिणेसर कीध कि ।।३१।।
भीना चीर सुकायवा, गईय गुफा में राजुल रंग कि।
रहनेमें काउसंग रह्यौ, अवलोकी कह्यौ सुन्दर अंग कि ।।३२।।
अंकुस (ना) वसि गज आंणीयौ, दीधो राजमती उपदेश कि।
निपट प्रसंस्या नेमजी, लाभैं नहीं दूषण लवलेस कि ।३३। शी.
चीर दुर्योधन खांचीया, पांचाली सु करीय उपाय कि।
सौ अट्ठोत्तर साउला, प्रगट्या नवनव शील पसाय कि ।३४।शी.
देव उपाडी द्रौपदी, आंणी धातकीखंड आवास कि।
पदमोत्तर नृप प्रारथी, छेडे मत मुझने छ मास कि ।।३५।।
कीधी वाहर किसन जी, पदमोत्तार पिण लाग्यो पाय कि।
पांचे पांडव नी प्रिया, पाम्यों वंछित शील पसाय कि ।।३६।।
चित चौखे रामचंदनी, कौशल्या माता सुखकार कि।
कष्ट टल्या वंछित फल्या, सतीयां मैं सीलै सिरदार कि ।।३७।।
रावण रै कब्जै रही, सीता रो किम रहियो सील कि।
लोक बोक के लागुआ, ए परपूठ करै अवहील कि ।। ३८ ।। शी.
पावक कुण्ड मांहे पड़ी, जल शीतल में न्हाई जेम कि।
सहु कहे धन धन ए सती, हुई निकलंक जाणै हेम कि ।३९। शी.
हाथी जेहनै अपहरी, जिण वन में खांमी जीवराशि कि।
बेऊं सुत नृप बूझिव्या, साधवी पद्मावती सु प्रकाश कि ।४०।
साते चेडा नी सुता, शिवा सुज्येष्टा जेष्टा सार कि।
पद्मावती प्रभावती, चेलणा मृगावतीय चितारि कि ।४१। शी.

मृगावती मुझ नै मिलै, चढ़ि आयौ नृप चंडप्रद्योत कि ।
हिकमति करि हारावीयौ, पाल्यौ नैं उदयनैं पोत कि ।४२।शी.
सुलसा सखरी श्राविका, निंदे पूरव करम निदान कि ।
सीलैं सुर सानिध करैं, सुंपै आंणि जीवत संतान कि ।४३। शी०
एक जती री आंखि में, तृण जीभें करि काढ्यौ तेह कि ।
मेटी पीड़ा मुनि तणी, सतीय सुभद्रा धर्म सनेह कि ।४४। शी०
कूडौ ही लोके कह्यौ, आलिंगन इण दीधउ अंक कि ।
चालणीयैं जल[1] सींचता, कीधी शीलैं ए निकलंक कि ।।४५।।शी०
देसवटौ जूए दीयौ, नीकलीयौ स्त्रीय सुं नलराय कि ।
सूती दवदंती तजी, शीले पग पग कीधी सहाय कि ।।४६।। शी०
अति गरवी ने अविरति, जिण तिण सु जोडावैं जुद्ध कि ।
तिणहिज भव नारद तिरैं, शील तणौ एक गुण मन शुद्ध कि ४७
कुमरी मल्ली धन कही, जिण बूझवीया षट राजान कि ।
पाल्यौ शील भली परैं, सूत्र ज्ञाता में वरण समान कि ।४८।शी०
सुवरणी श्री कुंभरायनी, मल्ली कुमरी तणी ए मात कि ।
शील प्रभाव प्रभावती, वरतैं सतीयां मांहि विख्यात कि ।।४९।।
दूषण अभया नै दीयौ, कहै राजा द्यौ सूली कील कि ।
सिंहासन कीधौ सुरैं, सेठ सुदरसण धन्य सुशील कि ।५०। शी०
अरि (ना) कटक ते अटकीया, एहनो बल कोइ अगम अथाहकि।
शील मंत्रै मंत्रीसरैं, साचौ कहीयें सील सन्नाह कि ।५१। शी०
साची सत्यभामा सती, रुक्मणी पिण तिम चढ़ती रेख कि ।
सलहौ मलयासुन्दरी, शील रतन राख्यौ सुविशेष कि ।।५२।।

[1] आलनां ।

सुरसुन्दरी ने श्रीमती, गुणसुन्दरी पिण अधिकी ज्ञान कि ।
नित नित मयणरेहा नमु, धरिजै अंजनासुन्दरी ध्यान कि ५३

दूषण संख राज दियौ, कर बंध्या दीठा केयूर कि ।
कलावती कर कापीया, निरख्या तो वल ने ए नूर कि ।५४ शी०

भयणा श्रीस्थूलिभद्र नी, जखा जखदिन्ना सु प्रमाण कि ।
भूआ भूअदिन्ना वलि, सयणा वयणा रयणा जाण कि ॥५५॥

कोश्या केर नाटक किया, मुनि थूलिभद्र रह्यो ज्यूं मेर कि ।
आयां गुरू ऊभा हुआ, दुक्करकारक कह्यो दो बेर कि ॥५६॥

एह अदेखौ आणि नै, सीह गुफावासी ते साध कि ।
चूकौ भटके चौमास मै, आवी नें खाम्यो अपराध कि ।५७।

आतल नें पिण औहटे, वलि संबाहै काठी वाग कि ।
तारै आपणपौ तिको, सहु मांहे पामे सौभाग कि । ५८ । शी०

शील खंड्यौ तिण स्यु कीयौ, दावानल गुण वन नै दीध कि ।
कूट्यौ पडहौ कुजस नौ, कुल मै मसि नौ टीलो कीध कि ।५९।

पांणी दीधौ पुण्य नैं, सहु आपद नैं दीध संकेत कि ।
दुख लियो कांइ उदीर नैं, चतुर हुवै तौ तु चित चेत कि ६०।

शिवपुर द्वारै तिण सही, भोगल दीधी काठी भीड कि ।
सहु देख तेहनै सामठा, नित आवै जिम पंखी नीड कि ॥६१॥

अवगुण कुण कुण आखीयै, खंड्या शील पडे दुख खांण कि ।
पाले तेह पुण्यात्मा, विलसै सहु सुख ए जिण वाणि कि ॥६२॥

जिन शासन धन जाणियै, आगर धरम रतन नौ एह कि ।
ब्रह्मचारी हुआ बड वडा, त्रिकरण शुद्ध प्रणमीजै तेह कि ।६३।

वरतै बीकानेर में विजयहरष जसु लील विलास कि ।
धुरि ध्यायौ धर्म ध्यान नौ, श्री धर्मसीह रच्यौ शीलरास कि ।६४

इति श्री शीलरास सम्पूर्णम् । संवत् १७७७ वर्षे
मिती फागुण सुदि २ दिने श्री विक्रमपुर मध्ये
पंडित सुखरत्नेनलिपी कृतं ।

(पत्र ३ जयचंदजी भंडार)

—:o:—

श्रीमती चौढालिया

दोहा

खीर खांड मिलीया खरा, घृत विण न वणे बात;
तिम इहां चार प्रकार में, वरणु शील विख्यात; १
शीले सुर सानिध करै, शीले लील विलास;
शीले दुरगति दुख टलै, शीले पामै शिव वास; २
ते ऊपर सुणजो सहू, श्रीमति नां दृष्टांत;
शील राख्यो जतने करी, ते हिवै सुणजो तंत; ३

ढाल (१) चौपई

इणहिज दखण भरत मझार, अंग देश आरज आचार;
धण कण कंचण रीध अपार, वसंतपुरि अलका अवतार; १
प्रबल तेज प्रताप पडूर, शत्रुदलन तिहां राजा सूर;
तिण राजा रे जीव समान, मतिसागर मुंहतो प्रधान; २
सार पुरि नि करै संभाल, चंद्रधवल नामै कोटवाल;
चतुरा जासु एकज चित्त, सुन्दरदत्त नामे प्रोहित; ३
बहु व्यापार घणो बाजार, गढ मढ मंदिर प्रौल प्राकार
उत्तम जन तिहां वसे अनेक, वसंतपुरि नगरी सुविवेक; ४
हिव सुन्दरदत्त प्रोहित तणौ, श्रीदत्त मित्र अछै हित घणौ;
तेहने नार अछै श्रीमती, शील गुणे करि सीता सती; ५

सेठ जरै परदेशे जाय, प्रोहित नै घर दीयो भोलाय:
जेहवो राखै हेत सदीव, देह दोय जाणै इक जीव: ६
एक दिन श्रीदत्त सेठ विचार, परदेशे चाल्यो व्यापार:
तेड़ी प्रोहित ने कहै तेह, तुम सारु छै माहरो गेह: ७
घर की घणी भोलावण दीध, सेठ तिहां थी कीधी सीध:
प्रोहित आवै करै संभाल, को न सकै कर वांको वाल: ८
सुखे रहे नारि श्रीमति, पालै शील सदा शुभमति:
प्रोहित दीठी रूप अमोल, कहिवा लागो एहवा बोल: ६
हुं प्रोहित माहरो कायदो, मोसु मिल ज्यु हुवै फायदो:
तुम प्रीतम जे माहरो मित्त, तु हिवै कोइ न मेलै चित्त: १०
श्रीमति उत्तर आप्यो सही, तमने एहवो करवो नहीं:
मोटा ते इम न करै मूल, सा (य) र थिकी कीम उडै धूड: ११
दिवी भोलावण तुम नै घणी, प्रदेशे चाल्यौ मुझ धणी:
घर हुंती किम उठै धाड, चीभड़ला किम खायै वाड़: १२
प्रोहित कहै मुझ वचन उवेख, धेठि होइ सहि करै द्वेप:
हिवै ताहरौ घर जातो देख, इण वात में मीन न मेख: १३
दूहा—श्रीमति मने जाण्यो सही, खिणि टालु एक वार:
पहिलै पोहरै आवजो, रात गयां ततकाल: १
संतोष्यो प्रोहित वचन, निज घर बैठो आय:
शील राखण ने श्रीमती, एहवौ करै उपाय: २

ढाल २—अलबेला नी

कह्यो जाय कोटवाल नै रे लाल तूं छै पुर रुखवाल सुविवेकी रे
प्रोहित की मत पातकी रे लाल जोरे करैय जंजाल सु० १

सीले निर्मल श्रीमती रे लाल करि बुध बल प्रचंड सु०
जोयजोये इण भांत सु रे लाल राखे सील सुचंग सु० २
कहे कोटवाल चिंता किसी रे लाल ए नांखिस अवहेल सु०
प्रोहित रहसी पाधरो रे लाल पिण तु मोसु मन मेल सु० ३
सती कहै छै बातड़ी रे लाल नहिं छै तांह नै लाग सु०
पाणी थी किम प्रगटै रे लाल ऊनी बलती आग सु० ४
मोसु ताण मती करो रे लाल कह्यो इम कोटवाल सु०
सती कहै तमे आवजो रे लाल बीजे पहुर विचाल सु० ५
तिहां थी आवि उतावली रे लाल कहै मुंता नै एम सु०
राजा धुर धर थानके रे लाल कह्यो अन्याय हुवै केम सु० ६
कोटवाल कुमारगी रे लाल हुं नांखिसु उखेड़ सु०
रूपे मोह्यो मुंतो कहे रे लाल तु मुझ ने घर तेड़ सु० ७
सू बोलो छो कहै सती रे लाल सगला सरिया काज सु०
अमृत थी विष ऊपजै रे लाल आयो कलजुग आज सु० ८
मुंतो कहै बोलो मती रे लाल सो बातां एक बात सु०
तीजे पहुरे पधारजो रे लाल इम कहि गई असहात सु० ६
आवी राजा ने कहै रे लाल मुंता में नहिं माम सु०
कहै छै तुझ घर आवसु रे लाल सु कीजे हिवै साम सु० १०
राजा रूपे रीझियो रे लाल रागे कहे इण रीत सु०
मुंतो सु मुझ आगलै रे लाल मुझ नै कर तु मीत सु० ११
भूप भणी कहै सती रे लाल धरती खावा धाय सु०
तुमे छो प्रजा ना पिता रे लाल एह करो किम अन्याय सु० १२

राजा हुवै सहुनो धणी रे लाल मत तुं वचन उथाप सु०
चउथे पहुरै रातनै रे लाल आविजो थे आप सु० १३
करि संकेत जुदा जुदा रे लाल आवि आपनैं गेह सु०
शील राखण नें श्रीमती रे लाल जोयजो करस्यै जेह सु० १४

दूहा

सती कहै ते वारता, पाडोसण नैं तेड़;
च्यार नगर ना थंभ ते, मुंके नहीं मुझ केड़; १
कूड़ो कागल ले करि, रोती देती राड़,
तूं आए निशि पाछली, कूटे मुझ किमाड़ २
इम सिखावी तेहनै, मोटी सझी मंजूस;
च्यार भखारी तेह में, कोइ मति जाण्यो कूड़ ३
इण अवसर संझ्या थई, आथम्यो जब सूर;
नेह सहित नि (स) ज थयो, तो प्रोहित नवले नूर; ४

ढाल (३)—नवकार री

वस्त्र आभरण अमोल तंबोल सजाई चूर;
हरखि आयो सति घरे हसतो ऊभो हजूर ॥१॥
कूडै मन आदर करै तेह सजाई लीध,
दासी ने सनकारि सिखावी सगलो सिधो दीध;
भोजन पान सजाई करतां वेला कीध,
बाधी रात पड़ी छै आकुल थाओ म सीध ॥२॥
बीजे पहोरे आयो आय बजायो बार,
हुं कोटवाल उघाड़ किमाड़ म लावो वार।

प्रोहित कहै जाण्यो छै एणै मुझ विकार,
तो आयो इण वेला कीजे कवण विचार ॥३॥

सतीय भणी कहै प्रोहित माहरा बाप नो सूंस,
तुम उपगार गिणीस छिपाय तुं मुझ नै तिण मंजूस,
तिण मंजूस में एक भखारै घाल्यो ठूंस,
सवलौ तालो दीधो सरब रही मन हूंस ॥४॥

हिवै कोटवाल नै मांहे लीधो दीधो बहुमान,
नवी सजाई करवा मांडी भोजन पान।
फिरतां घिरतां आधी रात गमाई ग्यान,
तीजे पहुरै बारै बोल्यो प्रधान ॥५॥

साद ते अटकलीयो हलफलियो कोटवाल,
मुझ ने जाणि मुंहते कुड करी ततकाल।
हिवै किहां जाऊं कैथी थाउं बोली बाल,
बैसि रहो भखार नी बीच मंजूस विचाल ॥६॥

तिहां वलि तालो दीधो लीधो मुंहतो मांहि,
अधिक भगत करै पिण ऊपरले मन उच्छाह।
जिम तिम रात गमावै बात घणी आगाह,
बारणै राजा बोल्यो चउथे पहुरै चाह; ॥७॥

मंत्री जाण्यो इण बेला नृप आयो आप,
मुझ करतूत तिहां थी वाणी पूरो पाप।
मुझ संताड़ि हिवै नहिं बीजी काइ टाप,
तीजै घर घालि दीयो तालो टाल संताप ॥८॥

ऊपरलै मन हुंतै मांहे बुलायो राय,
पग धोवावै पाणी ल्यावै ज्यु निशि जाय।
इण अवसर आफलती रोती बारणै आय,
पाड़ोसणीं कीमाड़ ने कूटै करि हाय हाय ॥९॥

कूकै पाडोसण हलफली खोल किमाड
ताहरा पति ना कागल मांहे मोटी धाड़
राजा कहे सु कीजै पहिली मुझ नें छिपाय
चौथे भखारै घाल्यो तालो दीध जड़ाय ॥१०॥

आसै पासै लोक मिल्या तेह निसुणी कूक
कूड़े चित्त सती पण रोवै प्रीय गयो मुझ मूक
जड़ीया पेई मां च्यार जणा जाणै मामै चूक
कांइ आया हिवै केम निकलस्यां रहिस्यां मूक ॥११॥

दूहा

इतरै सूरज ऊगीयो, प्रगट थयो परभात;
सेठ तणी संभलावणी, करती सगले वात; ॥१॥

आरण कारण करण ने, सगला मिल्या सव कोय;
मुंओ सेठ अपूतीयो, सुणीयो राणी सोय; ॥२॥

माल करावो खालसै, राजा ने कहो जाय,
भूपत किहां लाभै नहीं, जोयो सगले ठाय; ॥३॥

राजा मुंहतो नहिं घरे, तिम प्रोहित कोटवाल,
किण हिक मोटा कामवश, गया होसे ततकाल ॥४॥

राणी जाण्यौ हुं हिज हिवै, मंगावी ल्युं माल,
मूंक्या प्यादा आपका, साथे देई हमाल ॥५॥
सेठाणी कहै माहरै, सघलै घर रो सार,
बीजो कांइ जाणुं नहीं, इण मंजूष मझार; ॥६॥
हमाले आणी हिवै, मोटि निउं मंजूस,
राणी जाणै सार ते, ल्युं वहिलेरो लूंस ॥७॥

ढाल (४)—धरम आराधीयए, ए देशी

तालो खोलावै तिसै ए, ऊभी राणी आप;
पहिला प्रोहित प्रगट्यो ए, वहिलो गयो संताप; ।१।
हिवै इचरज थयो ए, जोयजो करम संजोग,
विषयारस वाह्या थका ए, विगड़ै दोनुं लोग; ।२।
कहै राणी तें सुंकीयौ ए, हसिवा लागी हेव;
प्रोहित कहै हसजो पछे ए, देखो बीजा देव; ।३।
जितरै बीजे बारणै ए, नीकलियो कोटवाल;
राणी कहै ओ कांइ ए, करवी थी संभाल; ।४।
म्हां विण चोकी कुण करै ए, कहै कोटवाल निदान;
ततखिण तीजा ठाम थी ए, प्रगट थयो परधान ।५।
हस राणी कहै स्युं हुवो ए, दफतर थांरै हाथ;
मुंतो कहै मनै आवणा ए, राजा जी के पास; ।६।
तालो चौथो खोलता ए, पोते प्रगट्यो राय,
माथें ओढै ओढणा ए, लोकां मांहे लजाय ।७।

मांहो मांहे मीटे मिल्या ए, मान महातम खोय;
पछाताप ते अति करै ए, हुणहार जिम होय ।८।

भूपति प्रमुख सको भणै ए, श्रीमति नै साबास;
वैरी घाव वखाणीये ए, राख्यो शील सुवास; ।६।

तेड़ी राजा तेहनें ए, सखरो दें सतकार,
श्रीमती तुं मोटी सती ए, नाम थकी निस्तार ।१०।

वसत्र आभ्रण दीया घणा ए, वहनी नाम बोलाय;
पोते नृप पगे लागने ए, निज अपराध खमाय ।११।

गाजै बाजै हर्ष सुं ए, पहोंचावै नृप गेह,
सहु लोक में जस थयो ए, धन धन श्रीमति एह ।१२।

नगरी मांहि बहु हुवो ए, जिण धरम नो उद्योत ।
सुध शील पाल्यो थकां ए, श्रीमति पर वाधै ज्योत ।१३।

कितरो काल गया थकां ए, आयो तसु भरतार;
शील प्रसादे सुख लह्यो ए, वरत्या जय जयकार ।१४।

अन्य दिवस गुरु आविया ए, धरमघोष अणगार;
श्रीमती संजम लीयो ए, जाणी अथिर संसार; ।१५।

व्रतधारी श्रावक हुवा ए, राजादिक बहु लोग;
पुन्न तणे परसाद थी ए, थाये सगला थोक; ।१६।

सूध साधवी श्रीमती ए, सुर पद पाम्यो सार;
महाविदेह में सीझसी ए, एक लहसि अवतार ।१७।

सीले सुख सदा लहै ए, सीले जस सोभाग;
धरम थकी कहै धरमसी ए, सफल फलै तसु आस ।१८।

इति श्रीमती चौढालिया सम्पूर्ण

[स्वामी नरोत्तमदास जी के संग्रह से]

—❀—

श्री दशार्णभद्र राजर्षि चौपई

वीर जिणेसर वंद ने, प्रणमूं गौतम पाय;
एहनो सासन आज ए, सहु जीवां सुख थाय ।१।
विधि सुं करतां वंदना, धरता मन सुद्ध ध्यान;
लहिये सुख इह लोक ना, परभव मुक्ति प्रधान ।२।
वांदतां श्री वीर ने, मन थी छोड्यो मद;
इन्द्र प्रशंस्यो आपथी, भलो दसारणभद ।३।
मदहरसूत शिवधरम में, पेखी तिण प्रस्ताव;
दसार्णभद्र कीध दृढ, भगवंत ऊपरि भाव ।४।
भांति भांति दीठी भली, गुण अवगुण ह्वं ज्ञान,
भली वस्तु सहु को भजं, निरखी तजे निदान ।५।

ढाल (१)—कपूरहुवे अति उजलो रे, ए देशी

सम्बन्ध ए तुम्हे सांभलो रे, कारण मूल कहाव;
अधिक दशार्ण आदर्यो रे, भगवंत ऊपरि भाव ।१।
सुगुण नर ए सुणिज्यो अधिकार
सांभलितां थासी सही रे, आगें लाभ अपार; सु०।२।
देश सहु में दीपतो रे, वारू देश वैराट;
सहू को लोक सुखी सदा रे, वरतें निज कुल वाट, ।३।
मोटो एक तिण देश में रे, गिणजें धनपुर गाम,
धन धाने धीणे करि रे, ठावो निरभय ठाम । स० ।४।

मदहर सुत मणिहारीयो रे, वसे तिहां सुखवास;
सखरो आप सुमारगी रे, त्रिया कुशीला तास । स०।५।
कोइ क तिहां कणवारीयो रे, मनरो तिण सु मेलि;
आवै छानों अवसरे रे, करिवा तिण थी केलि ।स० ।६।
उणही ग्रामे एकदा रे, मोटे चोहटें मांहि;
नाटिकीया नाचै नवा रे, आवें लोक उमाहि ।स०।७।
किणही नाटिकीये कीयो रे, नारी रूप नवल्ल;
भांति भांति खेलें भलो रे, अदभुत कला अवल्ल ।स०।८।
तेहवें ते मदहर त्रिया रे, देखण आवी दौड़ि;
नटवी रूप निहाल ने रे, ठिक न रह्यो दिल ठोड़ि ।९।
उण रा साथी आगलें रे, तेह त्रीया कहें ताम;
मुझ घर आवी जो मिलें रे, द्यु तुहने सो दाम ।१०।
तुरत बात मानी तिणें रे, नाटिक परो निवेड़ि;
नाटिकीयो तिण नारिनें रे, आयो करिवा केड़ि ।११।
त्रिया रूप नटवो तिको रे, आंगण ऊभो आय,
मदहर त्रिय मांहे लीयो रे, वहु आदर बोलाय ।स०१२।
पग हाथ प्रमुख पखालिवा रे, निरमल दीधो नीर;
पुरसें भोजन युगति स रे, खांडि घिरत नें खीर ।१३।
जीमण बैठो जेतलै रे, नटुवो वेसे नारि,
तिण वेला कणवारियो रे, वोल्यो घरि ने बार ।स०१४।
नारि कहे नट नारि नें रे, कर मति चिंता कांइ ;
तूं छिप वैसि तिलां तणे रे, मोटे कोठें मांहि ।सु० १५।

ते आघो बैठो तिहां रे, अंधारी दिसि आई।
फूं फूं फूं तिल फूंकि ने रे, खूणै बैठो खाय। सु० १६।

दूहा

आसंगायत आवियौ, तेहवें तेह तलार।
पायस भोजन पेखि ने, जिमवा करे जिवार।१।
जीमण बैठो जुगति सुं, सखरी खीर सवाद।
बोल्यो ग्रहपति बारणे, सांभलियो तिणसाद।२।
हलफलियो ऊठ्यो हिवें, अटकल कोप उपाय।
करें वीनति कणवारीयो, छानों मुझ छिपाय। ३।
तिल घर में बैसो तुम्हे, पिण ओलै हिज पास।
आघा मत पैसौ उहां, विषधर नो छै वास। ४।
ते छिपायो बैठो तिसें, आयो धणीय उमाह।
आखर बीहे अंगना, निबलो तोही नाह। ५।
भर्यो थाल दीठो भलो, खीर घृत नें खांड।
पूछै पति कहो किम किया, मोसु कपट म मांड।६।

ढाल (२)—कुमरी बोलावै कुबड़ो ए देसी

कहे त्रिया बातां केलवी, आठिम नो दिन आजो रे।
शिव पारवती पूजिवा, करी खीर तिण काजो रे क० ।१
जैति करी नें जीमिवा, हुं बैठी थी एहो रे।
जितरे हीय आया तुम्हे, मैं कहिवो सत्यमेवो रे।क० २

पति कहैं हुं परि गांम थी, आयो भूखो आमो रे।
पहिली जीमल्यु तूं पछे, धाई बैठी धामो रे। क० ३
किम जीमिस त्रिया कहै, सुचि कीधो नहिं स्नानो रे।
करतो भोजन ते कहै, तुम्ह स्नाने अम्ह स्नानो रे।क० ४
तिण अवसर तिल घर तणै, मधि बैठो हुइ मूंकौ रे।
नट ते रूपे नारि नें, फाकै तिल दे फूंको रे क० ।५
विम्मासै कणवारियो, सरप कह्यो थो सोयो रे।
किहां इक फूंकारा करै, हिव केही गति होयो रे। क० ६
जौ अंधारें भ्फाटसी, करसी कुण कणवारो रे।
इण दिसि वाघ उठी नदी, पड़ियो एह प्रकारो रे। क०७
नर उठी नासौ जिसे, लखियो नटवी लागो रे।
ते पिण उठ नाठी तिहां, भला गया बिहुं भागो रे। क०८
धोखे पड़ियो घर धणी, सोचे केहो सरूपो रे।
नर नारी कुण नीकल्या, अदभुत रूप अनूपो रें। क० ६
प्रिय नै पनें परचावण, प्रीया बोली होठे बुद्धो रे।
मैं पाल्यो थो जीमतां, स्नान कियां विण सद्धो रे।क०१०
जीम्यो अणन्हायो जरै, सखरी न करी सेवो रे।
शिव पारबती सलकिया दोयु परतिख देवो रे। क०
पहिला वडेरा पूजता, सेवा करता सारो रे।
पेट पूज्यां सहु पूजिया, ए थारो आचारो रे। क० १२
कूक्यां बाहर का नहीं, हुंपिण रही हरायो रे।
बैसि रहें ज्यु बापड़ो, ढोली ढोल बजायो रे। क० ।१३

दूहा

मदहर कहै सुण माननी, हुं मूरख मतिहीन।
अणसमझ्यो उतावलै, कारिज भूंडो कीन। १।
हिवै जो अधिकी तूंहि तो, विधि काईक वताय।
गया देव पाछा गृहे, आवै केण उपाय। २।
त्रिया कहै सुणि नाह तुं, जो परदेशे जाय।
खरै न्याय धन खाट नें, ल्यावै तुं हित लाय। ३।
विधि बलि बाकुल करी, वलि पूजीजे धरि प्रेम।
शिव पारबती तो सही, आवै पूठा एम। ४।
केलवी कह्यो कुसीलणी, साच गिणै पति सुद्ध।
देखो भोलो दिल्ल रो, धवलो तितरो दूध। ५।

ढाल (३) सेवा बाहिरौ कहीयै कौ सेवक ए देशी

मानव युं भमें मिथ्यामति मोह्यौ, जे हित अहित न जाणै।
अणहूंता इ देवां ऊपर, आसत अधिकी आणै। १ मा०
दिन तिणहीज चल्यौ परदेशे, ले आऊं धन लाहो।
माहरा रूस्या देव मनाउं, ए मन में उमाहौ। मा० २
करतो पंथ दिने कितरेकें, देश दशारण दीठो।
वारू सरस ईख रा वाटक, मांहि हुवै गुल मीठो। मा० ३
रोजगार काजै तिहां रहियौ, काम कितो एक कीधो ;
खेत धणी तिण हेम खुशी सु, दस गदीयाणा दीधौ ; ४ मा०

खांचाताण मिली ए खरची, काम सरै नहिं कोई ;
भमतो तिहां थी वलि भोगवतो, सुख दुख लीया सोई ; ५ मा०
इक दिन इक अटवी में ऊभो, छवि सखरी तरु छाया ;
वाडी चढि राय दशारण, उणहिज वडि तलि आया ; ६ मा०
पूछयो भूपे कुण परदेशी, इण ठामे क्यु आयो ;
तिण अपणा घर देव त्रियानो, सहु विरतंत सुणायो ; ७
मदहर सुत हुं छु मणिहारो, धन नें कारण धाउं ;
अरथ खाट नें पूजी अरची, माहरा देव मनावुं ; ८
पूजिस हुं शिव नें पारबती, सो दिन सफलो थासी ;
माया भावै तितरी मेलो, आखर साथ न आसी ; ९
सहसबुद्धी नृप सुणि समझावै, परमारथ सहु पायो ;
सरल चित्त दीसे तुं सखरो, पिण बाहर बहकायो ; १०
घर में केई घाल्या घरणी, नाठा ते नर नारि ;
शिव पारबती घर थी सिलक्या, कामण दीधी गारी ; ११
परहो तुझ काढ्यो परदेशे, कुलटा इतरो कीधो ;
समझावी इम राय दशारण, डेरो पुर में दीधो ; १२
सखरे महिले राख्यो सुखियौ, सखरी भगति सजाई ;
स्वारथ विण जे करणी सेवा, भल्लां तणीय भलाई ; १३
दिल में चिंते राय दशारण, अहो एहनी अधिकाई ;
अछता देव तिहां ही ऊपर, साची भगति सदाई ; १४
मो सरिखौ नाहिं कोई मूरख, मोहे रहियौ माची ;
साचा देव तिथंकर सरिखा, सेवा न करूं साची ; १५

जयवंता श्री वीर जिणेसर, इण ठामे जो आवै ;
तो काइक अधिकाई कीजे, भावना इम नृप भावै ; १६

दूहा

इण अवसर तिहां आविया, जगगुरु वीर जिणेश ।
तरता बीजां ने तारता, देता ध्रम उपदेश । १
परसिद्ध श्री गौतम प्रमुख, गणधर साथ इग्यार ।
साथे साध भला सही, जेहनै चवद हजार । २
चौ विधि देव मिली रच्यो, समवशरण श्रीकार ।
स्वामि बैठा सिंहासणे, बैठी परषद बार । ३
जेण दसारण राय ने, दीध वधाई दोड़ ।
आभरण वगस्या अंगना, माथै राख्यो मौड़ । ४
हिवै घणो हिज हरखियो, भूप दशारणभद्र ।
छोले इछोले छिले, साचो जाणि समुद्र । ५
सबला आडंबर सजे, वांदु इम व्रधमान ।
किणही वांद्या नहिं कदे, इम धारे अभिमान । ६

ढाल (४) यतिनी देशी

अभिमान इसौ मन आणै, प्रभु आया पुण्य प्रमाणै ।
महिमा करूं सबल मंडाणे, वाह वाह सकोइ वखाणै ।१
तेड़या कोटंबक ताम, आखैं हिव भूपति आम ।
सज करीय वजावो सारा, नोबत नीसाण नगारा ।।२।।

शुचि कीजे स्नान संपाड़ा, सहु पहिरै नवि नवि साड़ा ।
हीर चीर पाटंबर हेम, पहिरौ सहु भूषण प्रेम ॥३॥
हिव आणि सिणगारो हाथी, साम्हेलौ मोहें तिण साथी ।
गुड़डंत कलाहिण गाजै, रोलम्ब कपोले राजे ॥४॥
काजल किलकें तनु काला, सबला परचण्ड सुंडाला ।
सिंदूस्या सीस सलूकै, जलधर में बीज झबूकै ॥५॥
ऊपर सोहै अंबाड़ी, फूली जाणै फूलवाड़ी ।
ऊंचा परवत अणुहारा, आण्या गज सहस अठारा ॥६॥
घणा मोला ऊंचा घोड़ा, हर हीसै होडा होडा ।
तेजी ऊछलै त्राडता, उचास भणी आपड़ता ॥७॥
मुंह पतलै पूठे मोटा, छछोहा ने कानें छोटा ।
सोने री साखत कसीया, राजी हुवै चढतां रसिया ॥८॥
सालहोत्र सुलक्षण साख, लेखां हय चौवीस लाख ।
सोल सहस घणै सनमान, राजें साथै राजान ॥९॥
सुखपाल सहस श्रीकार, रथ तौ इकवीस हजार ।
सातसै अन्तेउर सार, सहु सज्ज हुआ सिणगार ॥१०॥
कहा पायक तेत्रीस कोड़ि, कर सेवा बे कर जोड़ि ।
छत्र चामर सोभा छाजै, रवि तेज दसारण राजे ॥११॥
वड़ी रिधि तणै विसतारै, पुर बाहिर हिव पधारै ।
आवै धरता आणंद, जिहां त्रिगड़ै श्री वीर जिणंद ॥१२॥

॥ दूहा ॥

अंबाड़ी थी उतस्या, महिपति अधिकें मान ।
मदहर सुत पिण साथ ले, वंद्या श्री व्रधमान ॥१॥

हिव अति हरख्यो मदहरो, देख निरंजन देव ।
मिथ्यामति मेटी करे, श्री जिनवर नी सेव ॥२॥

इन्द्र हिंवै आवै इहां, सबल आडंबर साज ।
नृप प्रतिबोधण जिन नमण, एक पंथ दोइ काज ॥३॥

ढाल (५) इण अवसर कोइ मागध आयो पुरन्दर पास, ए देशी

सोधरमै देवलोके शक्र महासुर राज,
दीठौ राय दशारण वंदण नै सजै साज ।
करणी एह करै ते धन जिन वंदन काज,
पिण अहंकार उतारनै हुं प्रतिबोधूं आज ॥१॥

सुरपति हुकम इरापति देव धरी ऊछाह,
चौसठि सहस्स वड़ा गजराज विकुर्वे चाह,
इक इक गज रै मुख सुखकारी पांचसै वार,
मुख मुख आठ दंतूशल रच्या श्रीकार ॥२॥

इक इक दंते पंते वारू अठ अठ वावि,
वावी वावी आठ आठ कमल सुगंध धर भाव
कमले कमले लख लख पांखडियां परसिध,
पांखडीए पांखडीए नाटक बत्रीस बद्ध ॥३॥

वलि प्रति कमले मध्य प्रासाद वतंस विमान,
राजै तिहां अग्रमहिषी आठे शक्र राजान,
एह अचंभै रूप अनूप वण्या असमान
देख दसारण राजा आप तज्यो अभिमान ॥४॥

जग में धन धन जिन शासन धन वीर जिणंद,
आवै जेहनै वंदण काजै एहवा इंद;
मैं अग्यान कीयौ अभिमान महा मतिमंद,
मुझ रिद्धि अंतर जेहवौ कूप समंद ॥५॥

अहो अहो इन्द्र आगे कीया केई धरम अनूप,
लाधी वैक्रिय लबधि रचै मन मान्या रूप;
धरम करूं हिव हुं पिण ते निश्चै मन धारि,
वीर सुं आवि करी नृप वीनति तुं प्रभु तारि ।६।

प्रतिबूधौ मदहर सुत पिण नृप संगति पाइ,
मलयाचल संगे तरु बीजा पिण महकाय;
कीधो लोच तिहां हिज सोची बात न काय,
देई बिहुं ने दीक्षा शिष्य किया जिनराय ।७।

तुरित त्यागी वड वैरागी मोह न माय,
जे करणी तें कीधी ते मैं कीनि न जाय;
तें अहंकार पोतारो साच कीयो सुखदाय,
पोतें इन्द्र प्रशंसा करि करि लागो पाय ।८।

सहु रिधि संवर शक्र पहूंतो सरग मझार,
वीर जिणेसर तिहां थीं कीध अनेथ विहार;
राय दशारण मदहर साधु भला ध्रमसील,
सहु सुख पाया पायो केवल मोख सलील ।६।

ढाल—(६) आज निहेजो दीसइ नाहलो—ए देशी

कोई मन में गरब रखे करो, सुज्ञानी ह्वै सोई।
जो करो तोही दसारणभद्र ज्युं, करिज्यो तुम्हे सहु कोई। १को०

सबलो राज दशारण देश नो, तुरत ज तजीयो तेह।
पाए लागी ने इंद्र प्रशंसीयो, अधिको मुनिवर एह। २

उत्तराध्ययन अध्ययन अठारमे, सूत्र टीका सुविचार।
रिषमंडल वलि प्रकरण थी, रच्यो ए विस्तर अधिकार। ३

मिथ्यामत जिम सांभलतां टलै, साचो सरस संबंध।
समकित कारण सुबुधि सांभलो, बोल्यो सगवट बंध। ४

संवत सतरै वरस सतावनै, मेडतैं नगर मझार।
चौमासे गणधर जिणचंद जी, सुजस कहै संसार। ५

भट्टारकीया खरतर गच्छ भला, शाखा जिनभद्रसूरि।
वाचक विजयहरष वखतावरू, परसिध पुण्य पडूर। ६

तेहनै शिष्ये ए मुनिवर तव्यो, श्री पाठक ध्रमसीह।
श्री जिनधरम तिकौ श्रीसंघ नै, द्यौ सुख दोलति लीह। ७

इति श्रीदशारणभद्र राजर्षि चतुःपदी समाप्ताः
संवत् १८६१ मिती आसाढ़ कृष्ण १ रवि
महिपुरं लि० उद्योतविजै—

—:o:—

श्रीवीरभक्तामरः
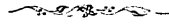
राज्यर्द्धि वृद्धिभवनाद् भवने पितृभ्यां,
श्री 'वर्धमान' इति नाम कृतं कृतिभ्याम् ।
यस्याद्य शासनमिदं वरिवर्त्ति भूमा—
वालम्बनं भवजले पततां जनानाम् ॥ १ ॥

श्री 'आर्षभिः' प्रणमतिस्म भवे तृतीये
गर्भस्थितं तु मघवाऽस्तुत सप्तविंशे ।
यं श्रेणिकादिकनृपा अपि तुष्टुवुश्च
स्तोष्ये किलाहमपि तं प्रथमं जिनेन्द्रम् ॥ २ ॥
(युग्मम्)

अथ तृतीयकाव्ये श्रीभगवतो महावीरस्वामिनो बलाधिक्यमाह—

वीर ! त्वया विदधताऽऽमलिकीं सुलीलां,
बालाकृतिश्छलकृदारुरुहे सुरो यः ।
तालायमानवपुषं त्वदृते तमुच्च-
मन्यः क इच्छति जनः सहसाग्रहीतुम् ॥ ३ ॥

अथ चतुर्थकाव्येन श्रीभगवतो विद्याधिक्यमाह—

शक्रेण पृष्टमखिलं त्वमुवक्थ[1] यत् तद्
जैनेन्द्रसंज्ञकमिहाजनि शब्दशास्त्रम्।
तस्यापि पारमुपयाति न कोऽपि बुध्या,
को वा तरीतुमलमम्बुनिधिं भुजाभ्याम् ॥ ४ ॥

उपदेशाधिक्यमाह—

धर्मस्य वृद्धिकरणाय जिन ! त्वदीया,
प्रादुर्भवत्यमलसद्गुणदायिनी गौः।
पीयूषपोषणपरा वरकामधेनु-
र्नाभ्येति किं निजशिशोः परिपालनार्थम् ? ॥५॥

कर्मक्षये भगवतो नाम्नो माहात्म्यमाह—

छिद्येत कर्मनिचयो भविनां यदाशु
त्वन्नामधाम किल कारणमीश ! तत्र।
कण्ठे पिकस्य कफजालमुपैति नाशं
तच्चारुचूतकलिकानिकरैकहेतुः ॥ ६ ॥

भगवता मिथ्यात्वं हतं तदन्यदेवेषु स्थितमित्याह—

देवार्यदेव ! भवता कुमतं हतं तन्—
मिथ्यात्ववस्तु सततं शतशः सुरेषु।
संतिष्ठतेऽतिमलिनं गिरिगह्वरेषु
सूर्यांशुभिन्नमिव शार्वरमन्धकारम् ॥ ७ ॥

---

[1] वक्थ इति पाठान्तरम्।

भगवतो नाम्न आधिक्यमाह—

त्वन्नाम 'वीर' इति देव सुरे परस्मिन्
केनापि यद्यपि धृतं न तथापि शोभाम्।
प्राप्नोत्यमुत्र नलिने किमृजीपपृष्ठे,
मुक्ताफलद्युतिमुपैति ननूदविन्दुः ? ॥ ८ ॥

भगवतो ज्ञानोत्पत्तिविशेषमाह—

ज्ञाने जिनेन्द्र ! तव केवल नाम्नि जाते
लोकेषु कोमलमनांसि भृशं जहर्षुः।
प्रद्योतने समुदिते हि भवन्ति किं नो,
पद्माकरेषु जलजानि विकाशभाञ्जि ॥९॥

सेवके उपकारविशेषमाह—

वादाय देव ! सन्नियाय य इन्द्रभूति—
स्तस्मै प्रधानपदवीं प्रददे स्वकीयाम्।
धन्यः स एव भुवि तस्य यशोऽपि लोके
भूत्याऽऽश्रितं य इह नाऽऽत्मसमं करोति ॥१०॥

भगवतो वचनमाधुर्यमाह—

गोक्षीर सत्सितसिताविकस (मि) ष्टमिष्ट-
माकर्ण्य ते वच इहेप्सति को[१] परस्य।
पीयूषकं शशिमयूखविभं विहाय
क्षारं जलं जलनिधे रसितुं क इच्छेत् ?॥११॥

१ 'नो' इत्यन्यः पाठः

भगवतोरूपाधिक्यमाह—

अङ्गुष्ठमेकमणुभिर्मणिजैः सुरेन्द्रा
निर्माय चेत्तव पदस्य पुरो धरेयुः।
पूष्णोऽग्र उल्मुकमिवेश स दृश्यते वै
यत्तो समानमपरं न हि रूपमस्ति ॥१२॥

भगवद्दर्शने मिथ्यात्वं नोद्घटतीत्याह—

उज्जाघटीति तमसि प्रचुरप्रचारं
मिथ्यात्विनां मतमहो न तु दर्शने ते।
काकारिचक्षुरिव वा न हि चित्रमत्र
यद्वासरे भवति पाण्डुपलाशकल्पम् ॥१३॥

कषायभङ्गे भगवतो बलवत्वमाह—

वन्या द्विपा इव सदैव कषायवर्गा
भञ्जन्ति नूतनतरूनिव सर्वजन्तून्।
सिंहातिरेकलरसं हि विना भवन्तं
कस्तान् निवारयति सञ्चरतो यथेष्टम्? ॥१४॥

उपसर्गसहने भगवतो दृढतां दर्शयन्नाह—

द्विट् 'सङ्गमे' न महतामुपसर्गकाणां
या विंशतिस्तु ससृजे जिन! नक्तमेकम्।
चित्तं चचाल न तया तव झञ्झया तु
किं मन्दराद्रि शिखरं चलितं कदाचित्? ॥१५॥

भगवानपूर्वदीपोऽस्तीत्याह—

निःस्नेह ! निर्दश ! निरञ्जन ! निःस्वभाव !
निष्कृष्णवर्त्म ! निरमत्र ! निरङ्कुशेश !
नित्यद्युते ! गतसमीरसमीरणात्र
दीपोऽपरस्त्वमसि नाथ ! जगत्प्रकाशः ।१६।

अथ सूर्यादप्यतिशयवान् भगवानित्याह—

विस्तारको निजगवां तमसः प्रहर्त्ता,
मार्गस्य दर्शक इहासि च सूर्य एव ।
स्थाने च दुर्दिनहतेः करणाद् विजाने
सूर्यातिशायिमहिमाऽसि मुनीन्द्र ! लोके ।१७।

अथ चन्द्रादपि त्वद्यशोऽधिकमित्याह—

प्रह्लादकृत् कुवलयस्य कलानिधानं
पूर्णश्रियं च विदधच्च यशस्त्वदीयम
वर्वर्त्ति लोकबहुकोक सुखंकरत्वाद्-
विद्योतयज्जगदपूर्वशशाङ्कबिम्बम् ।।१८।।

भगवता (यत्) सांवत्सरिकं दानं दत्तं तदाह—

यद् देहिनां जिनवराब्दिकभूरिदानै—
र्दौःस्थ्यं हतं हि भवता किमु तत्र चित्रम् ?
दुर्भिक्षकष्टदलनात् क्रियते सदौप-
कार्यं कियज्जलधरै र्जलभारनम्रैः ? ।।१९।।

भगवच्चरणदर्शने फलाधिक्यमाह—

याद्दक् सुखं भवति ते चरणेऽत्र दृष्टे
ताद्दक् परमुखदनेऽपि न देह भाजाम्।
प्राप्ते यथा सुरमणौ भवति प्रमोदो
नैवं तु काचशकले किरणाकुलेऽपि ॥२०॥

भक्तो भगवत्सेवां प्रार्थयन्नाह—

एवं प्रसीद जिन ! येन सदा भवेऽत्र
त्वच्छासनं लगति मे सुमनोहरं च।
त्वत्सेवको भवति यः स जनो मदीयं
कश्चन मनो हरति नाथ भवान्तरेऽपि ॥२१॥

जिनस्य भामण्डलम्—

भामण्डलं जिन ! चतुर्मुखदिक्चतुष्के
तुल्यं चकासदवलोक्य सभा व्यमृक्षत्।
सूर्यं समा अपि दिशो जनयन्ति किं वा
प्राच्येव दिग् जनयति स्फुरदंशुजालम् ॥ २२ ॥

लोकैर्यः शिवः शिव इति ध्यायते स भगवानेवेत्याह—

शम्भुर्गिरीश इह दिग्वसनः स्वयम्भू-
र्मृत्युञ्जयस्त्वमसि नाथ महादिदेव ः।
तेनाम्बिका निजकलत्रमकारि तत् त्वन्—
नान्यः शिवः शिवपदस्य मुनीन्द्र ! पन्थाः ॥ २३ ॥

सर्वशास्त्राध्ययनादपि सम्यक्त्वमधिकमिति दर्शयन्नाह—

जानन्ति यद्यपि चतुर्दश चारु विद्या
देशोनपूर्वदशकं च पठन्ति सार्थम् ।
सम्यक्त्वमीश न धृतं तव नैव तेषां
ज्ञानस्वरूपमसलं प्रवदन्ति सन्तः ॥ २४ ॥

पुरुषोत्तमोऽयं वीर एवेत्याह—

नृणां गणाः गुण चणाः पतयोऽपि तेषां
ये ये सुराः सुरवराः सुखदास्तकेऽपि ।
कृत्वाऽञ्जलिं जिन ! चक्रिति ते स्तुतिं तद्
व्यक्तं त्वमेव भगवन् ! पुरुषोत्तमोऽसि ॥ २५ ॥

संसारसागरशोषकाय प्रणाम :—

रोगा झषा बहुमहामकराः कषाया—
श्चिन्तैव यत्र वडवाग्निरसातसम्भः ।
वार्धिर्भवः सर इव त्वयका कृतस्तत्
तुभ्यं नमो जिनभवोदधिशोषणाय ॥२६॥

भगवद्दर्शनालाभे विडम्बना—

यद् यस्य तस्य च जनस्य हि पारवश्य—
मावश्यकं जिन ! मया वरिवस्ययाऽऽप्तम् ।
तत् तर्कयामि बहुमोहतया मया त्वं
स्वप्नान्तरेऽपि न कदाचिदपीक्षितोऽसि ॥२७॥

स्तनन्धयस्य भगवतो रूपस्वरूपमाह—

रम्येन्द्रनीलरुचि वेषभृतो जनन्याः
पार्श्वं श्रितस्य धयतश्च पयोधरं ते ।
रूपं रराज नवकाञ्चनरुक् तमोघ्नं
बिम्बं रवेरिव पयोधरपार्श्ववर्त्ति ॥२८॥

प्रभोर्जन्म—

इक्ष्वाकुनामनि कुले विमले विशाले
सद्रत्नराजिनि विराजत उद्भवस्ते ।
दोषापहारकरणः प्रकटप्रकाश—
स्तुङ्गोदयाद्रि शिरसीव सहस्ररश्मेः ॥२९॥

नाथस्य जन्माभिषेकः—

स्नानोदकैर्जिन (र्जनि) महे सुरराजिमुक्तै-
र्गात्रे पतद्भिरपि नूनमनेजमानम् ।
दृष्ट्वा भवन्तममराः प्रशशंसुरीश-
मुच्चैस्तटं सुरगिरेरिव शातकौम्भम् ॥३०॥

वप्रत्रयविचारः—

ये त्रिप्रदक्षिणतया प्रभजन्ति वीरं
ते स्युर्नरा अहमिवाद्भुतकान्तिभाजः ।
वप्रत्रयं वददिति प्रविभाति तेऽत्र
प्रख्यापयन् त्रिजगतः परमेश्वरत्वम् ॥३१॥

भगवत्संस्मरणे सुरसान्निध्यमाह—

कान्तारवर्त्मनि नराः पतिताः कदाचिद्
दैवात् क्षुधा च तृषया परिपीडिताङ्गाः ।
ये त्वां स्मरन्ति च गृहाणि सरांसि भूरि-
पद्मानि तत्र विबुधाः परिकल्पयन्ति ॥३२॥

भगवच्चित्तस्थिरतामाह—

संनिश्चला जिन ! यथा तव चित्तवृत्तिः
कस्यापि नैवमपरस्य तपस्विनोऽपि ।
यादृक् सदा जिनपते ! स्थिरता ध्रुवस्य
तादृक् कुतो ग्रहगणस्य विकाशिनोऽपि ?॥३३॥

अथ भगवद्दर्शने जन्मवैरिणामपि विरोधो न भवतीत्याह—

ओत्वाखवोऽहिगरुडाः पुनरेणसिंहा-
अन्येऽङ्गिनोऽपि च मिथो जनिवैरबन्धाः ।
तिष्ठन्ति ते समवसृत्यविरोधिनं त्वा
दृष्ट्वा भयं भवति नो भवदाश्रितानाम् ॥३४॥

भगवच्चरणशरणगतं न कोऽपि पराभवतीत्याह—

यस्ते प्रणश्य चमरोंऽह्नितले प्रविष्ट-
स्तं हन्तुमीश न शशाक भिदुश्च शक्रः ।
तद् युक्तमेव विबुधाः प्रवदन्ति कोऽपि
नाक्रामति क्रमयुगाचल संश्रितं ते ॥३५॥

भगवन्नामतोऽति (पि) भयं न भवतीत्याह—

पूर्वं त्वया सदुपकारपरेण तेजो-
लेश्या हृता जिन विधाय सुशीतलेश्याम् ।
अद्यापि युक्तमिदमीश ! तथा भयाग्नि
त्वन्नामकीर्तनजलं शमयत्यशेषम् ॥३६॥

भगवन्नामतः सर्पभयमपि विलीयत इत्याह—

ऊर्ध्वस्य ते बिलमुखे वचनं निशाम्य
यच्चण्डकौशिकफणी शमतामवाप ।
तत् साम्प्रतं तमपि नो स्पृशतीह नाग—
स्त्वन्नामनागदमनी हृदि यस्य पुंसः ॥३७॥

भगवद्विहारे ईतयो न भवन्तीत्याह—

तुर्यारके विचरसिस्म हि यत्र देशे
तत्र त्वदागमत ईतिकुलं ननाश ।
अद्यापि तद्भयमहर्मणिधामरूपात्
त्वत्कीर्त्तनात् तम इवाशु भिदामुपैति ॥ ३८ ॥

भगवत्पादसेवाफलम्—

निर्विग्रहाः सुगतयः शुभमानसाशाः
सच्छुक्लपक्षविभवाश्चरणेषु रक्ताः ।
रम्याणि मौक्तिकफलानि च साधुहंसा
स्त्वत्पादपङ्कजवनाश्रयिणो लभन्ते ॥ ३६ ॥

भगवद्वचनश्रद्धानात् कामितप्राप्तिर्भवतीत्याह—

संसारकाननपरिभ्रमणश्रमेण,
क्लान्ताः कदापि दधते वचनं कृतं ते।
ते नाम कामितपदे जिन देह भाज—
स्त्रासं विहाय भवतः स्मरणाद् व्रजन्ति ॥ ४० ॥

भगवद्रूपं दृष्ट्वा सुरूपा अपि स्वरूपमदं मुञ्चन्तीत्याह—

सर्वेन्द्रियैः पटुतरं चतुरस्रशोभं
त्वां सत्प्रशस्यमिह दृश्यतरं प्रदृश्य
तेऽपि त्यजन्ति निजरूपमदं विभो! ये
मर्त्या भवन्ति मकरध्वजतुल्यरूपाः ॥ ४१ ॥

निर्बन्धनं जिनं ध्यायन्तो निर्बन्धना भवन्तीत्याह—

छित्वा दृढानि जिन! कर्मनिबन्धनानि
सिद्धस्त्वमापिथ च सिद्धपदं प्रसिद्धम्।
एवं तवानुकरणं दधते तकेऽपि
सद्यः स्वयं विगतबन्धभया भवन्ति ॥ ४२ ॥

भगवत्स्तोत्राध्ययनात् सर्वोपद्रवनाशो भवतीत्याह—

न व्याधिराधिरतुलोऽपि न मारिरारं,
नो विड्वरोऽशुभतरो न दरो ज्वरोऽपि।
व्यालोऽनलोऽपि न हि तस्य करोति कष्टं
यस्तावकं स्तवमिमं मतिमानधीते ॥ ४३ ॥

भगवत्स्तवोमौक्तिकहारः कण्ठे धार्य इत्याह—

त्वत्स्तोत्रमौक्तिकलतां सुगुणां सुवर्णां
त्वन्नामधामसहितां रहितां च दोषैः ।
कण्ठे य ईश ! कुरुते धृत 'धर्मवृद्धि'—
स्तं 'मानतुङ्ग'मवशा समुपैति लक्ष्मीः ॥ ४४ ॥

अथ प्रशस्तिः—

रसगुणमुनिभूमेऽब्देऽत्र भक्तामरस्थैः
चरमचरमपादैः पूरयन्सत्समस्याः ।
सुगुरु 'विजयहर्षा' वाचकास्तद्विनेय—
श्चरमजिननुतिं ज्ञो 'धर्मसिंहो' व्यधत्त ॥ ४५ ॥

—:०:—

ॐ नमः सिद्धेभ्यः

सरस्वत्यष्टकम्

प्राग्वाग्देवि जगज्जनोपकृतये, वर्णान् द्विपञ्चाशतम्,
या वाप्सी निजभक्तदारकमुखे, केदारके बीजवत्।
तेभ्यो ग्रन्थ-गुलुञ्छकाः शुभफला, भूता प्रसूतास्तकान्,
सैवाद्याऽपि परःशतान् गणयसे स्त्रक्स्फोरणाछद्मतः ॥१॥

यैर्ध्यातेति प्रातः प्रातर्म्मातुर्म्मात र्वाग्मात—
र्विद्याजातः सश्रीसातस्तेषां जातः प्रख्यातः।
एतां भ्रातर्भक्त्युध्रातः स्नेहस्नातः स्वाख्यातः
सेवस्वातश्चितृष्णातः शास्त्रेषु स्यान्निष्णातः ॥२॥

शिक्षाछन्दश्च कल्पः सुकलितगणितं, शब्दशास्त्रं निरुक्ति—
र्वेदाश्चत्वार इष्टा भुवि विततमते धर्मशास्त्रं पुराणं।
मीमांसाऽऽन्वीक्षिकीति त्वयि निचितभृतास्ताःषडष्टाऽपिविद्या-
स्तत्त्वंविद्यानिषद्या किमु किमसिधियां सत्रशाला विशाला ॥३॥

सुवृत्तरूपःसकलः सुवर्णः प्रीणन् समाशा अमृतप्रसूर्गीः
तमःप्रहर्त्ता च शुभेषु तारके हस्ते विधुःकिं किमु पुस्तकस्ते ॥४॥

पदार्थसार्थदुर्घटार्थचित्तसमर्थनक्षमा,
सुयुक्तिमौक्तिकैकशुक्तिरत्नमूर्त्तिमत्प्रमा ।
प्रशस्तहस्तपुस्तका समस्त शास्त्रपारदा,
सतां सका कलिंदकां सदा ददातु सारदा ॥५॥

मंद्रै र्मध्यैश्च तारैः क्रमततिभिरुरः कण्ठमूर्द्धप्रचारैः,
सप्तस्वर्य्या प्रयुक्तैः सरगमपधनेत्याख्यया ऽन्योन्यमुक्तैः ।
स्कन्धेन्यस्य प्रवालं कललिलतकलं कच्छपीं वादयंती,
रम्यास्या सुप्रसन्ना वितरतु वितते भारती[1] भारती[2] मे ॥६॥

भातो भातः श्रवणयुगले कुंडले मण्डले वै,
चान्द्रार्कीये स्वतः उत ततो निःसृतौ पुष्पदन्तौ ।
श्रावं श्रावं वचनरचनां मेदुरीभूय चास्याः,
संसेवेते चरणकमलं राजहंसाभिधातः ॥ ७ ॥

अमित नमितकृष्टे तद्धियां सन्निकृष्टे,
श्रुतसुरि शुभदृष्टे सद्रसानां सुवृष्टे ।
जगदुपकृतिसृष्टे सज्जनानामभीष्टे,
तव सफलपरीष्टे को गुणान्वक्तुमीष्टे ॥ ८ ॥

सतेत्थमष्टकेन नष्टकष्टकेन चष्टके
सतां गुणर्द्धि गर्द्धनः सदैव धर्म्मवर्द्धनः ।
सखे सुबुद्धिवृद्धिसिद्धिरीप्स्यते यदा सती,
नमस्यतामुषस्य सावश्य मों सरस्वती ॥ ९ ॥

—०—

इतिश्रीसरस्वत्यष्टकं विद्यार्थपूर्त्तौ त्रिविष्टपविष्टरं

:—❀—:

१ सरस्वती । २ भा च रतिश्चेति भारतो कान्ति सुखं च ददातुइत्यर्थः ।

श्रीजिनकुशलसूरीणामष्टकम्

—:०:—

यो नप्तृनिव सेवकानपि सदा वर्भर्त्ति कुर्वन् मुदं,
विच्छिदन् वियदं ददच्छुभपदं संपादयन् संपदं ।
मन्यन्ते हि यकं पितामहतया विश्वेऽत्र विश्वे जनाः,
सोऽयं वः कुशलानि जैनकुशलश्चकर्तु विद्याचणः ।१।

येऽरण्येषु पिपासवः प्रपतिता दध्युर्गुरुं मानसे,
नानागत्यवितत्यमेघमतुलं वः पाययामास यः ।
योऽद्याप्येष उदन्यतो बहुजनान् कं धापयेद्ध्यानतः,
सोऽयं वः कुशलानि जैनकुशलश्चकर्तु विद्याचणः ।२।

लोलोल्लोलति मिंगला कुलतमे सिन्धावगाधे भृशं,
मज्जन्तं प्रविलोक्य सेवकगणं सत्रा वहित्रेण वै ।
यस्तूर्णंति मतीतरत्संकुशलदं दोर्भ्यां गृहीत्वा दृढं,
सोऽयं वः कुशलानि जैनकुशलश्चकर्तु विद्याचणः ।३।

वारीशोत्तारणे रणे प्रहरणे नागे नगे पन्नगे,
झंझायां विकटे झषे झषकुटे घट्टेऽरघट्टे वटे ।
ध्यानाद्यस्य मनागपीह लभते नो ईतिभीतीं नरः,
सोऽयं वः कुशलानि जैनकुशलश्चकर्तु विद्याचणः ।४।

त्वं चेदेनमनेनसं सकृदपि स्नेहादसेविष्यथाः,
रामे वैत्य रमा मनोरमतमा त्वां पर्युपासिष्यत ।

इत्यादिश्य वयस्यमिभ्यमनुजा यस्यांह्रिमर्च्चन्त्यहो !
सोऽयं वः कुशलानि जैनकुशलश्चकर्तु विद्याचणः ।५।

धन्या 'जैतसिरी' प्रसू जनयिता मंत्री च 'जेलागरो'
यस्मै जन्म ददी ददौ यतिगुणान् श्रीजैनचन्द्रो गुरुः ।
व्युत्पन्नाय तु सूरिमंत्रसहितं सौवं पदं दत्तवान्,
सोऽयं वः कुशलानि जैनकुशलश्चकर्तु विद्याचणः ॥६॥

श्रेयः श्रेयस ओजसा शुभयशा यःस्वर्गमध्यासितो,
नेदीयानिव हर्षयत्यनुदिनं भक्तान् दवीयानपि ।
यो लोके कमलाकरान् रविरिव प्रौढ प्रतापोद्यतः,
सोऽयं वः कुशलानि जैनकुशलश्चकर्तु विद्याचणः ॥७॥

दद्यादद्य धनीयते बहुधनं स्त्रीकाम्यते सुस्त्रियं,
यो भक्ताय जिगीपते च विजयं सुत्ये सुतान् दासते ।
यत्कीर्त्तिः प्रसरीसरीति सततं कौ कौमुदीव स्फुटं,
सोऽयं वः कुशलानि जैनकुशलश्चकर्तु विद्याचणः ॥८॥

सत्काव्याष्टकमष्टधीगुणयुतो दः पूतरूपो पटुः,
सच्चेता उपवैणवं ह्यहरहर्यः सप्तकृत्वः पठेत् ।
तस्मै श्री विजयादिहर्षगुरुतां सद्धर्मशीलोदयो,
दादाति प्रभुरेष जैनकुशलः साक्षादिव स्वद्रुमः ॥९॥

इति श्रीजिनकुशलसूरीणामष्टकम्

—o—

चतुर्विंशतिजिनस्तवनम्

—:※:—

(इन्द्रवज्राछन्दः)

स्वस्तिश्रिये श्री ऋषभादि देवं, निर्दंभदेवं जिनदेवदेवं,
चारुप्रकाशं किल मारुदेवं, स्तौमीह सम्पत्तिलतैकदेवं ॥१॥

(तोटकछन्दः)

अमरासुर पुंस्पशुपक्षिकृत-मदवारनिवारक ईश जितः,
भवता मदनोऽपि मदौघयुतः प्रवदन्तिबुधा अजितं हि ततः ॥२॥

(वंशस्थं)

लसद्यशः पूरितसद्दिशं भवंत एतमर्च्चन्तु जनाश्च शंभवं।
जिनं सदिक्ष्वाकु कुलाब्जसंभवं, स्फुरत्तपोधाम वितीर्णसंभवं ।३।

(द्रुतविलम्बित)

जिनमहं प्रणमाम्यभिनन्दनं,
सुभगसंवरभूपतिनन्दनम्।
सकलसद्गुणपादपनन्दनं,
जिनवरं जनलोचननन्दनम् ॥४॥

(तोटकं)

त्रिजगत्पतिरेषजिनः सुमति—
र्वितनोतु मतिं किल मे सुमतिः।
शुभबोधपयोधिरनेकनुतिः,
क्रमणद्युतिरंजितदेवपतिः ॥५॥

(इन्द्रवज्रा)

पद्मप्रभोऽर्हन् वरपद्मलोचनः,
पद्माननश्चाश्रितपद्मलाञ्छनः ।
सञ्चित्तपद्मामलपद्मलाञ्छनः,
पद्माकरः स्याच्छिवपद्मलाञ्छनः ॥६॥

(भुजङ्गप्रयात)

भजन्तां प्रभुं चित्प्रदं श्रीसुपार्श्वं,
भवन्तो नरा नूनमानन्दपार्श्वं ।
जिनं तप्तहेमस्फुरत्कान्तिपार्श्वं,
सतां सातदं दम्भवल्ल्यग्रपार्श्वं ॥७॥

(वसन्ततिलका)

चन्द्रप्रभं जिन वदन्ति यके मनुष्या—
त्वां सेवकेन्दुसदृशीकरणान्न दक्षाः
भो चन्द्रसेवितपदाब्ज परंमयोक्तः,
स्वामिन्वत स्तवभकार-उकारयुक्तः ॥८॥

(तोटकं)

विबुधा प्रणुवन्ति जिनं सुविधिं,
विविधप्रकटीकृतधर्मविधिं ।
शिवमार्गविधानत एव विधिं;
गुणनीरनिधिं शिवदायिविधिं ॥९॥

(प्रमाणिका)

विभुं भजस्व शीतलं, सदृक्षशक्रशीतलं ?
दराग्निवारिशीतलं, जिनं विभिन्नशीतलं ॥१०॥

(विद्युन्माला)

अर्हन्तं मूर्ध्ना श्रेयांसं, वन्देऽहं देवश्रेयांसं।
श्रेयः सत्कासारे हंसं, हिंसं नोध्वान्तौघे हंसं ॥११॥

(मधुमाधवी)

त्वां प्राप्य सर्वभुवनत्रयवासिपूज्य—
सन्यात्क इच्छति सुराञ्जिन वासुपूज्य।
किं कोऽपि कल्पतरुमीहितदं विहाय,
ह्युच्छूलपर्णिन इहेसति सत्सुखाय ? ॥१२॥

(द्रुतविलम्बित)

विमलनाथमशेषगुणाकरं, विमलकीर्तिधरं च भजेवरं।
विमलचन्द्रमुखं जिननायकं, विजयहर्षयशःसुखदायकं ॥१३॥

(स्रगधरा)

कीदृक्संसार एषः प्रमितिकृतितया कीदृशः सिद्धिजीवः,
कीदृक्षो राजशब्दः सुरनरनिचये जिष्णुनामाऽपि कीदृक्
बाह्यार्थो वर्णबंधा द्विधिहरिगिरिशप्रस्तुतश्चारुधर्मा
धर्माद्यः सर्वदर्शी स हि विशदगुणःपातु चातुर्दशोवः ॥१४॥

(मन्दाक्रान्ता)

यः सर्वेषाममित सुखदो यं सदेच्छन्ति सर्वे,
तुल्यं येनान्यदिह न हि च प्राणिनां यः पितेव।

तस्यापि स्वाम्यसि जिनपते धर्मनाथाभिधाना,--
न्मन्ये तेनाहमिति हि भवच्छदृशो नास्ति कोऽपि ॥१५॥

(शार्दूलविक्रीडितं)

शान्तिः शान्तिमनाः स नाहितकरः सेवन्ति शान्ति बुधा---
स्तायन्ते मम शान्तिना सुमतयस्तस्मै नमः शान्तये ।
शान्तेः कान्तिधरो परो न हि सुरः शान्तेरहं सेवकः,
शान्तौ तिष्ठति मन्मनश्चसततं शान्ते ! सुसातं कुरु ॥१६॥

(स्रग्विणी)

चिन्मयं मद्रदं कुंथुतीर्थङ्करं विश्वविश्वेशमीडे मुदा शङ्करं ।
दुष्टकर्मौघघूकांबकाहस्करं, पुण्यकृत्पुण्यसद्रत्न-रत्नाकरं ॥१७॥

(वसन्ततिलका)

नाम्नीह यद्यरजिनस्य सदा श्रुते च,
नश्यन्ति लब्वरिजना हि किमत्र चित्रम् ।
आकर्णिते बत निनादभरे मृगारे—
स्तिष्ठन्ति किं मृगगणा बलिनोऽपि बाढं ॥१८

(मालिनी)

द्विजपतिदलभालं मल्लिनाथं सुभालं
प्रहतविषयजालं छिन्नदुःखाब्जनालं ।
अमितसुगुणशालं प्राप्तनिर्वाणशालं,
भविक-पिक-रसालं स्तौमि नित्यं त्रिकालं ॥१९॥

(सिंहोद्धता)

राकेन्दुकान्तिमुनिसुव्रत वै त्वदास्यं,
दृष्ट्वा हि दृग्विकचपद्मममनोहरं च।
संभावयन्ति मनसीति शुभा मनुष्याः,
सद्राजतेऽब्जयुगलं विधुमध्यभागे ॥ २० ॥

(द्रुतविलम्बितं)

नमत भव्यजनाः सततं नमिं, नमित निर्जरमद्भुतकामदं।
मदनपञ्जरभञ्जनद्विद्विजं, द्विजपतिप्रवराननमीश्वरं ॥ २१ ॥

(मन्दाक्रान्ता)

यस्त्वं नित्यं किल रमयसे मुक्तिसीमन्तिनीञ्च,
तस्याः सङ्गं क्षणमपि समुन्मुञ्चसि त्वं न नेमे।
सत्त्वं सर्वैः सुरनृभुजगैः कथ्यसे योगिनाथ,
स्तेषां वाक्यं वत जिन कथं त्वां च संजाघटीति ॥२२॥

(कामक्रीडा)

वामापुत्रं तेजोमित्रं दुःखौघागे मातङ्गं,
सच्छ्रीकोषं चेतस्तोषं शोभावल्ली सारङ्गम्।
दत्तानन्दं विद्यावृन्दं प्राण्याशायां कल्पागं,
नित्योत्साहं वन्दे चाहं श्रीपार्श्वेशं पुण्यागम् ॥२३॥

(पञ्चचामर)

प्रवादिसर्वगर्वपर्वप्रभङ्ग भूरिरुट्,
सुपर्वनाथ हैतिमीतिभीतिवार-वारकम्।

जिनेश-वर्द्धमान वर्द्धमान शासनं वरं,
नमामि मामकीनमानसांबुजन्मषट्पदम् ॥२४॥

(कलशः)

इत्थं संवदुरोजदृष्टिनगभूसंज्ञे च दीपालिका—
घस्रे गुम्फित एष सातभरदस्तीर्थङ्कराणां स्तवः ।
सद्विद्याविजयादिहर्षकमलाकल्याण शोभाभरं,
तन्याद्वो बहुधर्मवर्द्धनवतां सन्मानसानां सदा ॥२५॥

इति चतुर्विंशतिजिनस्तवनं पृथक्काव्यजातिमयम् ।

अथ व्याकरण संज्ञा शब्द रचनामयं

श्रीमहावीर जिनबृहत् स्तवनम्

यस्तीर्थराजस्त्रिशलात्मजातः सिद्धार्थभूपो भुवि यस्य तातः,
वितन्यते व्याकरणस्य शब्दैस्तत्कीर्तिरेवात्र यथामुदब्दैः ॥१॥

यो लेख शालाऽध्ययनाय वीरो,
विनीयमानः प्रयतः पितृभ्याम् ।
इन्द्रेण पृष्टं सममुत्ततार,
सर्वैस्ततः शाब्दिक एष ऊचे ॥ २ ॥

ततः परं यः परिणीयपत्नीं,
संभुज्य सर्वानपि कामभोगान् ।

गृहात्परिव्रज्य चरित्रलोल्या—,
न्मन्ये विसस्मार स शब्दविद्याम् ॥ ३ ॥

स तत्र संज्ञाविधिना समानैः,
सहाऽपि सन्ध्यक्षरतां विधित्सन् ।
ये नामिनस्तेषु गुणञ्च वृद्धि—
मवाधपूर्वं युगपच्चिकीर्षन् ॥ ४ ॥

धित्सन् ह्रसत्वं न हि निःस्वरेषु,
तथान्त्ययोर्वै रसयो र्विसर्गम् ।
नाम्नः शतं त्र्युत्तरमन्त्रयुञ्जन्,
विभक्तिभिस्तस्य च नाशमाशु ॥ ५ ॥

लिङ्गत्रयोच्छेदमपि प्रकुर्वन्,
न युष्मदस्मत्स्वपरापरत्वं ।
अग्रोपसर्गा व्यय कारकं च,
स्त्रीप्रत्ययं तत्र मनागपीच्छन् ॥ ६ ॥

वर्णस्य लोपं न तथा विकारं,
न वर्णनाशं च वदन्निरुक्तं ।
कदापि नो *विग्रहकारकेषु,
प्रकल्पयन्नेव विकल्पभावम् ॥ ७ ॥

वर्णा विशुद्धार्थविभक्तयो ये,
तेषां समासं न समीहमानः ।
सुखाऽव्ययीभावपदं यदत्र
लिप्सुः सदा तत्पुरुषप्रधानः ॥ ८ ॥

द्वन्द्वं बहुव्रीहिपरिग्रहादि—
रूपं विरूपं च न कर्म धारयन् ।
शत्रावशत्रावपि न द्विगुत्वं,
यच्चद्वदंस्तद्धितमेव लोके ॥ ६ ॥

नित्यं यथाख्यातक्रियाकृतो ये,
तान्सोपसर्गान्न चिकीर्षमाणाः ।
विभृत्त्व भावं विजहच्च कर्म,
न कर्मकर्तृत्वमुशंस्तथोक्त्या ॥ १० ॥

(अष्टभिः कुलकम्)

विराजतेऽयं किल कामकुम्भः,
स्वामिंस्तव प्राज्ययशः समूहः ।
नो चेत्कथं पूरयतीह नित्यं,
बाढं कवीनां मन ईप्सितञ्च ॥ ११ ॥

सतः सदैवाभिनयं नयन्ती,
सरागरंगाय रभागरंगे ।
दिशं दिशं चारुदृशं दिशन्ती,
नर्नर्त्ति कीर्त्तिस्तव नर्त्तकी च ॥ १२ ॥

स्विदयमाद्रियते सुगुणैः सखे,
स्विदयमाद्रियते सुगुणानिति ।
सुगुणमैक्ष्य हि वीर जिनाधिपं,
बुधजना विमृशन्ति भृशं मिथः ॥ १३ ॥

राजानः स्वैर्ललाटैरहरहरमिता यान्स्पृशन्ति प्रणामात्,
ते राजतो नखास्ते जगति जिनविभो तान्यपि द्योतयन्ति ।
स्वामिंस्तस्मादमीषां प्रवरमिह महाराज नामास्ति सत्तन—
मन्येऽन्ये नखायामपि दधति महाराज संज्ञां मृषा सा ॥ १४

यावद्धसन्तौ दिविपुष्पदन्तौ यावद् ध्रुवस्तावदसौ स्तवश्च,
कुर्यात्प्रकर्षं विजयादिहर्षं सद्युक्तिलीलः शुभधर्मशील: ॥ १५ ॥

---

(१) समसंस्कृतमयं पार्श्वनाथ लघुस्तवनम्

संसारवारिनिधितारकतारकाभ,
डिंडीरहीरसमसत्तमबोधिलाभ ।
आतंकपंकदलनातुलवारिवाह,
वामेयदेव जयभिन्न भवोरुदाह ॥ १ ॥

जानामि कामित करं तव नाम देव,
तेनाऽऽगतोऽहमिह पादसरोरुहे ते ।
मां माऽवहीलय गुणालय सदयालो,
संतो भवन्ति निपुणाहि परोपकारे ॥ २ ॥

मोहारिभूमिरुहभंगमतंगजाय,
संछिन्नतुंगसमनोज मनोजवाय ।
मायाविवादिकुवलालिन वारुणाय,
भूयो नमो भवतु ते जिननायकाय ॥ ३ ॥

वामाङ्गजं दरभरागगजं भजन्ते,
ते जन्तवो नव-नवोदयतां लभन्ते
भूमीरुहो हि समयामलयं वसन्तो,
गच्छन्ति किंन शुभचन्दनतां समेऽपि ॥ ४ ॥

इत्थं सदैव समसंस्कृतशब्द शोभं,
यः पापठीति मनुजः स्तवनं यशोभवे ।
स व्रीयते विजयहर्षसुखं सलीलः,
पार्श्वेशितु स्मरणतः शुभधर्मशीलः ॥ ५ ॥ ॥

——:०:०——

(२) पार्श्वजिनलघुस्तवनम्

विश्वेश्वराय भवभीति निवारणाय
संताप-पादप निवारण वारणाय ।
सत्यक्तमाय सजलांबुदनीलकाय,
तुभ्यं नमोऽस्तु सततं जिननायकाय ॥ १ ॥
सम्मोहमारुतसुरेशधराधराय ।
मुक्त्यङ्गनाप्रणयपुञ्जकृतादराय ।
दुःकर्मकाष्ठ-भरकाननपावकाय,
तुभ्यं नमोऽस्तु सततं जिननायकाय ॥ २ ॥
सज्जन्तु वाञ्छितसुदानसुरद्रुमाय,
कंदर्पसर्पहरणे गरुडोपमाय ।

यागीश्वराय शिवशालिवने शुकाय,
तुभ्यं नमोऽस्तु सततं जिननायकाय ॥ ३ ॥

दारिद्र्य-रेणु भर-संहरणाम्बुदाय,
सम्पत्ति-सिद्धि सुयशः सुखबोधदाय ।
आजन्मदुःखगणपल्लवलावकाय,
तुभ्यं नमोऽस्तु सततं जिननायकाय ॥ ४ ॥

देवाऽसुरप्रणतपाद सरोरुहाय,
कुन्देन्दुमण्डलसमुज्ज्वलचिद्गृहाय ।
निःसंख्यदुःखदगदक्षय कारकाय,
तुभ्यं नमोऽस्तु सततं जिननायकाय ॥ ५॥

पूर्णक्षपारमण शुभ्रकलाकलाय
सत्कीर्ति संभृतदिगीश्वरमण्डलाय ।
लीलाऽऽलयाय विकचाम्बुरुहाम्बकाय,
तुभ्यं नमोऽस्तु सततं जिननायकाय ॥ ६ ॥

(कलशः)

इत्थं विश्वयमश्वसेननरराड्-वंशाब्जवस्त्राधिपं,
सद्वामोदर शुक्तिमौक्तिकनिभं कल्काग भङ्गद्विपम् ।
श्रीपार्श्वं विजयादिहर्ष सहिताः स्युः संस्तुवन्तो नराः,
पार्श्वेशं बहुधर्मवर्द्धनधनं चिद्रत्नरत्नाकराः ॥७

———

(३) श्रीपार्श्वजिनबृहत्स्तवनम्

वाञ्छितदानसुरद्रुम तुभ्यं,
नम ए कुरु सौख्यानि लसन्ति ।
जय जय जगतिपतेः ॥ १ ॥

नव नव नवनमहर्निशममलं,
यश ए तव कवयो गायन्ति ।
जय जय जगतिपतेः ॥ २ ॥

इक्ष्वाकुकुल-कमलाकरवर
भास्कर ए अश्वसेनवंश-वतंस
जय जय जगतिपतेः ॥ ३ ॥

वामामातृवामोदरमानस
सर ए तत्र मनोरमहंस,
जय जय जगतिपतेः ॥ ४ ॥

धन्यतरं तदहो अहस्त्रिभुवन
मह ए तव शुभ-उद्भव आस,
जय जय जगतिपते; ॥ ५ ॥

ववृधे प्रियमनोरथ इव सुखमिव
दिव ए वर राज्यं विललास,
जय जय जगतिपतेः ॥ ६ ॥

ज्वलदहियुगलं बहुहित मंत्र—
दानत ए इन्द्रपदं नयसिस्म
जय जय जगतिपतेः ॥ ७ ॥

नमीकृतशक्रव्रज राज्यं—
रज ए त्वं तूर्ण त्यजसि स्म
जय जय जगतिपते ॥ ८ ॥

मोहलता दलन द्विप बहुलं
तप ए चारुतरं च चकर्ष
जय जय जगतिपतेः ॥ ९ ॥

लब्ध्वा केवलसंपदः शिवपद
सद ए त्वं श्रीपार्श्व बभर्थ,
जय जय जगतिपतेः ॥ १० ॥

सौख्यं बहुभिरवाप्यत तव—
नामत ए कामितदायक देव
जय जय जगतिपतेः ॥ ११ ॥

श्रीधर्मवर्द्धन पेहत तव मत—
रत ए त्वं प्रभुरेधि सदैव
जय जय जगतिपतेः ॥ १२ ॥

श्रीपार्श्वजिनवृहत्स्तवनं संस्कृतमयं तालमध्ये गेयं ।

(४) चतुरक्षर-पार्श्वस्तवनम्

(कन्या छन्द)

भो भो भव्याः कीर्त्तिस्तव्याः
नव्या नव्या, जैनी श्रव्या ॥ १ ॥
प्रत्यूषेनः, श्रीपार्श्वेनः
यो ज्ञानेन, प्रज्ञन्नेव ॥ २ ॥
ध्वस्तद्वंद्वं, सम्यक्संधं
त्यक्त्वाव्यध्वं, तं वंदध्वं ॥ ३ ॥
यः श्रीकाश्यां, वाणारस्यां
पुर्य्यामस्यां, स्वश्रेयस्यां ॥ ४ ॥
अश्वात्सेनः, श्रीभूपेन
ईतिस्तेन, स्तद्राज्येन ॥ ५ ॥
तत्स्त्रीमुख्या, वामाभिख्या
तस्याःकुक्ष्याः, पुत्रो न्युष्यान् ॥ ६ ॥
चेतोऽन्तर्वै, न्यस्तोऽखर्वैः
ग्लायद्गर्वै-र्देवैः सर्वैः ॥ ७ ॥
पुण्यप्राज्यं, भुक्त्वा राज्यं
तत्साम्राज्यं, ज्ञात्वा त्याज्यं ॥ ८ ॥
यः संसारं, त्यक्त्वा भारं
साध्वाचारं, चक्रे सारं ॥ ९ ॥

अन्यापोहं, ध्यात्वा सोऽहं
श्रेण्यारोहं, क्षिप्त्वा मोहं ॥ १० ॥
तच्चांचल्यं, हत्वा शल्यं
प्रापत्कल्यं, यः कैवल्यं ॥ ११ ॥
द्वे आयात-स्तत्सेवातः
श्रीर्विघातः, सातत्रातः ॥ १२ ॥
तद्व्याख्यानं, तस्य ध्यानं
तत्त्वज्ञानं, भूयात्ख्यानं ॥ १३ ॥
अन्याऽनीह, स्तद्भक्तीहः,
धर्मात्सीह-स्तं स्तौतीह ॥ १४ ॥

इति श्री चतुरक्षरायांप्रतिष्ठायांजातौ कन्यानाम छंदोवृहत्स्तवनं

(५) पार्श्वलघुस्तवनम्

(द्रुतविलम्बितछन्दः)

प्रवरपार्श्वजिनेश्वर पत्कजे,
भयहरे भविभावुकदे भजे ।
य इमके न कदापि नरस्त्यजे—
त्तमिह सद्रमणीवरमासजेत् ॥ १ ॥
उदितमेतदहः सफलं नशं,
सफलतां च नयामि तथा दृशं ।
जिनप दर्शनतो भव एष मे—
सफल एव गुणाः सफलाः समे ॥ २ ॥

जरिद्दधीति विलोक्य सना जिनं
    मम मनोऽत्र शिखीव घनाघनं ।
मिलति वै यदि वाञ्छितदायक—
    स्तमनुसृत्य न वष्टि सुखाय कः ॥ ३ ॥
लघुवया अपि यः सवयाः सतां
    निजगुणैः प्रबभूव तनूभृतां ।
अहियुगाय यकोज्ज्वलते ददे
    सुरपदं स जिनो भवतां मुदे ॥ ४ ॥
शमदमादिगुणैरति सुन्दर—
    स्तव जिनेश विराजति संवरः ।
परिभृतो मणिभिः सुयशश्चणः
    क्षितितले किमु भाति न रोहणः ॥ ५ ॥
तव यशश्च गुणान्निगमं पदं,
    वचनतो मनसस्तनुतो मुदः ।
वदति वेत्ति च विंदति वंदते,
    विधिरयं जिन यस्य स नन्दति ॥ ६ ॥
गुणचनो भुवि पार्श्वजिनेश्वरः
    सम इहाऽस्ति न येन परः सुरः ।
जित इनो महसा यशसा शशी
    नमति तं सततं मुनिधर्मसी ः ॥ ७ ॥

इति छेकानुप्रासपादान्त-द्रुतविलम्बित छन्दोमयं
पार्श्वजिनलघु-स्तवनम्

(६) श्रीपार्श्वलघुस्तवनम्

भजेऽश्वसेन-नन्दनं मुहुर्विधाय वन्दनं,
न रागिणो हि के नरा इने जिने सुहृग्धराः ॥१॥

सतां विपश्चितां मतां सदेव सुप्रसादतां,
विधेहि पार्श्वदेवते मयि क्रमाव्जयो रते ॥२॥

अभीष्ट युष्मया मया प्रवृत्य ते त्वदाज्ञया,
न दद्यते कृपोदयाद्विभो ममोद्यता अयाः ॥३॥

चरीकरीति ते यशः प्रसर्सरीति तद्यशः,
वरीवरीति ते पदं स वर्व्वरीति ते पदं ॥४॥

समस्तदुःखनाशनं विभो तवानुशासनं,
तदस्तु मे पुनर्धनं सुजैनधर्मवर्द्धनं ॥५॥

श्री ऋषभदेव स्तवनम्

जय वृषभ वृषभवृषविहितसेव, सेवकवाञ्छितफलफलद देव।
देवादेवार्चितपादपद्म, पद्माननपूरितभूरिपद्म ॥१॥

पद्माङ्गजमदगजगजविपक्ष, पक्षीकृतजगदुपकारलक्ष।
लक्षितसमलोकालोकभाव, भावितसूनृतसुगुणस्वभाव ॥२॥

भावारितमोभरतरणिरूप, रूपस्थित रूपातीत-रूप।
रूपित सद् यज्ञसुधर्मशील, शीलित शाश्वतशिवसौख्यलील ॥३॥

नवग्रही-न्यायपरीक्षा

सख्ये सत्यपि दहना द्रक्षति यन्नं विचक्षणा त्रयथा ।
ग्रहराजो ग्रहराजौ हिमांशुमंगारकादर्वाक् ॥१॥
शीताद्बिभ्यति सर्वे शीतार्त्तिर्भवति दुःसहा सततम् ।
अङ्गारकमुष्णांशुं तत्तिष्ठत्यन्तरा हिमरुक् ॥२॥
यत्रायाति कुपुत्रो जनयति वैरं हि जनकपुत्राणाम् ।
यद्विग्रहं गृहालौ सोऽयं सोमस्य सौम्यस्य ॥३॥
निवसति यद्यपि दैवाद् ज्ञः क्रूराक्रूरयो र्द्वयोर्मध्ये ।
सत्प्रकृतेरनुभावाद्यः सौम्यः सौम्य एव स्यात् ॥४॥
गुरुरधिकः सर्वगुणै र्गुरुसेवा नैव निःफला भवति ।
समया गुरुं वसन्तौ ग्रहावुभौ बुधकवी जातौ ॥५॥
तारुण्ये सति शुक्रे बोभूयन्तेऽसमे शुभा कामाः ।
त्तदभावे तदभावाच्छुक्रबलं को न कामयते ॥६॥
उच्चपदादिस्थितया पितुरुक्त्याचलति वैपरीताद्यः ।
सत्याभिधो बुधोक्त्या मन्दो मत्या पुनर्गत्या ॥७॥
पर्व्वण्यमृतं पेन्तु तुदति सुधांशुं विधुंतुदः साक्षात् ।
लब्ध्वास्वादो लोके शीर्षे छिन्नेऽपि न हि तिष्ठेत् ॥८॥
स्वस्वामिनं विनाऽपि हि निजशक्त्या कार्यसिद्धिमातनुते ।
किं नो कबन्धरूपः केतुः स्तुत्यो ग्रहश्रेणौ ॥९॥
श्रेष्ठां सुवर्णरचितां नवग्रहीं मुद्रिकां सुधर्ममतिः ।
प्रीत्या परीक्षमाणाः परीक्षते तत्त्वरत्नानि ॥१०॥

शान्तिनाथस्तवनम्

स्तुवन्तु तं जिनं सदोपकारतालताघनं,
स्वदेहदानतो यको ररक्ष रक्तलोचनम् ।
प्रसूदरस्थितेन सच्छुनंयुता प्रयुंजिता,
त्वरा निजाःप्रजाव्रजा रुजा विवर्जिताःकृताः १

अवाप्य येन जन्म चक्रवर्तिता प्रवर्तिता,
जगत्प्रभुत्वमाप्य कीर्त्तिनर्त्तिकी च नर्त्तिता ।
अभीष्टदा दिवस्तरुर्घटो मणि स्त्रयोऽप्यमी,
अनुत्वकां तकांस्तु सेवते सना सना भ्रमी ॥ २ ॥

स्वकीयसेवकाय यः सुखं ददाति सत्वरं,
ततो मुदा तमाचिरेयमाचिरेयमीश्वरं ।
नमो नमोऽस्तु ते त्वया समो न कोऽप्यहो ऋभुः
सुधर्मशीलने भवेभवेस्त्वमेव मे विभुः ॥ ३ ॥

—:❀:—

(७) श्रीगौडीपार्श्वनाथस्तवनम्

प्रणमति यः श्रीगौडीपार्श्वं, पद्मा तस्य न मुञ्चति पार्श्वं,
सुगुणजनं सुषमेव । कीर्तिस्फूर्तिरहो ईदृक्षाः यस्य—
जगति जागर्त्ति समक्षा; नंनंमीह तमेव ॥ १ ॥

सद्भक्त्या भक्तलोका जिनवरंभवतो यत्र यत्र स्मरन्ति,
साक्षात्तेषां समेषां वरमिह हि मुहुर्वाञ्छितं त्वं विधत्से ।
यात्रामायान्ति तत्तो कति कति च मया प्रत्ययाश्चात्र दृष्टा,
दृष्टा मे चित्तवृत्तिस्तत इत इत आः कामये नान्य देवम् ॥ २ ॥

(प्राकृतचित्राक्षराछन्दः)

विविह सुविहिलच्छीवल्लिसंताणमेहं,
सुगुणरयणगेहं पत्तसप्पुण्णरेहं ।
दलियदुरियदाहं लद्धसंसिद्धिलाहं,
जलहिमिव अगाहं वंदिमो पासनाहं ॥ ३ ॥

(मागधी)

शुलपुलनलवललुचिलविनिलमिदपलमानन्द,
सकलशुभाशुभशेविदपदशलशीलुहदंद ।
कलुनाशागल कुलकमलालिदिनेशलदेव,
चलनशलोजमहं पनमामि निलंतलमेव ॥ ४ ॥

(सौरसेनी)

दुहदटिनीदारनदरनपोय, दुरिदोहहुदासन-अदुलदोय ।
संपूरिदजगदीजंदुकाम पूरयमह वंछिद पाससामि ॥ ५ ॥

(पैसाची)

तुहताहतवानलनासघनं, सुहतानसुकोवितगीतगुनं ।
धरनीसफनीस नतं सततं, नम पासजिनं सुसुहं ततं ॥ ६ ॥

(चूलिकापैसाची)

मतनमतसरवनवनदहनपावकं,
सिद्धिसुभजुवतिसिंगारवरजावकं ।
जो हु तुह चलनजुकमंचते संततं
चकति सव्वे चना पास पनमंति ते ॥ ७ ॥

(अपभ्रंसिका)

तुहु राउल-राउलह सामि हुं राउल रंकह,
हिणसु दुहाइ सुहाइ कुणु सुमइ मा अवहीरह ।
पिक्खइ जुगु अजुग्गु ठाणु वरसंतउ किं घणु,
पत्तउ पइ जइ होसु दुहियसा तुह अवहीरणु ॥८॥

(समसंस्कृतं)

सज्जन्तु कामितविधाननिधानरूपं,
चित्ते धरामि तव नाम सुगेयरूपं ।
इच्छामि कान्त मिदमेव भवे भवेऽहं,
वामाङ्गजेह गुणगेह सुपूरितेहं ॥९॥
इम अरज अम्हारी तां हि पक्षीकुरु त्वं,
गिणइज हित कीधुं तस्य सत्यं गुरुत्वं ।
हिव मुझ सुख आपो, सा तवैवास्ति शोभा,
तुझ विण कहि स्वामी कस्य नो सन्ति लोभाः ॥१०॥
स्वभाषा संस्कृतीया तदनु प्रकृतिजा मागधी शौरसेनी,
पैशाची द्वयं गरुपाऽनुसृतविधिरपभ्रंसिकासूत्रवाक्यैः ।

षड्भिर्वाग्भी रसैर्वा स्तुति सुरसवती-निर्मिता पार्श्वभर्त्तुः,
श्रीधर्माद्वर्द्धनेनामितसुकृतवतां ह्लादसुस्वाददास्तात् ॥११॥

इतिश्रीगौडीपार्श्वनाथस्य स्तवनं षट्भाषा समसंस्कृतादि

चातुर्यमयं श्रेयः क्रियात्

(८) श्रीपार्श्वाधीशितु बृहत्स्तवनम्

सर्वश्रिया ते जिनराज राजतः,
श्लोकोऽति शुल्को गिरिराज-राजतः ।
अर्घप्रदानैरपि राजराजतः—
त्वत्कोऽतिरेको भुवि राजराजतः ॥१॥

स्मरणं कुरुते सदा यक—
स्तव तस्मै सुखवासदायकः ।
त्वमसि प्रभवे सदायकः
प्रणमन्नेश भवेत्सदायकः ॥२॥

शुभदृक् तव नाथ सेवकं,
नयते वाञ्छितमेव सेवकं ।
विबुधै र्विहितैकसेवकं,
त्वदृते वश्मि हि मानसे वकं ॥३॥

तव ये चरणेऽत्रनामिनः

स्युरहो ते तु कदापि नामिनः।
मणिमाप्य मुनीश नाकिनः,
किमु चित्रं हि भवन्ति नाकिनः ॥४॥
जिनपार्श्वसुनाम तावकं,
शरणं यः श्रयते न तावकं।
न पराभवितुं हि कोऽपि तं,
प्रभविष्णुः क्षितिपोऽपि कोपितं ॥५॥
परिहृत्य वसुस्त्रियौ वने,
निवसन्तीश यके हि यौवने।
हृदि यैर्निहितं न नाम ते,
विदधीरन्सहितं न नाम ते ॥ ६ ॥
गमितं नरजन्म देवनै—
र्हृदि मे तेन कदापि देव नैः।
तदहं परवश्यतां गतः,
परसेवा च मया कृतांगतः ॥ ७ ॥
शुभवता भवता सुकृता कृताः,
कतिचिदूर्ध्व जगत्प्रभुताङ्कुताः।
कतिचिदीश महोदयतायता,
मम विधौ विहिता लसता सता ॥ ८ ॥
मम सदा नतनिर्जरवारके,
त्वयि विभौ सति पापनिवारके।

इह जिनाधिपदुःषमवारके,
किल मया किमऽदायि न वारके ॥ ९ ॥
राका भवानिव भवानिह भात्यतोऽपि,
श्रेष्ठाः स्तुवन्ति शुभवन्तमहो भवन्तं ।
छिन्नार्त्तिराप्तभवता भवतापकर्त्री,
तस्मै सदाऽत्र भवते भवते नमः स्तात् ॥ १० ॥
देवोऽधिकः प्रभवतो भवतो न कोऽपि,
सेवाज जिष्णु-भवतो भवतोऽतिरम्या ।
सद्भक्तिरा भवति यै र्भवति प्रक्लृप्ता,
प्रोप्तातया शिवफला जिनधर्मसीता ॥ ११ ॥

श्रीनेमिस्तवनम्

जिगाय यः प्राज्यतरस्मराजीं,
तत्याज तूर्णं रमणीञ्च राजीम् ।
राजेव योगीन्द्रगणे व्यराजीद्—
देयात्स नेमि र्बहुसौख्यराजीः ॥ १ ॥
निजकुलकुलरत्नं वाञ्छितार्थद्रु रत्नं,
तमसि गगनरत्नं चित्कला रात्रिरत्नम् ।
नमितसकलदेवः क्रोधदावैकदेवः,
प्रभवतु सुमुदे वः संततं नेमिदेवः ॥ २ ॥

(६) श्रीपार्श्वस्तोत्रं

(द्विहसं शालिनी छंद)

तवेश नामतस्त्वरा दरा भवन्ति गत्वराः,
प्रसृत्वरा रवेकरास्ततो यथा तमो भराः ॥१॥

अधोत्कराश्च नश्वरा धरेश्वराद्धि तस्कराः,
स्थिराः स्युरिन्दराभराः स्वमन्दिरान्न हीत्वराः ॥२॥

प्रभोः स्तवेषु तत्परा नरा जगत्सु जित्वराः,
तकेषु तत्परा दरा दरातयोऽपि किंकराः ॥३॥

विधीयतां जिनेश्वराऽऽशु पार्श्वहक्कृपापराः,
प्रराायतां तरा त्वरा ममापि धर्म्मशीलराः ॥ ४ ॥

—o—

पञ्चतीर्थ्याः पंचजिन स्तोत्रम्

(प्रमाणिकाछंदः)

———

योऽचीचलद्दुश्च्यवनोरसि स्थितः
क्रमाङ्गुलीतः किल कर्णिकाचलं ।
स्वनाम चंचुश्च चरिक्रियादयं,
स श्रीमहावीरजिनो महोदयम् ॥ १ ॥

अर्कः शुभोदर्कमतर्कितश्रियं,

जैवातृकः प्राति जयं यशः श्रियम् ।
भौमो भिनत्तीतिमनीतिजां भियं,
बुधो ददातीह बुधाञ्चितां धियम् ॥ २ ॥
गुरु गुरुं ज्ञानगुणं विधत्ते,
काव्यः कलां काव्य कलाञ्च दत्ते ।
शनिः शुभं राहुरथं शिखीशं,
नुः सेवितु र्यच्छति वीरमीशम् ॥ ३ ॥
एवं सेवां दधतः पञ्चजिनानां स्तवान्प्रपञ्चयते ।
ते सौख्यानि लभन्ते भव्यश्रीधर्मशीलभृतः ॥ ४ ॥

अष्टमङ्गलानि

स्वस्तिकं चारुसिंहासनं कौस्तुभं,
कामकुम्भः सरावादिमंसंपुटं ।
मत्स्ययुगलं सुखस्यार्पणं दर्पणं,
नंदिकावर्त्तकं मङ्गलान्यष्ट वै ॥ १ ॥

चतुर्दशस्वप्नाः

श्वेतेभो वृषभो हरिश्च कमला स्यात्पुष्पमालाद्वयं,
पूर्णेन्दुश्च दिवाकरो ध्वजवरोऽभःपूर्णकुम्भःसरः ।

क्षीराब्धि र्द्विविधं विमानभवनं सद्रत्नराशिर्महान,
निर्धू मा ग्निरिमे चतुर्दश शुभाः स्वप्ना मुदे सन्तु वः॥१॥

गीर्वाणसिन्धावहिमंगिनो बहून,
घ्नन्तं समालोक्य रुषा गरुत्मान् ।
जघान गंगाम्बु-शुभप्रभावा,
चतुर्भुजीभूय बभूव तत्पतिः ॥१॥

शीघ्रमागच्छ भो शिष्य, मम पादौ निपीडय,
परिचर्याप्रसादेन, त्वं प्रवीणो भविष्यसि ॥१॥

---

(१०) श्रीपार्श्वनाथस्तोत्रम्

प्रसर्सर्त्ति पार्श्वेश विश्वे यशस्ते,
विशस्ते तु धन्याः पदाब्जस्पृशस्ते,
मदीयाऽपि लोला, स्तुतौ तेऽस्तु लोला,
बिदोलायमाना भ्रमादत्त मा भूत् ॥१॥

बुधास्ते सपर्य्यातया चारुतर्य्या,
भवाब्धि प्रतीर्य्या भजान्सद्विपुर्य्याः ।

अर्हं तेऽनुभावं समारुह्य नावं,
तितीर्षु र्विभावंश्रितस्त्वां मुदाऽवं ॥२॥

न केनाऽपि केनाऽपि भोगादिना मे,
वशायां रिरंसा निनंसोस्त्वदं ह्री ।
विनेता तवेशास्मि नेतासि मे त्वं,
रमां धर्मशीलप्रमां देहि मह्यं (?) ॥३॥
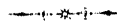
इति श्रीपार्श्वस्य लघुस्तोत्रमदः कोविदसदः प्रशस्यं ।

श्री बीकानेरमध्ये श्रीआदीश्वरमूर्ति स्तोत्रं

प्राज्यां चरीकर्त्ति सुखस्य पूर्तिं,
यका जरीहर्त्ति च दुष्टजूर्तिं ।
मद्भैश्च मोमूर्तिं सुभक्तमूर्तिं,
तां बीकपुर्य्यां नमतादिमूर्त्तिं ॥१॥
इष्टार्थपूर्त्तौ द्यु घटी वरीयसी,
जाड्यार्त्तिहानावपटीपटीयसी,
गिरीसमेयं प्रतिमा गरीयसी,
स्थिरा स्थिरावद् भवतात्स्थवीयसी ॥२॥
एनांजिनेनांगसमां शयद्वयं,

ललाट आधाय विधाय सञ्जयं ।
वयं च यूयं शुभधर्मशीला,
भजाम भव्या विलसामलीलाः ॥३॥

इति श्रीऋषभदेवस्तवनम्

समस्यामयं श्रीमहावीरस्तवनम्
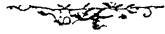
श्रीमद्वीर तथा प्रसीद सततं मे स्यादियं भावना,
संसारं तु वरं च जीवितमथो त्वद्दर्शनात्कं मनः ।
भोगान् सर्वकुटुम्बकं क्रमतया जानामि पक्वेतर—
"जम्बूवज्जलबिन्दुवज्जलजवज्जंबालवज्जालवत्" ॥१॥
स्थाने तज्जिननूयसे बुधजनैस्त्वं दुष्टकष्टापहो,
भ्रान्त्या भुक्तविषं त्वगाधमुदकं शत्रूच्छ्रितं शस्त्रकम् ।
दावाग्निः प्रबलो महाँश्च निगडस्त्वन्नामतः स्यात्क्रमा—
ज्जम्बूवज्जलबिन्दुवज्जलजवज्जंबालवज्जालवत् ॥२॥
सोऽपि त्वां प्रणनामयः शिवमते श्रीशैवराजो मुनि—
र्येनामी लवणाम्बुधिप्रभृतयो दृष्टा हि सप्त क्रमात् ।
क्षीरोदोदधिभृद्घृतोदकइराभृच्चेक्षवाः स्वादुवः,
अम्भोधिर्जलधिः पयोधिरुदधिर्वारांनिधिर्वारिधिः ॥३॥
ये त्वां श्रीजिन संश्रयन्ति हि जनास्ते स्युर्जिनाख्याधरा—
स्तद्युक्तं जलपर्यया इव विभा प्राप्ताऽधिरित्यक्षरं ।

पयायास्युरुदन्वता बुधजनः सगृह्यमाणा अमी,
अम्भोधिर्जलधिः पयोधिरुदधिर्वारांनिधिर्वारिधिः ॥४॥

जिनं भजंतामिति झल्लरीयं, प्रवक्ति लोकानिव वाद्यमाना ।
बृहद्ध्वनेरर्थत एव ठस्य, ठंठंठठंठंठठठंठठंठः॥५॥

दानं तपः शीलमशेषपुण्यं, ज्ञानञ्च विज्ञानमपीह भावः ।
त्वच्छासनेनेश विना कृतंतत्, ठंठंठठंठंठठठंठठंठः ॥६॥

जिनवचनमिदं तेऽनन्तकृत्वोऽधिकारे,
प्रययुरणुनिगोदं ज्येष्ठपञ्चेन्द्रियाश्च ।
युगपदिह विपद्य स्यात्कदाचिन्न चित्रं,
मशकगलकमध्ये हस्तियूथं प्रविष्टम् ॥७॥

मन इदमगुरूपं न्यायसिद्धं मदीयं,
मदमदनमतंगा यान्ति तन्मध्यदेशं ।
अहमिह किमु कुर्य्या देव साक्षादजय्यं.
मशकगलकमध्ये हस्तियूथं प्रविष्टम् ॥८॥

नवनं नमनं महनं वचनं, कुरुते कुरुते कुरुते कुरुते ।
तव यः स यशः शिव मां च सुखं, लभते लभते लभते लभते ॥९॥

दीव्यद्दीधिति दिक् चतुष्कसदृशंभामण्डलंपृष्ठतः
कृत्वाऽऽसीनमहो चतुर्मुखविधुश्रेष्ठाऽऽस्य नंतुं त्वकां ।
आयातः स्मयदा विमानसहितौ श्रीपुष्पदन्तौ तदा,
चन्द्राः पञ्च तथैव पञ्च रवयो दृष्टा जनै भूतले ॥१०॥

पुण्या ते प्रकृतिः प्रभो परसुरो बाढं मदाढ्यं सदा,
सद्द्रव्योऽपि निराश्रयोऽसि मदनानीकंपरिघ्नन् स्फुटं ।

इष्टं मृष्टतरं च वर्णनमथो प्रस्तूयते ते क्रमाद्—
गंगावद्गजगण्डवद् गगनवद्गांगेयवद्गेयवन् ॥११॥

(कलशः)

इत्थं वांञ्छितदानदैवततरुर्यः शासनाधीश्वरः ।
श्रीवीरः शिवतातिराततयशाः श्रीधर्मतो वर्द्धनैः,
नूतो नूतन नूतन कृतिमयः काव्यैसमस्यामयै—
र्ये ध्यायेयुरिमं जिनं जगतितेस्यु र्जन्तवः कन्तवः ॥१२॥

व्यस्त-समस्त मध्योत्तर प्रश्नमयं काव्यम्

के पत्यौ सति भूषणोत्सवधराः ?, श्रेष्ठास्तु के प्राणिषु ?
सर्वत्रादरतां लभेत भुवि कः ? के वन्दिनां स्युर्गृहाः ?
का का भाग्यवतां भवत्प्रतिपदं ? के कांदशीकांगिनां ?
के धन्या निज संपदां विलसने ? "दानप्रकारादराः" ॥१॥
धान्याद्यर्थ उदूखले भवति का स्वार्च्या समेषां च का ?
कार्या नम्रजनै र्गुरौ लसति का शोभा च राज्ये तथा ?
सप्तास्यस्तरणे रथं वहति कः ? सर्व्वसहा का स्मृता ?
कुग्रामे वसतां सतां भवति का ? "सुज्ञान नीवीक्षितिः" ॥२॥

रामे १८ऽर्था

त्वं संबोधय कामकेशवविधी-शानश्रियःस्वं मम,
दातृणां च हरौ सदाऽत्र भवताच्छीतापतौ सुन्दरि !

किं धातुत्रयमत्र् कीति वद्भो त्वं वन्हिबीजं व्रजं,
विश्रामेप्यविशांश्रिते मुहुरहो उक्तेऽपि किं मुह्यसे ॥१॥

—:o:—

गी वींणा तंत्रिकैका वरचिबुकसृता सूचिका सद्रसानां,
कूपानां वास्पनाशाश्रुतियुगलदृशामूर्द्धमूर्द्धा पुरश्रीः ।
तस्मिन् वासश्चकासज्जिन तव सुयशो गाङ्गवाहस्तदित्थं,
सूच्यग्रे कूपषट्कंतदुपरि नगरं तत्र गङ्गा प्रवाहः ॥१॥

तिलमिव लघु चित्तं स्नेहयुक् तत्प्रदेशे,
निवसति किल हीनाङ्गीव तृष्णातिकृष्णाः ।

मयमिव मदनं सा सूतमे[1]ऽभूत्तदित्थं,
तिलतुषतटकोणे कीटिकोष्ट्रं प्रसूता ॥२॥
तवेशाऽस्त्यम्यं धर्मशीलोपदेशो,
भवाब्धिं तितीर्षु र्भवेद्यो हितेन ।
रतिश्चारतिश्चातिनिन्दातिकृष्णा
समस्या समस्या समस्या समस्या ॥३॥
प्रवर्वर्त्ति[2] विश्वे जिनस्योपदेशो,
भवाब्धिं तितीर्षु र्भवेद्यो हितेन ।
रतिश्चारतिश्चातिनिन्दा तितृष्णा,
समस्या समस्या समस्या समस्या ॥४॥

—:o:—

१ जातं तदित्थं

अथ कतिचित्समस्यापदानि पूर्यन्ते

["दर्शे पूर्णकलं च पश्यति विधुं बन्ध्यासुतोऽन्धो दिवा" इति समस्यापदं श्रीमाल विहारीदासस्य पुरतो भट्टेन प्रदत्तं । यथा—]

प्राग् दुःकर्मवशान्मृतस्वजनकं कञ्चिद्गताक्षं शिशुं,
बन्ध्या काचिदपालयन् नृभिरतः प्राख्यायिबन्ध्यासुतः ।
मध्याह्ने शयितः स दर्शदिवसे पूर्णेन्दु मेक्षिष्ट तद्—
दर्शे पूर्णकलं च पश्यति विधुं बन्ध्यासुतोऽन्धो दिवा ॥१॥

["मंदान्दोलितकुण्डलस्तवकया तन्व्या विधूतं शिरः" इति समस्यापदं भट्टदत्तं पूर्य्यते]

भर्त्राऽऽवश्यककार्यतः प्रवसता प्रावाचि पत्न्याः पुरो,
मासान्ते त्वमहं च धामनि निजे द्रक्ष्याव इन्दुं नवं ।
रूच्ये तावदसङ्गते सखिजनै र्द्रष्टुं विधुं प्रोक्तया,
मन्दान्दोलितकुण्डलस्तवकया तन्व्या विधूतं शिरः ॥१॥

अन्यच्च—

साधूनां पुरतो मयाद्य विधिना धर्म्मः समाकर्णितः,
पत्युक्तं वचनं हिताच्च वनिता श्रुत्वाऽऽशुहृष्टा वरं ।
त्वं चेन्मां वनिते वदेरथ तदा गृह्णामि साधु व्रतं,

मन्दान्दोलितकुण्डलस्तवकया तन्व्या विधूतं शिरः ॥२॥

["प्रथमकवलमध्ये मक्षिकासन्निपातः" इति समस्यापदं उपाध्यायविनयविजयैर्दत्तं तत्पूरितं पण्डितधर्म्मसीकेन]

परिणय जनतायां याति यो भाग्यहीनः
स्वदनमनुजपङ्क्तौ रोषमाधाय तिष्ठेत् ।
यदि कथमपि भोक्तुं संस्थितस्तत्र जातः,
प्रथमकवलमध्ये मक्षिका सन्निपातः ॥१॥

उषसि कृपणनामाऽग्राहि जातं फलं तद्—
द्रुतमजनि जनैः स्वैराटिरुद्वेगता च ।
कथमपि यदि जग्धिः प्रापि तत्रापि जातः,
प्रथमकवलमध्ये मक्षिकासन्निपातः ॥२॥

क्वचिदपि समये स्याच्चित्तभङ्गो जनस्य
तदुपरि विफलाःस्यु र्मिष्टसत्कारवाचः ।
परिणमयति किं वै शेषतत्काल भुक्तीः,
प्रथमकवलमध्ये मक्षिकासन्निपातः ॥३॥

यदि हि जननलग्नं स्यादशुद्धं प्रमादात्,
तदुपरि न फलाय स्पष्टभावाधिकारः ।
किमुपरितनमुक्तिं प्रापयेत्सत्फलत्वं,
प्रथमकवलमध्ये मक्षिकासन्निपातः ॥४॥

———

["विद्युत्काकेन भक्षिता" इति समस्यापदं राजसारै र्दत्तं यं धर्मसिंहेन पूर्य्यते]

आयान्तं नायकं वीक्ष्य, श्यामया श्यामवाससा ।
रुद्धा सीमं तरु-किंवा, विद्युत्काकेन भक्षिता ॥ १ ॥

प्रेरितेन भृशं पत्या कस्तूरीचूर्ण मुष्टिना ।
छन्ना रदच्छदाभा किं विद्युत्काकेन भक्षिता ॥ २ ॥

प्रसह्य खण्डिके क्षिप्ता सद्युति द्धरणीसुता । (?)
रक्षसा रावणेनाहो, विद्युत्काकेन भक्षिता ॥ ३ ॥

आजग्मुषी छलं कर्त्तुं, श्रीजिनदत्तसूरिणा ।
कृष्णामत्रेणरुद्धोत विद्युत्काकेन भक्षिता ॥ ४ ॥

त्वत्खङ्गखण्डितस्यारेः पेशीराजन्यदाऽपतत् ।
मद्वर्णद्वेषिनीयं वै, विद्युत्काकेन भक्षिता ॥ ५ ॥

राजंस्त्वद्वैरिनारीभी रुदतीभिरधोमुखं ।
धौताञ्जनेन पत्राली, विद्युत्काकेन भक्षिता ॥ ६ ॥

(इति समस्याषट्कमहमदाबादमध्ये पूरितं)

—:०:—

["मत्सी रोदिति मक्षिका च हसति ध्यायन्ति वामभ्रुवः" इति व्यास-सतीदास-दत्तं समस्यापदं पूर्य्यते-]

श्रीकृष्णोऽम्बुधितश्चतुर्दशभृशं रत्नानि निर्वासय,
मासानेहसितत्रशक्तशफरः शुण्डाघटो निसृतः ।

स्वस्वभ्रंशवशादपूर्वलभनाद्धीतिप्रतीतेः क्रमा—
त्मत्सी रोदिति मक्षिका च हसति ध्यायन्ति वामभ्रुवः ।१।

राजन्नाजिविधौ त्वया निजरिपुर्व्यापादितस्तच्छिरो,
लात्वोड्डीय जगाम गृध्र उत तद्भ्रंष्टं च नद्यां बहत् ।
वार्ग्यट्टे किमिति स्त्रियस्तिमियुतं तन्निश्चकर्षुस्तदा,
मत्सी रोदिति मक्षिका च हसति ध्यायन्ति वामभ्रुवः ॥२॥

वृक्षे क्षौद्रमसंख्यमक्षिकमिहा रुक्षन् समीक्ष्य स्त्रियो,
द्रागुन्मूल्य सरिद्रयोद्रुममिलद् द्रुत्वामितद्रुं द्रुतं ।
पीताब्धिश्च पपौ जलं स्थलतया गामज्जनाच्चित्रतो,
मत्सी रोदिति मक्षिका च हसति ध्यायन्ति वामभ्रुवः ॥३॥

कासाराम्भसि वारिणा निजघटान् बभ्रुः पुरस्य स्त्रिय—
स्तावत्ताज्जलमध्यतो मदकलो हस्त्युन्ममज्ज स्फुटम् ।
भूस्यन्मीनमुदग्रववर्णमिमं ता वीक्ष्य चित्रं तदा,
मत्सी रोदिति मक्षिका च हसति ध्यायन्ति वामभ्रुवः ॥४॥
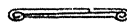
"मन्दोदरी किमुदरी बदरी किमेषा" इति समस्या पदं—

हृष्टाशया वरदशाननजल्पनौघै,

रंतस्तमाः कुवलकण्टकतां दधाना।

मायोपमात्रययुताऽपि क्रमाद्विभिन्ना,

मन्दोदरी किमुदरी बदरी किमेषा ॥ १ ॥

चारुश्रिया बहुविचारि सुगोत्रजेषु, सच्चारताचरणलक्षणवर्जितेषु।

प्रश्नोत्तरे इयमुभे धरते समस्या, धन्वस्थलेषु च खलेषु चको

विशेषः ॥ १ ॥

"यष्टिरीष्टे न वैणवी" इति समस्यापदं

नमनं गुणवानेव कुरुते न तु निर्गुणः।

गुणं विना नतिं कर्त्तुं, यष्टि रीष्टे न वैणवी ॥ १ ॥

प्रतिभैव प्रभुर्युक्तिखण्डने स्यान्मतिस्तुना।

क्षोदितुं हि कुशीवक्ष्मां, यष्टि रीष्टे न वैणवी ॥ २ ॥

"शीर्षाणां सैव वन्ध्या मम नवतिरभूल्लोचनानामशीतिः"

इति समस्या—

चक्रे श्रीपार्श्वमौलौ शृणु युवति मया सत्फणानां सहस्रं,
तद्वीक्ष्येन्द्रः स्तुवन्सन् खशशिनवशिरांस्युन्ममार्ज्ज स्ववस्त्रैः ।
शच्यप्या नच्चर्चखाक्ष्यं कवि धुमितदृशोऽर्हन्प्रतस्थेऽघशेषा,
शीर्षाणां सैव वन्ध्या मम नवतिरभूल्लोचनानामशीतिः ॥ १ ॥

———०———

("नवलक्ष्यो जनताक्षिभिर्विभीः" इति समस्यापदं श्रीजिनचन्द्रसूरिभट्टारकैः प्रदत्तं पञ्चकृत्वः पूरितम्)

सुषमाभिरनेकसूनृतैः प्रतिभाभिः सुनयश्च सद्गुणैः ।
जिनचन्द्रतुलां करोति यो नवलक्ष्यो जनताक्षिभिर्विभीः ।१।

प्रति घस्मयकैतवस्पृहाः करणान्यत्र च पञ्च तद्भिदे ।
प्रवणो यति यः परीक्ष्यते, न वलक्ष्यो जनताक्षिभिर्विभीः ।२।

उपकारपरोपकारिषु कनक कामिनिकाञ्च वष्टिनो ।
संभवाब्धिपराङ्मुखः पुमानवलक्ष्यो जनताक्षिभिर्विभीः॥३ ॥

कुरुते गुरुगर्हणाय को दृढमुष्टि त्वमलं दधाति यः ।
अभिधाप्य शुभात्र यस्य स नवलक्ष्यो जनताक्षिभिर्विभीः ।४।

गदतः स्वजनेष्ट नाशतो जरसा मृत्युत एव दैवतः ।
शतशो भयमेवमुद्वहन्नवलक्ष्यो जनताक्षिभिर्विभीः ॥ ५ ॥

"तिलतुषतटकोणे कीटिकोष्ट्रं प्रसूता" इति समस्यापदम्

सखि दृशि समपप्तत्कीटिकैकोपतारं
सुहृदवदत्पक्ष्मो दस्य निःसारयंस्ताम् ।
अभिमुखमयविम्वं वीक्ष्य दृक्स्थं तदाऽहो,
तिलतुषतटकोणे कीटिकोष्ट्रं प्रसूता ॥ १ ॥

"विवेकः शाब्दिकेष्वयम्" इति समस्यापदम्—

उत्तमोऽहं सदा वर्त्ते मध्यमस्त्वं प्रवर्त्तसे ।
परः सामान्य आवाभ्यां विवेकः शाब्दिकेष्वयम् ॥ १ ॥
समासः क्रियते तेषां येषामन्वययोग्यता ।
व्यासता बहुरूपाणां, विवेकः शाब्दिकेष्वयम् ॥ २ ॥
सार्व्वधातुकतानित्यं लकाराणां चतुष्टये ।
आर्द्धधातुकताषट्के, विवेकः शाब्दिकेष्वयम् ॥ ३ ॥

"हुताशनश्चन्दनपङ्कशीतलः"

ज्वलत्कषायोऽपि तवोपदेशा--
द्भवेज्जनः शान्तिरसैकरूपः ।
किं नामृतासारत ईश हि स्यात्,---
हुताशनश्चन्दनपङ्कशीतलः ॥ १ ॥

धर्मवर्द्धन ग्रन्थावली में प्रयुक्त देशी सूची

(अमरकुमार) सुरसुन्दरी रास का अन्त्य भाग

[ढाल १२—इण पर भाव भगति मन आणी]

धरम शील जिण साचो धार्यो, वलि नवकार संभार्यो जी।
सुरसुन्दरिए सर्व समार्यो, निज आतम उधार्यो जी,
एक सदा जिन धर्म अराधो ॥६॥

'शीलतरंगणी' ग्रन्थ नी साखे, ए रास अति लाखै जी।
धन जे शील रतन नै राखै; भगवंत इणपर भाखै जी ॥७॥

संवत सतरै वरस छत्तीसै, श्रावण पूनिम दीसै जी।
एह संबन्ध कह्यो सुजगीसै, सुणतां सहु मन हीसै जी ॥८॥

गणधर गोत्रो गच्छपति गाजै, जिनचंद्रसूरि विराजै जी।
श्री बेनातट पुर सुख साजै, चौपी करी हित काजै जी ॥९॥

साखा जिनभद्रसूरि सवाई, खरतर गच्छ वरदाई जी।
पाठक साधुकीरति पुण्याई, साधुसुन्दर उवझाई जी ॥१०॥

विमलकीरति वाचक वड़ नामी, विमलचन्द यश कामी जी।
वाचक विजयहर्ष अनुगामी, धर्मवर्द्धन धर्म ध्यानी जी ॥११॥

उपदेश हिंया में आणी, पुण्य करै जे प्राणी जी।
आवी लाछि मिलै आफाणी, साची सद्गुरु वाणी जी ॥१२॥

बारमी ढाल कही बहुरंगे, चौथे खंड सुचंगे जी।
जिन धर्मशील तणै शुभ संगे, आनंद लील उमंगे जी ॥१३॥

—00—